ॐ

विमल विनोद

स्वामी दयानन्द सरस्वतीका उपदेश

लेखक

M. Y. मोक्षाकर

तथा न भङ्गे च नहीं शरावे,

नवा अफीमे नहि कङ्कडे वा ॥

यथास्ति सत्यार्थ बुके अमीरा,

गप्पाकुले कापि नशा विचित्रा ॥

[मैथिल-श्री वैद्यनाथ मिश्र]

प्रकाशक

शेठ. जवाहरलाल जैनी सिकंदराबाद.

धी सीटी प्रीन्टिंग प्रेसमां

शा. चंदुलाल छगनलाले छाप्युं.

संवत् १९७१ मूल्य दस आना.

" निवेदन "

सज्जनो !   २५८

वर्त्तमान आर्य समाजकी वर्त मानिक शिक्षा पद्धति और उसके सिद्धान्तोंने जन समुदाय पर अपना कैसा जहरीला असर डाला है यह विद्वानोंसे छिपा हुआ नहीं है वर्त्तमान आर्यदलके आदि गुरु स्वामी दयानन्द सरस्वतीने वैदिक धर्मकी आड लेकर जो चाल चली है और अपने बनाए हुए सत्यार्थप्रकाशादि ग्रंथोंमें जिन कुत्सित शब्दोंसे मत मतांतरोंका खंडन करके संसारके भोले भाले जीवोंको अपने जालमें फँसाया है विद्वानोंसे वहभी अज्ञात नहीं उनके किए हुए आक्षेपोमें सभ्यता और सत्यताकी कितनी मात्रा है इससे भी विचारशील अज्ञात नहीं ! परंतु कितनेक ऐसे मनुष्य भी हैं जो कि इस विष मिश्रित मधुके वास्तविक स्वरूप को न समझ कर इसका उपयोग करने लगजाते हैं परिणाम यह होता है कि उन विचारोंको जीवनके असली उद्देश्यसे सदाके लिए हाथ धोलेने पड़ते हैं इस महती हानिसे वे लोग बच रहे या बचजावे इसी उद्देश्यसे मैंने इस ग्रंथको लिखा है किसीके दिलको आघात पहुंचानेका मेरा सर्वथा विचार नहीं.

इसके पढने वालोंको कुछ आनन्द भी मिले और वर्त्तमान आर्यसमाजकी शिक्षा तथा सिद्धान्त और उनके प्रतिवादसे भी बखुबी परिचित हो सके इस लिए मैंने इसकी रचना अधिकांश उपन्यासके ही ढबसे की है आशा है कि सज्जन इसका साद्यन्त अवलोकन करके मुझे अनुगृहीत करेंगे !

लेखक.

॥ ॐ ॥

॥ नमः श्रीवीतरागाय ॥

विमल विनोद

—अपर नाम—

" स्वामी दयानन्द सरस्वतीका उपदेश "

आधार- कला ! आज उदास सी क्यों मालूम देती हो ?

कला- आधार ! क्या कहूं कुछभी मत पूछो आज ही मुझे खबर मिली है कि " स्वामी दयानंद सरस्वतीजी " इस दुनिया से अपने किये हुए कर्मों के अनुसार कूच कर वहां गये हैं जहांसे कितनी एक मुद्दतके बाद फिर इस संसारमें (न जाने किसके घर किस अवलाकी कूखमें वास कर) अवतार लेकर अपने बनाये हुए अनेक ग्रंथोंका जीर्णोद्धार करेंगे ? आज विक्रम सं० १९४० का भादों महीना ऐसा खोटा चढ़ा है कि, खोटी ही खोटी खबरें मुझे मिलती हैं. एक तो "सरस्वती जी" की मृत्यु की बुरी खबर मिली, दूसरी खबर अभी ही ' नायन ' ने आकर सुनाई कि तेरी बहन " सत्यवाला " के पेटमें सख्त दर्द हो रहा है " सत्यवाला " का पति

(मेरा बहनोई) अलीगढ़ है, उसको बुलाने के लिये तार दिया है. तीसरा मुझे व्रत है, क्यों कि आज जन्माष्टमीका दिन है, इससे सारे दिनकी भूखी हूं, न जाने रात के बारह कब बजेंगे ? और कृष्णजीका जन्म कब होगा ? और सासुजी फलाहार कब आकर बनायेंगी ? और कब खाने को देंगी ? मैं तो "स्वामीजी" की कृपासे इन पाखंडोंको बहुत बुरा समझती हूं ! मगर क्या करूं ? मेरा पति अभी मेरे कहने में नहीं है ! वह तो अपनी अम्माका भगत बना हुआ है ! !

आचार- अरी कला ! तो, क्या उसे अपना भगत बनाना चाहती हो ? "स्वामीजी" की कृपासे कृष्णाष्टमी वगैरह को पाखंड मानती हो तो क्या स्वामीजीने कहीं यह कहा है कि, अपने पतिको अपना गुलाम बनानेका इरादा रखना ? बड़े दुखके कारण प्रगट किये ! क्या कहना है ? अगर "स्वामीजी" मर गये तो सारे जहानके लिये ही मर गये, न कि सिर्फ तेरे ही लिये ! रही 'सत्यवाला' के पेटके दर्दकी बात, सो तो उसके गर्भके दिन पूरे हो गये हैं, पहल पहलोठी का प्रसूत है, अगर पुत्र हुआ तब तो खुशीका पारावार भी न आवेगा ! वाहरी वाह ! उसेभी उदासीका कारण बता दिया ! वाहरी "सरस्वतीजी" की भगतन ! तुझे धन्य है ! हां यूं कहें तो ठीकभी है कि, भूख लग[illegible] र है ! सखि ! "स्वामीजी" की भगतन और [illegible] उनके क[illegible] -नपर चलनेवाली तो तुझे तबही समझूं[illegible] गी, जो उन

बनाये हुए "सत्यार्थ प्रकाश" के चतुर्थ समुल्लासकी लकीरोंकी फकीर बनेगी! वरना नाहक ही किसीको पाखंडी कहना ठीक नहीं! ले देख वो 'नायन' फिर आ रही है, मालूम देता है कि तेरी बहन "सत्यबाला" ने ही तुझे बुलवाया है! अच्छा यदि जाओ तो मेरा भी प्रणाम कहना और कहना कि, आधारकी शरत याद रखना! ले घड़ीमें भी सात बज गये.

कला- आधार! सच कह, तुझे मेरी ही कसम है, तूने सत्य-बालाके साथ क्या शरत की है?

आधार- जीजी कला! मैं सच कहती हूं, उससे मेरी यही शरत थी कि, तुझे पुत्र ही पैदा होगा! अगर नहो (याने लडकी हो) तो अपने हाथका बिछुआ (जो मैंने पहन रखा है) दे दूंगी!

कला- ले! बड़ी भारी शरत निकाली! (इतनेमें नायन आ पहुंची और कलासे बोली)

नायन- जीजी! चलो भी "सत्यबाला" तो दर्दके मारे रो रही है उनकी जिठानियां और काकीसासु वगैरह तो कृष्णजी का हिंडोला देखने गई हैं, शायद वे तो कहीं बारह बजे (कृष्णजीके जन्म होनेके बाद) आवेंगी. उनके पास सिर्फ इस वक्त मालतीको छोड़ आई हूं. अलीगढ़से तुम्हारे बहनोईजी का तार आगयाकि, मैं नहीं आ सकता! मेरे परीक्षा के तीन दिन और बाकी

रहते हैं. तुम जल्दी चलो, उन्होंने (सत्यवालाने) कहा है कि, साथ लेकर आना. मेरे प्राण जाते हैं!

कला- (नायनसे) चल बहन चल ! देखूं अंदर सासूजी आगई होंतो उनसे पूछकर और चद्दर लेकर अभी आती हूं (अंदर जाकर अपनी सासूसे) बूजी साहब ! बहन " सत्यवाला " के यहांसे मुझे बुलाने के लिये " जानकी नायन " आई है सो मैं जाती हूं.

सासू- (अपने बेटेको) अरे मुरलीधर! वे मुरलीधर!

मुरलीधर- (अपनी मातासे) क्या है ?

माता- बेटा ! तूं दुकान पर जायगा क्या ?

मुरलीधर- जी हां ! जाऊंगा तो सही मगर मींह बरसता है सिकरम गाड़ी जुतवाता हुं, क्योंकि मैं माधोदासकी बगीचीमें रासलीला देखने भी जाऊंगा.

माता- बस ! सिकरम गाड़ी जुतवानेकी जरूरत नहीं, क्या बापूजीकी आदतको नहीं जानता ? बिचारे घोड़ेको ऐसे मींह वर्षतेमें निकम्मा हैरान करेगा तो वो गुस्से होंगे. किरायेकी गाड़ी करवा मंगा उसमें बहू (कला) कोभी लेता जा " सत्यवाला " के सासरे छोडता जाइयो !

मुरलीधर- अच्छा ! यूंही सही, ला किरायेके लिये डेढ़ रुपया !

माता- अरे डेढ़ काहेका ? छै आने थोड़े होते हैं, छै नहीं तुं आठ आने ले दश आने ले इकट्ठाही डेढ़ रुपया ! ले ठहर मैं आठ आनेमें गाड़ी किराये मंगवा देती हूं.

मुरलीधर– (हंसकर प्यारके साथ) नहीं मैं आपही गाड़ी वालेसे ठहरा लुंगा, तूं मुझे डेढ रुपया देदे.

माता– तो यूं कहकि, मुझे खरचनेको चाहिये. निकम्मा! (अंदर से डेढ़ रुपया निकाल कर दे दिया, कलाको बग्घीमें बिठला लहुवाके कूचेमें सत्यवालाके सुसरालमें छोड़कर आप तो माधोदासकी बगीचीमें पहुंच गया. इधर कला अपनी बहनके पास पहुंची और रोती हुईको पुचकार कर बोली)

कला– बहन ! क्यूं ?

सत्यवाला– (पेटको दोनों हाथोंसे मरोडती हुई) बहन ! कुछ मत पूछ ! मेरेतो प्राण जाते हैं. हायरे ! क्या करू ? (अपना मस्तक कलाकी गोदमें डाल दिया)

कला– (सिरपर हाथ फेरती हुई) बहन ! घबड़ा मत जरा दिलको करड़ा कर मैं आगई हुं (पासमें बैठी मालतीसे) अरी और सब घरकी बइयर बानियां कहां गई हैं ?

मालती– कृष्णाष्टमीका हिंडोला देखने.

कला– बड़े अफसोसकी बात है ! कि यहतो इस तरह तड़फ रही है और उन्हें हिंडोले सूझते हैं.

मालती– अजी चुप करो, तुम देखती जाओ, जरा घरके आदमियोंको खबर पड़ेगी तो सबकोही कृष्ण हिंडोला देखनेका स्वाद आजावेगा !

कला– (हंसकर) तो हलदी और चुना तैयार कर रख !

मालती- अब तुम हँसीको तो रहने दो " सत्यबाला " का ख्याल करो.

कला- (नायनसे) अरी जानकी ! तूं फतेपुरीमें जा, और " मनभरी " (दाई) या उसकी बेटी " अनारो " को जलदी साथ लेकर आ ! ये ले इक्केके लिये पैसे. नायनभी जाकर दाईको ले आई, इधर इतनेमें " सत्यबाला " की सासु और जिठानियां वगैरहभी सब आगई रातका एक बजा उस वक्त सत्यबालाके पुत्र जन्मा.

दाई- (अंदरसे) मुबारक हो! बधाइयां आप सबको बधाइयां!

शारदाचंद्र- (अपने एक लड़केसे) अरे अभी पंडित चंदूलालजी हकीम मेरे पाससे उठकर गये हैं, अभी रस्तेमें ही जा रहे होंगे उन्हें बुला ला. (लड़का गया और ले आया, शारदाचंद्र हकीम चंदुलालजीसे) पंडीतजी ! आपके भानजा हुआ है, मुबारक !

पं० चंदूलाल- कब ? कितनी देर हुई ?

शारदाचंद्र- बस अभी एक बजकर २५ मिनटपर.

पं० चंदूलाल- इसकी जन्मकुंडली तो जरूर ही बनवाना, अच्छा मैंही बनाऊंगा जरा पंचांग मंगाना.

शारदाचंद्र-(हसकर) भाई साहब ! अभी तो हमारे यहां न किसीकी कुंडली, न घरमें पंचांग, न देखें और नाहीं कुंडली बनवावें, इन वाहियात बातोंसे क्या बनेगा ? मैंने तो आपको खुश खबरके ही लिये बुलायाथा.

पं० चंदूलाल- (जरा रोशमें आकर) सचमुचही तुम तो

जंगली हो! अरे सनातन धर्म तो छोड़ बैठे मगर लोक रिवाजभी नहीं करते! बड़ा अफसोस है!! आज सारे लोगोंने जन्माष्टमी मनाई मगर तुम्हारे घर तो मूंधे ही नगाड़े होंगे!

शारदाचंद्र– वाहजी वाह! जरा सोचो तो सही मूंधे नगाड़े जन्माष्टमी मनानेवालोंके हैं या कि हमारे! देखो! हमने तो खूब मजेसे दिनमें भी (कई वार) खाया और दुकानसे आकर भी रातको (दश बजे) खाकर चुके हैं! और कृष्णाष्टमीवाले विचारे सारा दिन तो भूखे मरे (या किसीने फलवार) और आधी रातको पत्थरोंके आगे मंदिरोंमें माथा फोड़ते फिरे! फिर कहीं खानेको और पीनेको मिला! तुम लोगोंने तो नकल की, मगर हमारे तो असल ही कृष्णका जन्म हुवा है.

पं० चंडुलाल– तो क्या इसका नाम कृष्णही रखोंगे? (पासमें खडी हुई "मालती" अपने वाप शारदाचंद्रसे) आपा-जी! मां कहती हैंकि कृष्ण अष्टमीकी रातको होनेसे कृष्ण ही नाम रखना है.)

शारदाचंद्र–(पुत्रीसे) चल! चल! वैठ चुपकी होके, हमारे घरमें आजतक किसीनेभी ऐसे चोट्टे जैसा नाम रखा है? जो हम रखे! नाम रखनेका दिन तो आने दे! हमतो इसका नाम "विश्वंभरनाथ" रखेंगे! (सुबह होतेही शारदाचंद्रके पोता हुआ यह सब साक संबंधिओं में मालूम होगया, कई लोग बधाई (मुबारक) देनेको

आये, उस वक्त कचहरीका वक्त होने पर पंडित सुन्दर सहाय पी. "जज्ज" ने भी सोचा कि, चलो शारदाचंद्रको मुबारक देता चलूं. आकर आवाज दी, तो नीचे बैठकमें १५-२० आदमी बैठे हुएथे, उनमें जज्ज साहब भी आकर बैठ गये.

जज्जसाहब- (शारदाचंद्रसे) आपको मुबारक हो!

शारदाचंद्र-आपकोभी!

जज्जसाहब-(पंडित हरगोविन्दजी "रामानुज पाठशाला" के अध्यापकसे) पंडितजी! आप पंचांग लिये बैठे हैं क्या जन्मकुंडली बनायेंगे?

पं० हरगोविन्द-अगर इनकी मनशा होगी तो बना दूंगा वरना इनका पोता खोटे नक्षत्रमें तो जन्मा ही है (शा० चं० जज्ज साहबसे) आपभी कुंडली वगैरह को सच्चा मानते हैं? आप तो "स्वामीजी" के वाक्यों पर बिके हुए हैं.

जज्जसाहब-ओ! अफसोस! हमारे "स्वामीजी" का तो अन्तकाल-मृत्यु होगया.

सबकेसब-(हैरतमे भरे हुए) ऐं! सच, ये कब? और कहां? हमने तो अभी अजमेरमें सुनेथे.

जज्जसाहब-हां साहेब अजमेरमें ही काल करगये.

शारदाचंद्र-बस साहब! यहां मर गयेंको याद करने आये हो या खुशी मनाने?

जज्जसाहब-भाई साहब! आपनेही "स्वामीजी" को याद

दिलाया; मगर अब कहो! पंडित हरगोविन्दजी तो आपके पोतेका जन्म खोटे नक्षत्रमें हुआ बतलाते हैं! सो क्या करोंगे ?

शारदाचंद्र–करेंगे क्या! कोई घरसे बाहर थोडेही फैंक देंगे! और नाहीं हमको इन बातोंका वहम है आप जानतेहीहैं हमारे यहां किसीकोभी किसी धर्मपर आस्था नहीं और नाहीं होगी! औरतोंको थोडासा भरम भूत होगया है! सो तो "स्वामीजी" के स्तोत्रसे हवन बवन कराकर हवन कुंडकी धूनीका धुआँ सूंघाकर हटा देवेंगे!

जज्जसाहब–आप तो हवन करनाभी नहीं मानते तो अब इस वक्त कैसे करोंगे ?

शारदाचंद्र–आपको क्या मालूम! जहां इतने नाटक तमाशे देखते हैं वहां यह नाटकभी एक दिन अपने घरमें करके देख लेवेंगे!

जज्जसाहब–अच्छा तो गोया आपने हवनको नाटक करना ही समझ रखा है! मगर वह कौनसा स्तोत्र और ऋचा हैं जिनसे हवन करोंगे ?

शारदाचंद्र– बस आजके बारहवें रोज बतावेंगे, जिस दिन नाम करण संस्कार करेंगे! इतनेमें "ब्रह्मानंद" भी रुकसत लेकर आ जावेगा. (बस सब उठकर चलदिये).

"विश्वंभरनाथके जन्मका बारह वां दिन"

(नामकरण के दिन शारदाचंद्रके बुलानेपर बिरादरीके सब लोग आकर जमा हो गये, जिनमें पंडित सुन्दर

सहाय पी. जज्जसाहव, पंडित हरगोविंद, " रामानुज संस्कृत पाठशाला " के कितनेक विद्यार्थी और माधोदेव शास्त्री वगैरहभी उपस्थित थे. लोगोंसे मकान एकदम भर गया! घरमें चारों तरफ खुशीयें मनाई जाने लगी, उधर औरतें गीत गाने लगी, और इधर हवन वगैरहका काम शुरू हुआ.

शारदाचंद्र- (ब्रह्मानन्दसे) वेटा ! संस्कार वगैरह काम सव तूंनेही करना, पंडितोंका काम तो मूर्खोंके घरोंमें होता है !

ब्रह्मानंद- (शारदाचंद्रसे) वहुत अच्छा! इसमें दो रुपयेकी! किफायत भी होगी !

शारदाचंद्र- तो अच्छा वेटा ! काम शुरू करो! मगर एक काम करना, मंत्र ऐसी होशयारीसे वोलना कि सुन सव पंडितोंके छक्के छूटें !

(इतना सुनतेही ब्रह्मानन्द हाथमें जल लेकर)

" आचमन मंत्र "

ॐ कपटानन्दाय नमः, ॐ सद्धर्मविरोधकाय नमः, ॐ व्यभिचारप्रचालितकराय नमः—

(आचमन करनेके वाद संकल्प हाथमें लेकर)

" संकल्प मंत्र "

ढॉ ! तत् असत् अद्येह फॉं नमः, गपोड़ानन्दाय नमः, सर्वधर्म विरोधकाय, अद्यधूर्त कल्पितसर्गे, गडवड

कल्पे, कपटानन्द मन्वन्तरे, महाकलियुगे, प्रथम चरणे, जंबू द्वीपे, भरत क्षेत्रे, अजमेर नगरे, वर्त्तमान नाम संवत्सरे, अमुकायने, अमुकऋतौ, अमुक मासे, कृष्णपक्षे, नरक तिथौ, कुबुधवार नक्षत्र योगकरणे, श्रीमद्धूर्त्तानिन्द कृत मिथ्यार्थप्रकाश प्रतिपादित फल प्राप्त्यर्थं आर्यगोत्रो, विधवा पुत्रो, ब्रह्मानन्द शर्माऽहं, सर्वधर्म शास्त्रस्य अति निन्दन रूप ऐश्वर्यस्य प्राप्ति कामनया मिथ्यानंद प्रसन्न हेतवे सर्व धर्मवर्णान् एकीकृत्य पूजनमहं करिष्ये. (यह पढ़कर संकल्प छोड़ा)

" आवाहन मंत्र "

भो ! अनादि मार्ग विध्वंसकम्, मूर्तिपूजनशास्त्रादि निवर्त्तकम्, वर्णशंकर गोत्र प्रवर्त्तकम्, विधवा विवाह कारकम् श्री श्री अनेक रंगभंगाचार्य, दंभानन्दं आवाहयामि, भोदंभानन्द ! इहागच्छ ! सुप्रतिष्ठ कुवरदो भव ! मम कुपूजां गृहाण भगवद्दंभानन्दाय नमः ॥ (इतना पढ़कर " ब्रह्मानन्द " षोडशोपचार पूजनके मंत्र पढने लगाकि इतनेमें जज्जसाहब शारदाचंद्रसे बोले)

जज्जसाहब–अजी शारदाचंद्रजी ! वाह ! ये कैसी वाहियात श्रुतियां उच्चारण करनी शुरू की हैं ? तुमको (इतने बुद्ध और दाना होने पर) जानबूज कर सैंकड़ो औरतों और आदमिओंके बीचमें ऐसा काम करवाते शरम नहीं आती ?

शारदाचंद्र–(जरा मूंह बनाकर) बस साहब मेरी मरजी,

मैं अपने घरका मालिक हुं ! जो मेरे दिलमें आयेगा सो करूंगा मेरे घर खुशीका दिन है, मुझे तो कहते हो कि शरम नहीं आती, मगर जब आप " स्वामीजी " के मंत्रों द्वारा एक एक लुगाईको भरी सभामें एक के बाद दूसरा, दूसरेके बाद तीसरा, तीसरेके बाद चौथा, चौथेके बाद पांचवां, पांचवेंके बाद छट्ठा (हँसी) हँ-हँ-हँ-हँ-हँ छट्ठेके बाद सातवां और सातवेंके बाद आ-ठवां, आ-ठवेंके बाद नौवां, नौवेंके बाद दशवां, बापरे बाप ! बलिहारी आपके "स्वामीजी" की ! बलिहारी आपको ! बेटा ! जज्ज बनगयेतो क्या होगया ? और बलिहारी उस अल्ला-माकी जनी औरतको ! जिसने "स्वामीजी" के असूलको पाला ! (ब्रह्मानन्दसे) बेटा ! चुप क्यों होगया ? तूं अपना काम करेजा !

" षोडशोपचारपूजनमंत्र "

ॐ कलयुगानन्दाय नमः (इत्यर्घं)
ॐ अद्भुतरंगाचार्याय नमः (पाद्यम्)
ॐ धर्मविध्वंसकाय नमः (आसनम्)
ॐ गप्पाष्टकाय नमः (स्नानम्)
ॐ व्यभिचारानन्दाय नमः (गंधम्)
ॐ सर्वधर्मनिन्दकाय नमः (अक्षतम्)
ॐ विधवानां एकादशपतिकराय नमः (पुष्पम्)
ॐ मूर्तिपूजननिषेधकराय नमः (धूपम्)
ॐ अधर्मपाखंडमतप्रकाशकाय नमः (दीपम्)

ॐ सर्वेपामेकभोजनकराय नमः (नैवेद्यम्)

ॐ मोक्षमार्गविध्वंसकाय नमः (आचमनम्)

ॐ अवतारनिषेधाय नमः (तांबूलम्)

ॐ गोचर्मविक्रयकराय नमः (पूगीफलम्)

ॐ शिल्पशास्त्रोपदेशिने नमः (वस्त्रम्)

ॐ घोरकलिप्रवर्त्तकाय नमः (द्रव्यदक्षिणां)

ॐ महाघोरधूर्त्तमार्गप्रचलितकराय, सनातनधर्मविनिन्द-काय, सत्य आत्मज्ञान निवर्त्तकाय, वेदब्राह्मणसंत विमुखाय, अधर्म स्वरूपाय, आत्मोपदेशे मतिमंदाय विरोध कृतानां बहुरंगाचार्यगपोडानंदाय नमः ।

यह प्रार्थना करके ध्यानम्—

वैदिक धर्म्म निवार पाप पाखंड बढ़ाया ।
निन्दे मूर्त्ति पुराण अर्थ पलटो मन भायो ॥
विधवा व्याह कराय पुरातन रीत नसाई ।
वर्ण भेद विनिवार नमस्ते करी कराई ॥
तेली चमार कोरी सुई लघु जातन आरज करो ।
धर्म्म कर्म्म मति पुण्यकी मूल काढि अघ संचरो ।

"विनियोग."

ॐ अस्य श्रीगपोड मंत्रस्य बहुरंगाचार्य ऋषि अविलक्षणं छंदः।कलियुगानन्द देवता, विरोध बीजम्, अशुचिशक्तिः; धूर्त्तता कीलकम्, श्री कलियुगानंद प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः । (इतना करके)

"अंग न्यास"

वहु रंगाचार्य ऋषये नमः (शिरसि)
विलक्षण छंदसे नमः (मुखे)
कलियुगानन्द देवतायै नमः (हृदि)
विरोध वीजाय नमः (गुह्ये)
अशुचि शक्तये नमः (पादयोः)

(इसके वाद करन्यास)—

ॐ वहुरंगाचार्य ऋषिः अंगुष्ठाभ्यां नमः
ॐ अविलक्षणं छंदः तर्जनीभ्यां नमः
ॐ कलियुगानंद देवता मध्यमाभ्यां नमः
ॐ विरोध वीजम् अनामिकाभ्यां नमः
ॐ अशुचि शक्तिः कनिष्ठिकाभ्यां नमः
ॐ धूर्त्तता कीलकम् करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः

(इसके वाद हृदयादि न्यास)—

ॐ अनेक रंगाचार्य हृदयाय नमः
ॐ अविलक्षण छंदसे शिरसे स्वाहा
ॐ कलयुगानन्दाय शिखायै वषट्
ॐ विरोध वीजाय कवचाय हुं
ॐ अशुचि शक्तये नेत्राभ्यां वौषट्
ॐ धूर्त्तता कीलकम् अस्त्राय फट्

"अथ गपोड गायत्री"

ॐ वहुरंगाचार्य, घोर मत प्रवर्त्त काय, सनातनधर्म ध्वं-

सकाय श्राद्ध तर्पण निषेध कराय, वर्णाश्रमधर्म विनाश-
काय, मूर्ति पुराणादिविनिंदकाय, वेदार्थ विपरीत क-
राय नमस्ते प्रचलिताय, धीमही तन्नो गप्पा प्रचोद-
यात् ॥ इति

(इसको पढकर " ब्रह्मानंद " चुपही हुआथाकि, जज्ज
साहबके सिवाय सबके सब तालियां बजाकर हँसने लगे !
औरतोंमें बैठी हुई " ब्रह्मानन्द " की साली (सत्यबा-
लाकी बहन) " कला " इस कार्रवाईको देखकर एक
दम शिरसे पैरतक जलभुन गई ! और उठकर जहां
' सत्यबाला ' बैठीथी वहां गई और उससे बोली;)

कला-बहन ! येले मैं तो अपने सासरे जाती हूं (जाती हुई
लोकोंके बीचमें बैठे हुए जज्जसाहबसे) फूफाजी ! अफ-
सोस सद अफसोस ! हरदुलानत है आपके यहां बैठने
पर ! देखो हायरे ! कैसे गजबकी बात हैं जो ऐसे
" परमहंस महात्मा सरस्वतीजी " को हजारों गालियां
दे रहे हैं (लोगोकी तर्फ इशारा करके) अपने घरमें
चाहे कितनाही बुराभला कहलो ! तुम्हारी बहादुरी तो
तब है जो मैदान में बोलो !

ब्रह्मानंद-(कलासे) आज हम लडकेके होनेकी खुशीमें
आनंद मना रहे हैं अगर तुझे गालियां प्रतीत होती हैं
तो भी वे तुझे नहीं, तेरे धनीको नहीं ! तेरी माको नहीं,
तेरे बापको नहीं, तेरे कुटुंबमेंसे किसीको नहीं.
मगर जब मैं तेरी बहनको व्याहने आया था उस वक्त

तुने मेरे साथ कुछभी कसर बाकी रखी थी? जबतो न मेरे बापको छोडा न मेरी मांको, न मेरी बहनको, क्यों नहो! आपतो गालियां देते मुंहमें मिठास आतीथी आज हमसे सुनकर जहर चढती है!

जा! जा! किसीपर ऐसान नहीं करती! जब तेरे घर कोई खुशीका दिन आवे अर्थात् तुं अपना किसी अन्य पुरुषके साथ नियोग करे तो हमें मत बुलाना! मुबारक रहो तुझे तेरे "सरस्वतीजी" (समाजके लाल बुझक्कड) या ये तेरे जज्ज साहब फूफाजी.

शारदाचंद्र-(ब्रह्मानंदसे झिडककर) बसरे! बस! औरतोंसे बोलना अपनी बेहूदगी है (कलासे) जा बेटी! जा! कहारके छोकरेको साथ लेजा. (कहारके लडकेको) अरे बुद्धु! जा इसके साथ इसे सासरे छोड आ.

ब्रह्मानन्द-(अपने बापसे) आपाजी! अब क्या करूं?

शारदाचंद्र- बेटा! अब हवन करो!

ब्रह्मानन्द- जी बहुत अच्छा!

(इतना कहकर हवनकी सामग्री पासमें रख कर कुंडमें अग्नि जला लगा हवन करने)

"हवनके मंत्र"

ॐ बहुरंगाचार्याय स्वाहा.

ॐ विरोधाचार्याय स्वाहा.

ॐ कलियुगाचार्याय स्वाहा.

ॐ कपटाचार्याय स्वाहा.

ॐ धूर्त्तानन्दाय स्वाहा.

ॐ लंपटेश्वराय स्वाहा.

ॐ सत्यधर्म विनाशकाय स्वाहा.

ॐ अधर्म मत प्रवर्त्तकाय स्वाहा.

ॐ आर्य वृन्द भ्रष्टकराय स्वाहा.

ॐ धूर्त्त शिरोमणये पाखंडाचार्याय स्वाहा.

शारदाचंद्र– ले बेटा ! इन मंत्रोंसे अग्निमें आहुति तो छोडदी अब थालीको जमीनमें रखदे और पूर्व दिशाके क्रमसें आगेके मंत्रोंसे भाग रख.

ब्रह्मानन्द– आपाजी ! यह क्या ? अभी गप्पा वैश्वदेव तो बाकी है !

शारदाचन्द्र– वाह बेटा ! अच्छे मौके पर याद करवाया मैंतो भूलही गया था अच्छा अब करलो ! (शारदाचन्द्रके कहनेसे रसोईमेसे भोजन लाकर ब्रह्मानन्द गप्पा वैश्वदेव करने लगा.)

मंत्र—

ॐ बहु भक्षकाय धूर्त्त शिरोमणये स्वाहा.

ॐ सन्यासधर्म विपरीताय कपटा नन्दाय स्वाहा.

ॐ घोरकालि प्रवर्त्तकाय, वर्णशंकर प्रवर्त्तकाय स्वाहा.

ॐ पुराणनिषेधकराय मल्ल विद्योपदेशिने स्वाहा.

ॐ परस्पर विरोध वृद्धिकराय स्वाहा.

ॐ वेदार्थ विपरीतकराय शुद्धार्थ विध्वंसकराय स्वाहा.

ॐ पाखंडमत प्रचलित कराय प्रजा नाशकाय स्वाहा.

ॐ कपटे श्वराय सहद्यावा पृथ्वीभ्यां स्वाहा.

ॐ सर्व वर्णेषु नमस्ते प्रचार कराय अशुद्धि कृते स्वाहा.

ब्रह्मानन्द-(गप्पा वैश्वदेव करके अपने वापसे) आपाजी ! मैंतो थक गया !

शारदाचंन्द्र- बेटा ! अवतो थोडासा काम बाकी है ले बोल बोल जल्दी !

ब्रह्मानन्द-अच्छा करलेताहुं इस गल पडे ढोलको बजाये विना छुटकारा होना मुशकिल है.

मंत्र-

ॐ सानुगाय धूर्त्त शिरोमणये नमः

ॐ सानुगाय बाचाला नंदाय नमः

ॐ सानुगाय विरोधाचार्याय नमः

ॐ सानुगाय मिथ्यादंभ प्रवर्त्तकाय नमः

ॐ धर्म ध्वंसिने नमः

ॐ अधर्मरताय नमः

ॐ मुष्टंडाचार्याय नमः

ॐ स्वयंवर विधवा विवाह कराय नमः

ॐ एकादश पतिकराय सर्व धर्म निंदाकराय नमः

ॐ वेद बाह्य प्रवर्त्तकाय नमः

ॐ गपोडा नन्दाय नमः

ॐ कपटेश्वराय नमः अवतार साकार निषेधकराय नमः

सनातनधर्म विपरीताय नमः पापरूपाय नमः

ॐ आत्मोपदेशे मति मंदाय नमः

ॐ वेद ब्राह्मण विमुखाय नमः

ॐ कलेरवताराय नमः

ॐ धर्मभ्रष्टानंदाय नमः ।

शारदाचन्द्र- बेटा ! इन भागोंको अतिथिको जिमाना या अग्निमें छोडदेना चाहिये तुंतो अग्निमें डाल और बोल स्वाहा—

बेटा ! बोल तेरे लडकेका क्या नाम रखें ?

ब्रह्मानन्द- मुझसे क्या पूछते हो ? पूछो मेरी मांसे या लडके कीमां से.

शारदाचंद्र- वाह वे ! भूतनीके ! राज हमारे घरमें मरदोंका है या औरतोंका ? अब तो स्वामीजी मरगये ये हवा तुझे कहांसे लगी ? सच बता ! अलीगढमें कभी किसी समाजी की सोबतती नहीं की ?

ब्रह्मानन्द- आपाजी ! सोबतती क्या करनीथी समाजियोंका नामभी अच्छा नहीं लगता !

शारदाचंद्र-फिर तूंने कैसे कहाकि औरतोंकी सलाह लो ! औरतें तो कलको कहेंगी कि हमारा दिल दूसरा खसम करनेंको चाहता है !

ब्रह्मानंद- नहीं नहीं ऐसा कभी नहीं कह सकती ! क्यों कि

कहींभी उत्तम कुलमें स्त्री दूसरा पति नहीं कर सकती और नाहीं किसी शास्त्रमें करना कहा है.

शारदाचंद्र- अबे घनचक्कर ! नहीं कर सकती के खसम ! तुझे क्या खबर कि किसी शास्त्रमें नहीं लिखा ! ला तो स्वामीजीका बनाया हुआ " सत्यार्थ प्रकाश " तूं दूसरेको रोता है ! " स्वामीजी " एकको दश खसम करनेकी आज्ञा वेदोंमें बतलाते हैं ! अगर (तूं) जिन्दा रहा तो देख लेना आजसे उन्नीस वर्षके बाद विक्रम सं० १९५९ में मुरादाबादका रहनेवाला " जगन्नाथ-दास " एक " दयानन्द मतकी सूची " बनावेगा उ-समें मेरे मुंहसे निकलती हुई इस 'कविता' को पढना !

*"हाय हाय कैसा नियोगका अनुचित कर्म चलाया।
"उत्तम कुलकी अबलाओंको व्यभिचारिणी ब-
नाया ॥ ५३ ॥

"दश पुरुषोंसे करे नियोग इतनेसे सबर न आया।
"लिखे वार दो तीन और सन्यासी नहीं सरमाया।५४।

(दयानंद मतसूची पृष्ठ ९)

ब्रह्मानन्द-आपाजी साहब ! यह क्या कहा कि, विक्रम सं० १९५९ में दयानन्द मतकी सूची बनेगी आपको क्या भविष्यत कालका ज्ञान है ? फरज करो कि, ज्ञानभी हो

*ऋग्वेद भाष्यभूमिका पृष्ठ २१४

तो क्या ऐसा अद्भुत ज्ञान कि वो ऐसी ही कविता बना-
वेगा ? मुझे तो सुनकर हैरत पैदा होती है !

शारदाचंद्र- वाहवे उल्लू ! वेटेका वापभी वनगया मगर वेव-
कूफही रहा ! अवे ! इतनातो सोचकि ज्योतिषी लोग
१०० वर्षके वाद फलां वक्त और फलां समयमें इतने
घंटे और इतने मिनिट पर सूर्य ग्रहण लगेगा और उस
दिन फलाना वार और फलानी तारीख होगी तो क्या
मैं (आजसे उन्नीसवें वर्षमें यह वात होगी) नहीं वतला
सकता हूं ? वस मैंने तुझसे कहादिया, एक "दयानन्दसूची"
तो क्या मगर मुरादावाद निवासी जगन्नाथ साहव,
पंडित ज्वालाप्रसाद साहव और मेरठके ईश्वरीप्रसाद
साहव आदिकी ऐसी कलम चलेगी कि दयानन्दकी
सूचीतो सूचीही रहेगी मगर दयानन्दके समाजकी कूची
हो जायगी.

ब्रह्मानन्द- वे वेधडक अपनी कलमको निडर पने इस न्याय-
वान् गवर्मेन्ट सरकारके राज्यमें कैसे चलावेंगे ?

शारदाचंद्र-वहभी मैं तुझे अभी कह देता मगर यह काम
फुरसतका है इस वक्त मुजे एक जरूरी काम है इसवक्त
तो मैं तुझे उन ट्रेक्टोंका सिर्फ नाम वतला देताहूं ले लिख !

ब्रह्मानन्द-(जज्जसाहवसे) आपने सुना, आपाजी क्या कहते है ?

जज्जसाहव- भाई ! तुम्हारे घर आयें हैं जो मरजीमें आवे
सुनालो ! तुम लोगोके यहां लडकी देना- तुमसे नाता
रिस्ता करना-वडी मूर्खताका काम है ।

शारदाचंद्र-(हंसकर) अगर आपकी मनशा हो तो नाता वापस ले लीजीये ! बिगड़ा क्या ? फायदाही हुआ है " सत्यबाला " को आपने बारह (१२) वर्षकी उमरमें दियाथा हमने तीन साल पालकर पन्द्रह (१५) वर्षकी बना दी है अगर इतने परभी कुछ कसर हो तो उसके जो लडका पैदा हुआ है वह सूद (व्याज) में ले लो ! और आगेके वास्ते जैसे जैनी लोग किसी वस्तुका त्याग करने वक्त " वोसिरे " " वोसिरे " कहते हैं वैसे आपभी कह दो ! और हमको लडकियोंका घाटा नहीं है, ब्रह्मानन्द जैसा लडका कारा नहीं रहेगा. (अन्दर औरतोंमें बैठी हुई ब्रह्मानंदकी मा झिडककर अपने पति शारदाचन्द्रसे)

यमुना- बस करो ! तुम्हें क्या हो गया है ? नाहककी झक झक बक बक लगाई है कुएमें पड़े स्वामीजी और भाडकी भट्ठीमें पड़ा स्वामीजीका कहना ! यहां हमें तो देरी होती है हम बिरादरीमें भाजी बांटनेके लिये जानेको बैठी हैं तुम्हारे " स्वामीजी " के कजीयेने बहू की बहन "कला" को तो रुसा दीया ! अब क्या बहूके फूफाजी (जज्जसाहब) कोभी रुसाकर भेजनेका इरादा है ? (ब्रह्मानन्दसे) चुपका होके बैठ !

ब्रह्मानन्द-अरी जरा ठहर ! मुझे उन ट्रेक्टोंका नाम तो लिख लेने दे ! नहीं तो फिर भूल जाऊंगा (अपने बापसे) हां ! लो आपाजी पहले मुझे आप उन ट्रेक्टोंका नाम लिखा दो !

शारदाचंद्र-(अपनी वहू यानी ब्रह्मानंदकी मांसे) क्या कहा? "तुम्हें क्या हो गया है?" जरा फिरतो कहियो! (उठकर) "वक बक झक झक लगाई है" कहते शरम नहीं आती? "कला" रुस गई तो रुस जाने दो और जज्जसाहव रुस जायेंगे तो बलासें! (ब्रह्मानंदसे) ले बेटा! लिख.

ब्रह्मानन्द-हां आपाजी! लिखाओ!

शारदाचंद्र- "विधवा विवाह निराकरण."
"अनार्यसमाज रहस्य."
"देवसभा स्वर्गमें दयानंदियोंकी किस्मतका फैसला."
"शंभुनाथका गप्प कुठार जगन्नाथका वज्र प्रहार."
"दयानन्दके मतका खातमा." "शगूफा दयानंद."
"दयानन्दकी चंद रंगतें." "दयानन्द मत मर्दन."
"दयानन्द मत परीक्षा." "दयानन्द पराजय."
"दयानन्दकी वुद्धि." (सोचता हुआ)
औ-र-याद आजा-आजा-आजा-आजा-हां आगया!
"दयानन्दके मूल सिद्धांतकी हानी."
"दयानन्द चरित्र." "दयानन्द लीला."
"दयानन्द स्तोत्र." "दयानन्दमत सूची."
"दयानन्दमत खंडन"-(इतने कहकर चुप होगये.)

ब्रह्मानन्द- क्यों आपाजी! और के बस?

शारदाचंद्र-अबे बसके बच्चे! अभीतो इतने बाकी हैं जो लिखते लिखते थक जायगा! अभी आल्हाराम सागर

सन्यासीजीके अंकोंका नाम तो लियाही नहीं है !

ब्रह्मानन्द- अच्छा वो फिर लिखाना हाल और कोई एक दो लिखा दो वरना सबको पान बीड़ा देता हूं !

शारदाचंद्र-अ-रे-तो-ले-लि-ख-ले एक और नाम-"बावा आदम" (यहसुन सब हंस पडे) अरे ले और याद आगये "दयानन्द हृदय." "नियोग खंडन."
" सत्यार्थप्रकाश समीक्षा "
"धर्म सन्ताप." "स्वामी दयानन्द." "धर्मदिवाकर"
"भजन वीसा." "दयानन्दमत दर्पण." "दयानंदकी माया"
"दयानन्द नाटक." और " दयानन्दका कच्चा चिठ्ठा."
(थोडीसी देर बाद) भला गिनतो सही कितने हुए ?

ब्रह्मानन्द-अच्छा लो गिनता हूं जरा ध्यानसे सुनना ! एक एक एक चार पांच और नौ नौ नौ चार तेरां तेरां और आठ इकीस-इकीस और चार पच्चीस और उनत्तीस.
आपाजी ! उनत्तीस हुए !

शारदाचंद्र-अबे ! चोट्टीके एक कमती क्यों रखा ? लिख जलदीसे 'ढोलकी पोल' करदे पूरे तीस. ले दे अब सबको पान बीडा ! (ब्रह्मानन्दने सबको पान बीडा दिया)

पं० गिरजाशंकर-(शारदाचन्द्रसे) आज आपको भांग चढरही मालूम देती है !

शारदाचंद्र-(हंसकर) जबही आप उल्लू मालूम देते हैं.

जज्जसाहब–(पं० जीसे) गिरजाशंकरजी ! आपने असल कह दी.

शारदाचंद्र–अजी जज्ज साहब ! आपको तो नशा करना दोनों कानुनोंसे मना है, फिर क्यों गिरजाके साथ शंकर बनते हो ?

पं० गिरजाशंकर–(स्वयम्) भाई पोता होनेकी खुशीमें इसवक्त इन्हें कुछ भान नहीं है ! (प्रगट) अच्छा भाई ! अच्छा ! शारदाचन्द्रजी ! पोतेका नाम क्या रक्खा सो तो बीचमें ही रहा !

शारदाचन्द्र–अरे ! रे ! रे ! मुद्देकी बात तो बीचमें ही रह गई. सुनो साहब ! मैं इस अपने पोतेका नाम रखता हुं, इसका नाम " विश्वंभरनाथ "

जजसाहब–अच्छा ! मैंतो जाता हूं ! नमस्ते !

शारदाचंन्द्र–(हाथसे पकडकर) चाहे न मस्तो चाहे मस्तो विना रोटी खाये तो नहीं जाने देंगे ! (बाकीके सब-लोगोंसे) मुझपर आप लोगोंने बडाही अनुग्रह किया कि जो मेरे घरको पावन किया आपको जो मैंने तकलीफ दी उस बातकी क्षमा चाहता हूं ! पधारियेगा !

सबकेसब– वाहजी वाह ! आफरीन है आपकी लायकीपर, यह दिन आपको परमात्मा जलदी जलदी दिखलावे !

शारदाचन्द्र– ना साहब ! ना ! मेरे घरकी औरतें और बहुएँ दयानन्दके असुलों पर नहीं चलती जो इकठेही दो दो गर्भ धारण करे ! या दश सालमें दश बच्चे पैदाकरे !

अगर आप लोगोंको यह दिन जलदी जलदी देखनेकी मनशा होवे तो दो चार मुरगियां लाकर पाल लूं! उनमेंसे जब कोई अंडा देवे तबही आपको बुला लूं!

जज्जसाहब–हां! तो क्या आपने दयानन्दियोंकी औरतें मुरगियां समझ रखी हैं? अगर ऐसी समझ है तो आपके घरमेंभी लगेगी! क्या "सत्यवाला" को मुरगीके पेटसे निकली हुई न मानोगे?

शारदाचन्द्र–हां! हां! वेशक आपकी औरत (सत्यवालाकी भूआ) भी मुरगी होगी तो इसकोभी मुरगी ही समज लेवें गे!

(पंडित चन्दूलाल जज्जसाहवसे–जानेदोजी! क्या वाहियात वातें ले वैठे चुप करो! सवके सव खानेके लिये वैठे. खाना खाचुके वाद अपने अपने घरको चले गये.)

(एकादिन जवकि विश्वंभरनाथकी उमर दो वर्ष और तीन महीनेकी हुई तव हरभजन घरमें रहनेवाला एक पूरबिया नौकर दुकानपर आकर शारदाचंद्रसे.

हरभजन– अजी! वब्बन (विश्वंभरनाथ) की मांको कुछ हो गया घर जलदी चलो!

(शारदाचंद्र यह वात सुनतेही नौकरके साथ हो लिया. रस्तेमें आते हुए एक दूसरा आदमी मिला और वोला कि–वब्बनकी मां तो मरगई!)

शारदाचंद्र– (आदमीसे) अरे यह क्या हुआ? अच्छा तू जलदीसे सीधा इमलीके महल्लेमें जा और उसके पीअर

वालोंको खवर कर कि " सत्यवाला " काल कर गई !
(शारदाचंद्रके कहनेसे आदमी तो उधर गया. आप घरमें
आकर देखे तो औरतें रो पीट रही हैं.)

मालती- (वब्बनको गोदमें लिये हुए वाहर आकर रोती हुई
शारदाचन्द्रसे) आपाजी ! छोटी भोजाई मरगई !
(सत्यवालाके मरनेकी खवर सुनकर सव सगे संवंधी
अपनी अपनी दुकानें वंद करके आगये-सत्यवालाके
पीअरके सवलोग, जज्जसाहव, और वब्बनका मामा-
युगलकिशोर वकील-वगैरहभी आगये.)

युगलकिशोर- (शारदाचंद्रसे) देखिये साहव ! मैं एक
वात आपसे वडी अधीनगीके साथ कहता हूं.

शारदाचंद्र- कहिये साहव !

युगलकिशोर- मरने वाली तो मरगई मगर अव रहा उसका
अग्निसंस्कार, सो तो मैं वेदविहित विधिके साथ करूंगा!
आपके यहां तो उसका न कुछ होगा नाहीं तुम करोंगे.
विचारीका अंतिम संस्कार तो अच्छी तरहसे करदो !

जयंतिसहाय- (शारदाचंद्रका छोटाभाई) सुनिये साहव !
हम अपने घरका जो रिवाज है वही करेंगे, यहांसे ले जा-
कर सिवा लकड़ियोंमें फूकनेके हम दूसरा कूछ भी नहीं
करेगें, और नाहीं पीछे किसीका कुछ किया है. आपने
यदि वेद वृद्का कुछ झगडा डाला तो अच्छा न होगा !
किसी किसी वातमें आपके निसवत हम लोग सनातनि-
योंको कुछ अच्छा समझते हैं. भला आप ही कहिये कि,

आधुनिक " स्वामीजी " की कपोल कल्पित लीलाको मंजूर करके कौन मुरदेकी मिट्टी खराव करवावे ? वस आप चुपही कर रहियेगा !

युगलकिशोर– वेदके असली रहस्यको तो हमारे स्वामीजीने ही प्रगट किया है. तुम उसे कपोल कल्पित और लीला वतलाते हो ! (फिर कुछ अफसोस सा जाहिर करके) भाई ! इसमें तुम्हारे अधीन कुछ नहीं है आज कलका जमाना ही ऐसा है कि जो वुरी वुरी वातें और खोटे खोटे रिवाज हैं वे तो लोगोंको अच्छे लगते हैं और जो अच्छी वातें हैं वे वुरी लगती हैं !

जयंतीसहाय– शावाश ! शावाश ! आपके वच्चे जियें ! आपके कहनेसे साफ जाहिर होगया कि, दुनियामें जितने मत मतांतर हैं वे सवही अच्छे थे मगर स्वामीजीको वुरे लगे तवही तो उन्होंने सवको वुरे वुरे कहकर उनकी निंदाके जल कुंडमें गोते लगाये ! और अपना जो वुरा मत था उसको अच्छा सिद्ध करनेके लिये " सत्यार्थ प्रकाश " (कहते तो मुझे संकोच होता है) "असत्यार्थ प्रकाश " वनानेकी मुफ्तमें ही तकलीफ उठाई ! सच है आपका कहना यह जमाने काही रंग है ! जो सच्चे धर्मका लोपन करनेवाले देवपूजा जैसे पवित्र मारगका उत्थापन करनेवाले अनेक धूर्त्तानंद पैदा होगये हैं !

युगलकिशोर– खवरदार ! उस महर्षिके वारेमें ऐसे वैसे वेमरजादाके वाक्य वोलने अच्छे नहीं, मैं कोई पं० सुंद-

रसहाय जज्ज नहीं हूं जो वरदास्त कर लूंगा ! मुझे सब कुछ मालूम हो गया है जो कि विश्वंभरनाथके नाम करण संस्कार करनेके वक्त आप लोगोंने किया मैं उसवक्त हाजिर न था वरना देखते क्या होता ?

शारदाचंद्र– (जरा तेज होकर) अबे ! ओ ! जुगलेके बुगले ! मैं जानता हूं कि तेरे पास विकालतका चोगा है ! सो भाई माफ कर ! अगर चुप करके मुरदनी में साथ चलना हो तो चल वरना अपने घरका रस्ता पकड़ !

ब्रह्मानन्द– भला आपाजी साहब ! इनके " स्वामीजी " ने अग्निसंस्कारकी क्या विधि बतलाई है सो तो सुन लो !

शारदाचंद्र– अरे भाई ! " जाना नहीं जिस गाम, क्या लेना उसका नाम " अगर तुझे जाननेकी इच्छा है तो मैं तुझे स्वस्थ चित्त होनेपर " स्वामीजी " का माया जाल अच्छी तरहसे बता दूंगा (फिर) अरे बतलाऊंगाही नहीं लेकिन कर दिखलाऊंगा !

जज्जसाहब– (युगलकिशोरसे) भाई ! अपनेको इस वक्त चुप करनाही ठीक है !

ब्रह्मानन्द– (अपने चाचा जयंतिसहाय और वंशगोपालसे) चाचाजी ! मैं नहीं चाहता कि इन लोगोंसे इस बातके लिये विरोध किया जावे, यदि इनके " स्वामीजी " के कहे मुताविक अग्निसंस्कार कर देवें तो अपना इसमें

क्या नुकसान है ? उसे जलाना तो यूंभी है और यूंभी औरोंके लिये अपने हाथमें है इसको तो जैसे ये कहें वैसे ही करो !

वंशगोपाल– क्या आपाजी करने देवेंगे ?

जयंतिसहाय– पूछ देखो !

वंशगोपाल– आपाजी ! जरा इधर आइएगा ! (एकांतमें सबने मिलकर सलाह की और बाहर आकर)

शारदाचंद्र– (अपने बडे लडके वंशगोपालसे) अरे वंशू ! बब्बनके मामाको नाराज करना ठीक नहीं इस लिये जैसे ये कहते हैं वैसेही कर लो !

बिरादरीके लोग– (शारदाचंद्रकी बात सुनकर) अजी ! क्या लडकोंके कहनेमें लगकर आपकीभी अकल मारी गई है. आपके घरसे ऐसा काम शुरू होना ठीक नहीं है.

शारदाचंद्र– (लोगोंसे) अरे भाई क्या करें यह मौकाभी ऐसा है कोई हमेशाके लिये थोडेही है अपनेको अबकी दफा यही समझ लेना चाहिये कि हमारे घर मौतही नहीं हुई ! अगर यह पीअरमें मर जाती तो फिर ये लोग (स्वामीजीकी लकीरके फकीर) क्या अपनी रीति करनी छोड देते ? कदापि नहीं !

सबलोग– अच्छा तो आपकी मरजी !

शारदाचंद्र– (युगलकिशोरसे) वकील साहब ! लीजिये जो आपकी मरजीमें आवे करियेगा ! कहिये ! क्या क्या मंगवाया जावे ? क्यों कि हम तो सिर्फ इतना ही

जानते हैं कि, मुरदेको यहांसे उठाया और मसाणोंमें ले गये लकडियोंमें रखा और फूंक दिया! बस न्हाये धोये और काम हो लिया!

युगलकिशोर– (दिलमें बहनके मरनेकी गमगीनी के होनेपरभी अपने धर्मके असूलका पालन होते देख चेहरे पर मुसकराहत लाते हुए जयंतिसहायसे) भाई साहब! अन्दर औरतोंसे कहो कि उसको न्हुलाकर और चंदन वगैरह सुगंधीवाली चीजोंका लेप करके नवीन वस्त्र पहरा दो!

जयंतीसहाय– (औरतोंको कहकर सब काम ठीक करवाके युगलकिशोरसे) क्यों साहब अब क्या करे?

युगलकिशोर– (संस्कार विधि हाथमें लेकर पृष्ठ २३८ निकालकर स्वयं ही १९ पंक्ति पढ़कर) भाई! जितना उसके शरीरका भार हो उतना घृत लाओ!

ब्रह्मानन्द– (युगलकिशोरसे) इतना बड़ा तराजू आपके घर हो तो मंगवा लो! या इसकी लहाशको उठाकर बाजारमें किसीके यहांसे बड़े कांटेपर चढवाकर वजन करवा लो! (जो लोग उदास हुए हुए धीरे धीरे रो रहेथे वह ब्रह्मानंदकी बात सुनकर मुसकरा उठे)

युगलकिशोर– (ब्रह्मानंदकी तरफ हाथ करके) तुम कैसे बेअकल आदमी हो? कहीं बाजारमें मुरदे तुलवाते भी कभी किसीको देखा है?

ब्रह्मानन्द– जनाब वकील साहब! मैं तो बेअकल हूं मगर

अब आपकी अक्लको देखता हूं कि "जितना इसके शरीरका भार हो उतना घी." बिना लहाशका वजन किये कैसे ले आओगे ?

शारदाचंद्र– (ब्रह्मानन्दसे) बेटा ! चुप कर ! अपने बोलनेका काम नहीं, घी मंगा देना अपना काम है, जगन्नाथकी दुकानसे २८ रुपये मनका वडा वढ़िया पक्का दो मन घी किशोरीके विवाहके वास्ते आया पड़ा है सो निकालकर इनके सामने रख दे ! ये लहाशके भार जितना ले लेवें बाकी हमारा पड़ा रहेगा !

युगलकिशोर– वस दो मन काफ़ी है इसकी लहाश एक मन दश सेरसे ज्यादा नहीं है तोलनेकी कोई जरूरत नहीं !

ब्रह्मानन्द– हां–जी ! कोई जरूरत नहीं ! अपने घरके टके थोडेही खर्च हुए हैं फरज करो हुएभी हों या खर्च करभी दो तोभी हम नहीं मानेंगे ! यातो आप अपने "स्वामीजी" के लेखपर चलो ! या हमारे पीछे चलो ! वस सीधी बात तो यह है ये लो घी और इसकी लहाशके वरावर तोल लो, अगर नहीं तोल सकते तो पूछो अपने "स्वामीजी" के भगतोंसे कि भाई ! कैसे तोले ?

युगलकिशोर– (अपने मनमें) ये लोक वड़े हठीले और हमारे धर्मके द्वेषी हैं (जज्जसाहवसे) क्यों साहव ! अव क्या करना चाहिये ?

अरे भाई ! करना क्या है सहीस को भेजता हूं

और मिठ्ठन दालवालेके यहांसे बड़ा कांटा मंगवा लेता हूं (सहीससे) अरे भइयन !

सहीस–हाँ साहिब !

जज्जसाहब– जरा जलदीसे जाना और दो पांडी (मजूर) करके मिठ्ठन दाल वालेके यहांसे काँटा ले आ ! एक मन, दो पंसेरियां और छोटे बट्टेभी लेते आना !

सहीस– हजूर ! घोडवा केर लगाम केहिका थभै जाई !

जज्जसाहब– अबे उल्लू ! गाडीही को दौडा लेजा जलदी. (सहीस अपने मनहीं मनमें जज्जसाहबको–उल्लु तोहार बाप ! सरउ गालीके बिना मुंह ते बतियातै नहीं जब द्याखौ तबहीं उल्लू उल्लू ! सार ! एक बिरिया सबुर कीन, दुई बिरिया सबुर कीन, कब तईं सबुर करी. इत्यादि बडबडाता हुआ मिठ्ठन दालवालेकी दुकान पर जाकर मिठ्ठन लालसे)

लालाजी ! पंडित सुन्दर सहाय जज्जसाहिबने बड़ा काँटा और बाँट (बट्टे) त्वालैकी खातिर मंगावति हैं सो जलदी दइ देवौ.

मिठ्ठनलाल– अरे बड़े कांटेमें क्या तोलेंगे ?

सहीस– भैया ! महिंका नाहीं पता; मुदौ महिंका ऐस लागत है कि पंडित शारदाचंद्र केरि पुतहू मरिगईल है वहिका तौलैकी खातिर मँगाइल है !

मिठ्ठनलाल– चल सुसरे ! (झिडक कर) अबे पागल कभी किसीने मुरदाभी तोला है ? अच्छा हमें क्या ले ये पडा है कांटा और बट्टे उठा लेजा !

(सहीसने बट्टे तो उठाकर गाड़ीमें रख लिये और कांटा पांडि (मजूर) के सिर पर उठवा लाया और आकर दरवाजे पर लगा दिया (जैसे लकड़ियां तोलने वालोंके टाल (वखार) में लगा हुआ होता है) मुरदनी में साथ जानेको आये हुए सवासौ डेढसौ आदमी कांटे को देखकर ब्रह्मानन्दसे पूछने लगे)

एकआदमी– क्यों भई ! इसमें क्या तुलेगा ?

ब्रह्मानन्द– इसमें ! इसमें तुलेगी " स्वामीजी " की बुद्धि !

लोगोंमेंसे एक– नहीं नहीं सच कहो !

ब्रह्मानन्द– लो ! क्या मैं झूठ कहता हूं ? " स्वामीजी " ने लिखा है कि मुरदेके बराबर घी तोलना !

लोग– अरे भाई ! वकील और जजकी तो अकल मारी गई क्या तुम्हारीभी अकल ठिकाने नहीं है ? तुमहीं चार पांच सेर घी के लिये क्यों हँसी कराते हो ?

ब्रह्मानन्द– (युगलकिशोरसे) अच्छा भाई हुआ ! देखली आपकी और आपके " स्वामीजी " की बुद्धि ! ये पड़ा है घी ! उठाओ ! जलदी देर मत करो ! (चिढता हुआ दूसरी तर्फ मूं करके) अपनी बहनकी लहाश तोलते शरम नहीं आती ! ! (युगलकिशोर स्मशानमें काम आने वाली सब सामग्री (स्वामीजी के कथनानुसार) बनाकर सबके साथ चल पड़े और चार मनुष्योंने 'सत्यबाला' की अरथी को उठाया और " स्वामीजीका नाम सत्य है " की ध्वनी उच्चारण करते हुए स्मशानमें

पहुंचे और वहां 'संस्कार विधि' के पृष्ठ २३९ के अनुसार सब काम कराकर अग्निमें प्रवेश कराने बाद नीचे लिखे मंत्रोंकी भरमारसे बिगडी हुई हवाकी शुद्धि करने लगे.

युगलकिशोर—ॐ अग्नये स्वाहा
ॐ सोमाय स्वाहा
ॐ लोकाय स्वाहा
ॐ अनुमतये स्वाहा
ॐ स्वर्गलोकाय स्वाहा

शारदाचंद्र— (युगलकिशोरके आगेसे हवनकी वस्तुवाला थाल अपनी तरफ खींचकर युगलकिशोरसे) अरे भाई ! तुम्हारा मंत्र किसीकी समझमें तो आता है और किसीकी नहीं ! सुनो ! जैसे मैं बोलूं वैसे बोलकर आहुती दो.

ॐ सत्रह (१७) वर्षकी उमरमें मर गई स्वाहा.
ॐ दो वर्ष तीन महीनेका पुत्र छोडकर मर गई स्वाहा.
ॐ घरके लोगोंको रुलाती मर गई स्वाहा.
ॐ ब्रह्मानन्दको रंडवाकर मर गई स्वाहा.
ॐ स्वामीजीकी बुद्धिको दिखा गई स्वाहा.
ॐ युगलकिशोरकी बहन मर गई स्वाहा.
ॐ स्वाहा स्वाहा स्वाहा (सब वस्तु चितामें एकदम फेंककर) सब लोगोंकी तर्फ हाथ करके)
ॐ स्नान करके घर चलो भाई स्वाहा—आ—

युगलकिशोर– (बडे क्रोध पूर्वक लाल आंखे करके दांत पीसता हुआ शारदाचंद्रकी तर्फ हाथ करके) अफसोस बुड्ढे तो हुए मगर अक्कल न जाने किधर चली गई !

शारदाचंद्र– बुड्ढा हुआ हूं जबी तो कहता हूं कि ये लाल लाल आंखे किसी और को दिखाना ! अरे ! शरम नहीं आती ! हमारे घरमेंसे तो जवान स्त्री मर जावे और तुम लोग स्वाहा स्वाहा करके खिल्ली मचाओ ! बस ! ज्यादा तीन पांच लगाई तो याद रखना !

जज्जसाहब– (युगलकिशोरसे धीरेसे) भाई ! इस वक्त अपने पांच सात आदमी हैं और ये डेढसौ (१५०) सामने खड़े नजर आते हैं इस लिए इस वक्त स्वाहाको बंद कर वह जो दूसरे थालमें बची हुई सामग्री है उस सब सामग्रीको एकदम अग्निमें डाल दो और चुप करके चले चलो वरना नतीजा अच्छा न निकलेगा !

युगलकिशोर– (जज्जसाहबसे) ये लोग अपने धर्मके बड़े ही द्वेषी हैं !

जज्जसाहब– भाई अपनी अपनी समझ है. (अनुमान एक घंटेके बाद दाहक्रिया हो चुकी सब लोग स्नान करके शारदाचंद्रके घरपर आगये और जो कुछ मुरदनीसे आकर करनेका रिवाज था वह करके लोग अपने अपने घरोंको चले गये. जब चार दिन हो चुके (चौथेके दिन) तब बिरादरीके तथा औरभी अन्य लोगोंके आने पर शोक दूर करके शारदाचंद्र अपनी दुकानपर गये

और ब्रह्मानंदभी अपनी ड्यूटी (नौकरी) पर चला गया. अलीगढमें उसको अस्सी (८०) रुपये मासिक मिलते थे मगर जातेही पांच रुपयेकी तरकी होकर उसको इटारसी जाना पड़ा. इटारसीमें ब्रह्मानंदका दो आर्यसमाजियोंके साथ मेल हो गया उनके सहवाससे ब्रह्मानंदने "स्वामीजी" के बनाये हुए सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेद भाष्यभूमिका और यजुर्वेद भाष्य आदि ग्रंथोंको देखा उनके देखनेसे वह बड़े विचारमें पड़ गया मनमें कहने लगा कि यह तो अजबही पंथ है! एक दिन अपने मित्रोंसे कहने लगा कि–भाई साहब! जैसा "स्वामीजी" लिखते हैं वैसा आर्यसमाजी लोग अमल क्यों नहीं करते?

तब वे "ब्रह्मानन्द" को कहने लगेकि भाई! हमसे तो जितना होता है उतना अमल करते हैं, हां! आप पूरा पूरा अमल करनेकी हिम्मत रखते होतो बड़ी अच्छी बात है लेकिन कई बातें ऐसी हैं जो "स्वामीजी" ने न जाने क्या सोचकर लिखडाली हैं कि, जिनके पढनेसे हमतो नहीं मगर हमारे मातापिता और घरकी औरतें बड़ीही चिढती हैं! इस लिये हमसे उन बातोंका पूरापूरा पालन नहीं हो सकता! ब्रह्मानन्द अपने मित्रोंका यह कहना सुनकर बोला कि–अजी साहब! यह क्या? "स्वामीजी" के लेखको पूरापूरा अमलमें लाना कोई मुशकिलकी बात है? यह आपके दिलकी कमजोरी है

दूसरा कुछ नहीं ! मैं तो मानूगा तो "स्वामीजी" की कुल बातोंको मानूंगा चाहे दुनियां कुछही क्यों न कहती फिरो ! यह क्या एक बात मानी और एक न मानी ! देखिये ! मेरी औरत मर गई है, अब मेरे लिये मेरे माता पिता दूसरी शादीके लिये विचार कर रहे हैं, सो मैंने आज एक पत्र लिख दिया है कि, अगर आप लोग मेरे विवाहके लिये आग्रह करते हो तो साफ बात है कि, मैं सामाजिक रीती (स्वामी दयानंदजीके सिद्धांत) के मुताबिक ही विवाह करूंगा इत्यादि देखूं क्या उत्तर आता है !

समाजी मित्र- अब आप पक्के आर्यसमाजी हो चुके मगर देखना अब फिर न जाना !

ब्रह्मानन्द- कभी नहीं ! मगर हां जो समाजी लोग केवल दिखाने मात्रही "स्वामीजी" का पल्ला पकड़े हुए सिद्ध होते नजर आवेंगे तो मेरा अख्त्यार है, मैं स्वतंत्र विचारका आदमी हूं न्यायपर चलना मेरा काम है. (इधर घरपर)

शारदाचंद्र- (अपने वड़े पुत्र जयंतिसहाय और वंशगोपालसे) क्यों भाई ! क्या सलाह है ? "ब्रह्मानंद" का विवाह दूसरा करनाही होगा !

जयंतिसहाय- वेशक करनाही है. अम्माजीभी दो चार दफा कह चुकी कि, तुम "ब्रह्मानंद" के लिये क्यों

किसी लड़कीकी तलाश नहीं करते ? मगर ये उसका पत्र पढ़ लो आजही आया है.

शारदाचंद्र- क्या लिखा है ? सुनाओ !

जयंतिसहाय- (पत्र जेबसे निकालकर) " मेरे पिताजी
" साहब ! नमस्ते ! मैंने सुना है कि, आप मेरे विवा-
" हके लिये तरद्दत कर रहे हैं सो मेरी मनशा बिलकुल
" नहीं है. अगर आप या माताजी या भाईसाहब वगैरह
" मेरे विवाहके लिये आग्रह करते हों तो साफ बात है
" कि, मैं सामाजिक रीति (स्वामी दयानन्दके सि-
" द्धांत) के मुताबिकही करूंगा ! लड़की किसी अच्छे
" खानदानकी पढी लिखी सामाजिक सिद्धांतोंमें प्रेम
" रखनेवाली हो ! " और विवाहसे पहले " स्वामी-
" जी " ने सत्यार्थप्रकाशमें जो वरकन्याकी परिक्षा
" करनेकी तरकीब बतलाई है उसके मुताबिक कुल
" कार्रवाई होनी चाहिये. अगर आपको और लड़की
" देनेवालेको यह बात मंजूर हो तो लिखियेगा !
" बादमें मैं विवाह करना मंजूर करूंगा.

आपका ब्रह्मानन्द

चैत्र शुक्ल २ संवत १९४३

शारदाचंद्र- अरे जयंति ! यह क्या हुआ ? क्या ब्रह्मानंद दयानन्दी बन गया ? मुझे तो यकीन नहीं आता !

जयंतिसहाय- मेराभी यही ख्याल है.

शारदाचंद्र- ओहो ! मैं उसकी चालाकीको जानता हूं तुम उसके लिये पहले लड़कीकी तलाश करो पीछे उसे लिखना.

जयंतिसहाय- आपाजी ! आपका कहना तो ठीक है मगर विरादरीके लोग (सामाजिक रिवाजके अनुसार विवाहविधि) नहीं मानेंगे ! अगर मानभी गये तो यह वात अच्छी नहीं है, क्यों कि जगह जगह तो सामाजियोंको फिटकार मिलती है. और घरमें कोई जरा चार अक्षर पढ़ी हुई आ गई तो औरभी टंटाही खड़ा हो जायगा ! मुझे तो यह वात पसंद नहीं है. (थोडी देरके वाद सोचकर) आपाजी ! दूसरे युगलकिशोर आदिके झगड़े टंटेको आपने देखही लिया है, वे वहुतही चिढ गये हैं, उनका जहांतक जोर लगेगा क्या किसी समाजीको लड़की देने देवेंगे ?

शारदाचंद्र- वेटा ! तुमतो भोलेहो ! विरादरीको समझाना अपने हाथमें है. अच्छा ! दूसरे जो पढ़ी लिखी आयगी तो क्या सिरपर पैर धरकर चलेगी ? हँ ! कुछ डर नहीं है ! खैर यहतो ठीक, मगर ये क्या कहाकि, वो किसीको लड़की नहीं देने देवेंगे ! अरे ! तुम देखोतो सही लो आजही.लो ! मैंने तुमसे जिकर ही नहीं किया, पंडित हरदत्तके दो लड़कियां हैं, जिनमें एक पंद्रह वर्षकी.

उन्होंने मुझे किसीके हाथ कहलायाभी है कि, मैं आपसे ब्रह्मानंदके संबंधमें मिलना चाहता हूं.

(इतना कहनेके बाद पंडित शारदाचंद्र अपने बड़े भाई और लड़कोंके साथ सब सलाह करके रोटी खाकर अपनी दुकानपर चले गये. वहांसे एक आदमीको भेज़कर पंडित हरदत्त (कन्ट्राक्टर) को कहलायाकि; आपको शारदाचंद्रने याद किया है, पंडित हरदत्त भी शारदाचंद्रके संदेशेको सुन उस आदमीके साथही अपने भाईकी दुकानसे उठकर वहां आये.

पं. हरदत्त– (शारदाचंद्रको देखतेही) नमस्ते साहब !

शारदाचंद्र– (अदबके साथ) आइये ! आइये ! मिजाज खुश !

पं. हरदत्त– अनायत आपकी !

शारदाचंद्र– (उठकर) चलिये ऊपर ही चौवारेमें बैठें !
(दोनों जने दुकानके ऊपर चौवारेमें जाकर बैठ गये, वहां दो तीन आदमी जो दुकानका काम करतेथे उन्हे नीचे भेजदिया.)

पं. हरदत्त– मुझे आपने याद किया बड़ी मेहरबानी की फरमाइयेगा क्या हुकम है ?

शारदाचंद्र– ब्रह्मानंदके संबंधमें आपने किसीसे कुछ जिकर भी किया था ?

पं. हरदत्त- जीहां ! कियातो था, कहिये ! आपकी क्या मनशा है ?

शारदाचंन्द्र- भाई साहब ! आप जानते ही हो ! आप कहिये कि, अपनी बड़ी पुत्रीकी सगाई ब्रह्मानंदके साथ करनेकी यदि आपकी मनशा होवे तो हमें मंजूर है वरना हम दूसरी जगहकी मांग मंजूर करें !

पं. हरदत्त- आप इतनातो समझे कि, अगर मेरी मनशा न होती तो मैं आपको इसके बारेमें कहलवाताही क्यों ? मगर जरा इतनी बात है कि, मेरी बड़ी लड़कीके ख्यालात कुछ नई रोशनीके साथ मिलते जुलते हैं, और जबसे मेरे पिताजी और भाई साहब आर्यसमाजके लाइफ मेंबरबने हैं, तबसे उन्होंने प्रतिज्ञा करली है कि, हम "स्वामीजी" के कथनसे अन्यथा न चलेंगे ! और मेरीतो आदत आप जानते ही हो कि, मुझे आर्यसमाजपर विशेष प्रीती नहीं और सनातनधर्म पर द्वेष नहीं और नाहीं धर्म संबंधी चरचा करनेको वक्त मिलता है ! पिताजी के इस लिहाजसे आप मुझे भले समाजी समझलें ! मेरे घरवाली की पूरी मनशा यह है कि, अपनी बेटी "माया" का विवाह ब्रह्मानन्दके साथ हो, तो अच्छा है, उसके कहनेसे ही आपको कहलवायाथा मगर जिस कामको मैं करूंगा उसको मेरे पिता या भाई खुशीसे मंजूर करेंगे; सिर्फ इतनी बात है कि, समाजी

रस्मोरिवाजके साथ हमारे पिता विवाह करनेको कहेंगे वो आपने मंजूर करलेना !

शारदाचंद्र– आप क्या कहते हैं ? यहां तो पहलेही ब्रह्मानंद यह कह रहा है कि, मैं यदि विवाह करूंगा तो आर्य विधिके ही मुताबिक करूंगा, वरना नहीं ! लो ये देखो उसकी चिट्ठी !

पं० हरदत्त– (चिठ्ठी पढ़कर और खुश होकर) ये पत्र आप मुझे दे दीजीयेगा, क्यों कि इस पत्रको पढ़कर मेरे पिताजी और भाईसाहब बहुतही खुश होंगे और ये कार्य वो स्वयं ही करेंगे और आपसे मिलेंगे ! मगर आप अब और कहीं लड़कीकी तलाश न करे, मेरी लड़की (बड़ी) आपके ब्रह्मानन्दको हो चुकी !

जयंतिसहाय– (पिता और हरदत्तकी क्या बातें होती हैं ये सुननेको आ बैठाथा हरदत्तसे बोला) हैं ! हैं ! पंडितजी ! अभी एकदम ऐसा मत कहो ! क्यों कि, जब तक ब्रह्मानन्द विवाहसे पहले "स्वामीजी" के बनाये हुए "सत्यार्थप्रकाश" में लिखे अनुसार आपकी लड़की "माया" की परीक्षा नहीं ले लेता वहां तक "स्वामीजी" का कथन माना नहीं जा सकता. "स्वामीजी" के कथनसे विपरीत चलना आर्यसमाजी भाईयोंको गुरुके वचनोंका अनादर करना नहीं तो और क्या ?

पं० हरदत्त– अजी बस करो ! कभी विवाहसे पहलेभी

लड़का लड़की की किसी बातकी परीक्षा कर सक्ता है !
तुम्हारा तो यह कहनाभी बेशरमीसे भरा हुआ है !

जयंतिसहाय– भाईसाहब ! अगर यह बात मैं अपनी मर-
जीसे कहता हूं तो मुझे बेशरम कहना ठीक है, लेकिन
मैंने तो आपके "स्वामीजी" के अक्षरोंको देखकर
कहा है. अगर ये बात आपको बुरी मालूम देती है तो
आप अपने "स्वामीजी" कोही बेशरम कहो, या अपने
पिताजी और अपने भाईसाहबको बेशरम कहो, जिन्होंने
"स्वामीजी" के कथनको माना है ! और दूसरी बात
यह है कि, जबतक आपकी लड़की "माया" की परी-
क्षा (स्वामीजीके कथनानुसार) "ब्रह्मानंद" न कर
लेगा वहां तक इस बातको कभी मंजूर नहीं करेगा !

पं० हरदत्त–अरे भाई ! यह तुम क्या कहते हो ? मैंने तो
अभीतक किसीभी खानदान (रईस) के घरमें ऐसी
कार्रवाई होती नहीं देखी ! कि जहां विवाहसे पहले ल-
ड़कीकी परीक्षा हुई हो !

जयंतीसहाय– तो बस जो आर्यसमाजी ऐसा नहीं करते
वे लोगोको धोखेमें डालने वाले हैं ! क्यों कि स्वामी-
जीके कथनसे उलटा चल रहे हैं !

पं० हरदत्त– भाई ! मुझे तो पूरी तरहसे मालूम भी नहीं है
कि "स्वामीजी" ने क्या लिखा है ? और क्या माना
है ? अगर यह बात लिखी है तो बहुत बुरी है ! मैं इस

बातको मानने के लिये हर गिजभी अपनी राय नहीं दूंगा! बिरादरीके लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे कि, अपनी लड़कीयोंका इम्तिहान (परीक्षा) दिला दिलाकर व्याहने लगे ! फर्ज करो अगर पहले लड़केने नापास की तो दूसरेके पास गई, उसने भी नापास की तो तीसरेके पास गई, उसने भी नापास की तो फिर वो कौन बेवकूफ औरतका लोभी है ? जो तीन लड़कोंसे फेल (नापास) की हुई लड़कीको विवाहेगा !

और अगर फर्ज करो लड़की ही लड़केको फेल (नापास) करदेवेतो लड़के वालोंको कितनी शरमिन्दगी उठानी पड़ेगी ! और उम्मेद है कि, कोई शरमदार लड़का शरम का मारा अपनी जानपर ही खेल जावे ! तो भी तअ-ज्जुब नहीं !

जिस आदमीने औरतसे हार खाई उस आदमीको मूंह दिखलाना कितनी वड़ी शरमकी बात है! मुझे तो यकीन नहीं आता कि " स्वामीजी " ने ऐसा लिखा हो !

जयंतिसहाय– अच्छा ! अब आप अपनी लड़की का विवाह " स्वामीजी " के लिखे मुताबिक करनेको कहते ही हो, और इधर मेरे भाई " ब्रह्मानन्द "को दयानंदके भक्त आर्यसमाजियोंकी सोहबत हो ही चुकी है " हाथके कंगनको आरसी क्या ? " " स्वामीजी " ने ऐसा लिखा है, या कैसा लिखा है ? सब मालूम हो

जावेगा ! पहले आप अपनी लड़की हमारे घर देनेका पक्का निश्चय कर लीजीये, और बुद्धिरूप कसौटीसे "स्वामीजी" के लेखरूप सोनेकी परीक्षा कर लीजीये कि, उनकी बुद्धि इस जमानेके लिए कहांतक दौडकर थक गई !

पं० हरदत्त–भाईसाहब ! मर्दोंकी जबान एक होती है जब मैं अपनी जुबानसे अपनी लड़की आपके घर देनी मंजूर कर चुका हूं तो अब चाहे मेरा पिता या भाई मुझसे फ्रन्टही क्यों न हो जावें ! मगर " स्वामीजी " संबंधी जो भूत मेरे अंदर आपने भरा दिया है सो अब जाता हूं और भाईसाहबसे पूछता हूं, मगर मेरा पूछना ही फिजूल है, क्यों कि आपके "ब्रह्मानन्द" ने ही " सरस्वतीजी " की सरस्वतीको पकड़ा है उसमें हमारा क्या जोर ? लो मैं जाता हूं !

(इतना कहकर पं० हरदत्त तो अपने घर गये और अपने पिता और भाईसे घरकी सब औरतोंके समक्षमें बैठकर बात करने लगे, पासमें "माया" भी खड़ी है)

पं० हरदत्त– (पितासे) चाचाजी ! मैं किनारीवाले शारदाचंद्रके छोटे लड़के " ब्रह्मानन्द " को इस अपनी " माया " के लिये मंगनी कर आया हूं, आप कहिए अब क्या करना चाहिये ?

र्तिप्रसाद– बेटा ! शारदाचंद्रको तो मैं जानता हूं मगर

उसका छोटा लड़का " ब्रह्मानंद " कौनसा है ? सो मेरे ध्यानमें नहीं आता ! जयंतिको तो मैनें देखा है.

माया– (अपनी दादी रुक्मणीके कानमे धीरेसे) दादीजी ! वो ही न ! जिसके साथ " सत्यवाला " हकीमजीकी वहेन व्याही हुईथी !

रुक्मणी– बैठ चुप होके ! मैं जानती हूं ! (फिर अपने पुत्रसे) क्या वोही जो इमलीके महल्ले में युगलकिशोर वकीलकी छोटी बहेनसे व्याहा हुआथा ?

पं० हरदत्त– हां ! हां ! वही.

रुक्मणी– लड़कातो अच्छा है ! उमर उन्नीस या वीस वर्षकी होगी !

कीर्तिप्रसाद– हां हां ठीक समझा समझा ! जो रेलवेके महकमे में अस्सी (८०) रुपये तनखाह पाता है.

पं० हरदत्त– अवतो पांच (५) रुपये तरक्की हुए हैं और तबदील होकर "इटारसी" गया है.

कीर्तिप्रसाद– बेटा ! बात तो ठीक है, मगर हमारा विचार तो उसके साथ विवाह करने का है, जो अपने आर्यधर्मको पालता होवे ! उनके घरके लोगतो धर्मके नामसे ही कोसों भागते हैं धर्म करना तो दरकिनार रहा !

पं० हरदत्त– (जेबसे एक पत्र निकालता हुआ) नहीं नहीं !

पिताजी ! यह आपका ख्याल गलत है ! उसके मां वाप चाहे कैसेही हों ! मगर उसके (ब्रह्मानन्दके) ख्यालतो इस पत्रसे देखिये उसने अपने वापको लिखा है, सो यह पत्र मैं ले आया हूं, येलो आप सुनलो कि, क्या लिखता है ?

(पत्र ऊंचेसे पढ़कर सुना दिया जोकि सवने सुना)

शिवदत्त– (हरदत्तका भाई अपने वाप कीर्तिप्रसादसे) चाचाजी ! यह क्या ? मैंने तो सुना था कि अपनी स्त्री "सत्यवाला" के मरने पर उसने युगलकिशोर वकील वगैरह दो तीन जनोंके साथ वड़ी ही झंझंट वाजी कीथी और अपने धर्मका वड़ा फजीता किया था और "स्वामीजी" के वारेमें भी वहुत कुछ वुरा भला कहा था !

पं० हरदत्त– मैं नहीं मान सकता कि, वह लड़का ऐसा हो !

रुक्मणी– (शिवदत्तसे) नहीं वेटा शिवदत्त ! मैंने उसका सारा हाल सुना है. वलकि आज चार पांच रोज हुए कि "माया" की अम्मा, (राधा)को "पंडित सुन्दर सहाय जज"की वहु मिलीथी उसने उसका चालचलन वहुतही अच्छा वतलाया, और देखनेमेंभी खुवसूरत है ! अभी चेहरेपर रेखभी नहीं आई ! सच पूछो तो मेरा दिल तो यही चाहता है कि, इस काममें देर न होनी चाहिये ! अगर ये अवसर हाथसे खो दोगे तो " माया " के लिए ऐसा लड़का (वर) फिर मुश्किलही मिलेगा ! "सत्यवाला" दो अढ़ाई साल-का लड़का छोडकर मर गई है, उसे उस (ब्रह्मानंद) की

वहेन (मालती) पालती है ! इस कार्यमें देर मत करो ! घर अच्छा है, और वरभी अच्छा है ! (यह बात सबने मंजूर कर ली और पासमें खड़ी हुई "माया" मुशकराई.)

कीर्त्तिप्रसाद- (हरदत्तसे) अच्छा तो कहला भेजो !

रुक्मणी- कहलाना क्या है ? सगन भेजशो !

कीर्त्तिप्रसाद- मगर उनसे यह करार कर लेना कि, विवाह वैदिक रीतिसे होगा !

माया-(अपनी मा-' राधा ' से) अम्मा ! देखो दाऊजीने क्या अच्छी बात कही है, और होनाभी यूंही चाहिये ! ये सगन वगन पीछे भेजवाना पहले यह लो " सत्यार्थप्रकाश " समुल्लास चौथा पृष्ट ९२-९३ में अपने " परमपूज्य श्री स्वामी दयानंद सरस्वतीजी " विवाहके पहले लड़का और लड़कीको क्या करना फरमाते हैं ? इसको पढ़ो !

पं० हरदत्त-(अपनी लड़कीसे आंखे घूरकर) बेटी ! तुझे चुप रहना चाहिये ! कभी शरमदार भले घरकी बेटियां इस प्रकार नहीं बोला करतीं ! जो कुछ बेटीके मा बाप करें उसे शिर माथेपर लेना चाहिये. तूं पंद्रह (१५) वर्षकी हुई है तेरेको मा बाप और दादा दादीके सामने इस सलाहको देते शरम नहीं आती ?

कीर्त्तिप्रसाद-(हरदत्तसे) उसे ठीक बात कहती हुईको क्यों

धमकाता है ? (पोती-" माया " से) बेटी! तूंने ठीक कहा है, सब कुछ " स्वामीजी " के कथनानुसार ही कार्य किया जावेगा ! सुनातो पढकर ! " स्वामीजी " ने क्या लिखा है ?

माया- (बेधडक होकर) मैं कौनसा बापके धमकाने पर कॉन धरती हूं, इस वक्त इनके दबकानेको मानकर चुप हो रहूंगी तो न जाने किस अनघड़के पाले पडूं! इनका क्या बिगड़ेगा ? सारी उमरका रोनातो मेरी जानका रहेगा ! सच कहते हैं जहां ऐसी ऐसी बुद्धिवाले लोग हों वहां उन्नति नहीं हो सकती. दाऊजी ! जब मैं यूरोपकी स्त्रियों और लड़कियों का इतिहास पढ़ती हूं तो मुझे ऐसा आनन्द पैदा होता है कि कुछ मत पूछो ! और मैं परमेश्वरसे प्रार्थना करती हूं के हमारे देशकी स्त्रियोंकोभी इस प्रकारकी आजादी मिलेगी !

पं० हरदत्त- (अपनी लड़कीके यह वचन सुनकर मनहीं मनमें) हाय हाय ! यह लड़की है या कोई आफत ? यह मेरी पुत्री कहलानेसे तो मरजाती तोही अच्छा था मगर खैर इसके मुंहसे सारी उमरका रोना निकला है तो रोनाही रहेगा !

माया- (सत्यार्थ प्रकाशको हाथमें लेकर कीर्त्तिप्रसादसे) लो दाऊजी ! सुनो—" उन कन्या और कुमारोंका " चित्र अर्थात् जिसको फोटोग्राफ कहते हैं अथवा प्रति " कृति उतारके कन्याओंकी अध्यापिकाओंके पास

" कुमारोंकी, कुमारोंके अध्यापकोंके पास कन्याओंकी
" प्रतिकृति भेज देवें, जिसका रूप मिल जाय उस उसके
" इतिहास अर्थात् जन्मसे लेके उस दिन पर्यंत जन्मचरि-
" त्रका पुस्तक हो उसको अध्यापक लोग मंगवाके देखें
" जब दोनोंके गुण कर्म स्वभाव सदृश हों तब जिस
" जिसके साथ जिस जिसका विवाह होना योग्य समझें
" उस उस पुरुष और कन्या का प्रतिबिंब और इतिहास
" कन्या और वरके हाथ में देवे और कहें कि इस में
" जो तुम्हारा अभिप्राय हो सो विदित करदेना, जब
" उन दोनाका निश्चय परस्पर विवाह करनेका हो
" जाय तब उन दोनोंका समावर्त्तन एकही समयमें
" होवे, जो वे दोनों अध्यापकोंके सामने विवाह करना
" चाहें तो वहां, नहीं तो कन्याके माता पिताके घरमें
" विवाह होना योग्य है, जब वे समक्षमें हों तब उन
" अध्यापकोंका कन्याके माता पिता आदि भद्रपुरुषोंके
" सामने उन दोनोंकी आपसमें बातचीत शास्त्रार्थ क-
" राना और जो कुछ गुप्त व्यवहार पूछें सोभी सभामें
" लिखके एक दूसरेके हाथमें देकर प्रश्नोत्तर कर लेवें
" जब दोनोंका दृढ़ प्रेम विवाह करनेमें हो जाय तबसे
" उनके खानपानका उत्तम प्रबंध होना चाहिये कि
" जिससे उनका शरीर जो पूर्व ब्रह्मचर्य और विद्या-
" ध्ययन रूप तपश्चर्या और कष्टसे दुर्बल होता है वह
" चंद्रमाकी कलाके समान बढ़के पुष्ट थोड़ेही दिनोंमें हो
" जांय पश्चात् जिस दिन कन्या रजस्वला होकर जब

" शुद्ध हो तव वेदी और मंडप रचके अनेक सुगंधादि
" द्रव्य और घृत आदिका होम तथा अनेक विद्वान पु-
" रुष और स्त्रियोंका यथायोग्य सत्कार करें, पश्चात्
" जिस दिन ऋतुदान देना उचित समझें उसी दिन सं-
" स्कार विधि पुस्तकस्थ विधिके अनुसार सव कर्म
" करके मध्यरात्री वा दश वजे अति प्रसन्नतासे सवके
" सामने पाणीग्रहण पूर्वक विवाहकी विधिको पूरा करके
" एकांत सेवन करे, पुरुष वीर्य स्थापनकी और स्त्री
" वीर्य आकर्षणकी जो विधि है उसीके अनुसार दोनों
" करे " (इत्यादि सुनाकर फिर कहने लगी) दाऊ-
जी ! देखो यह विवाहकी विधि वताकर आगे फिर
लिखा है कि-" जव वीर्यका गर्भाशयमें गिरनेका समय
" हो उस समय स्त्री और पुरुष दोनों स्थिर, और ना-
" सिकाके साथ नासिका नेत्रके सामने नेत्र अर्थात्
" सूधा शरीर और अत्यंत प्रसन्न चित्त रहे डिगे नहीं
" पुरुष अपने शरीरको ढीला छोड़े, और स्त्री वीर्य-
" प्राप्ति समय अपानवायुको ऊपर खींचे योनीको ऊपर
" संकोचकर वीर्यका ऊपर आकर्षण करके गर्भाशयमें
" स्थित करे. "(मायाकी मां और दादी वगैरह घरकी
सव औरतोंको वड़ी भारी शरम आई मनही मनमें वि-
चारने लगी कि-हाय हाय ! कैसी वेशरम लड़की है ?)

पं० हरदत्त- (क्रोधमें आकर "माया"के हाथसे "सत्यार्थ
प्रकाश " छीनकर अपने वापसे) गजवरे गजव !

चाचाजी ! क्या कहना है ? आपने इसको बहुतही अच्छी तालीम दी और वैदिक धर्मका मर्म सिखलाया है ! (अधिक क्रोध) बस ! मेरा आपसे कोई तअल्लुक नहीं आप जुदे, मैं जुदा ! भरपाया आपसे और आपके धर्मसे ! धिक्कार है इस धर्मके चलाने वालेको क्या कहूं तूं मेरा बाप है वरना अभी तमाशा दिखादूं (कुछ देर बाद) अरे कैसे गजबकी बात है ! आजतक मैं नहीं जानताथा कि स्वामी ऐसा अनार्यधर्म चलाने वाला है ! मैंने तो नाहक ही सभाओंमें चंदाभरा, नाहक ही आर्य मै सिन्ज-रादि अखबारों का ग्राहक बन अनार्यधर्मी कहलाया. (अपनी मासे) अरी मा ! तेरा सत्यानास जाय ! तूने भी कुछ ख्याल नहीं किया कि, ये कलजोगन ! क्या पढती है ? आर्यकन्याशालामें क्या पढाई और क्या तालीम दी जाती है ? कभी कुछ ख्यालभी नहीं किया कि, ये क्या धर्म पालती है ? (अपनी औरतसे दांत किट किटाकर) अरी रांड ! हरामजादी ! तैने इस जहरकी बेल को बढ़ाकर क्यों मेरी रईसी इज्जतका नाश किया ! (वेटीसे) अरी ! कुलकी जस कीर्तिपर पानी फेरने वाली कुमाया ! क्या तुझे अपने सामने बैठे हुए मा, बाप, दादी, दादा भी नजर नहीं आते ? (दांत पीसकर) अरी वेहया वेशरम वदजात ! इतने बड़े बड़े दयानंदके भगत और जो मोहरी बने फिरते हैं, उनके घर में सैकडों व्याह हुए हैं, क्या तुने कहीं देखा या सुना कि, फलाने के घर फलानेकी लडकीका विवाह इस प्रकारसे हुआ ?

मुझे अफसोस तो इसबातपर आता है कि, हमें इस लेख को सुनते ही बडी शरम आती है ! तुझ से पढा किस तरह गया ? तेरे जैसी अच्छे घरानेकी पैदा हुई ऐसे लेखपर अमल करने कराने को तयार हो तो इससे बढकर और अनर्थ क्या होगा ?

क्या करुं मैं उन भले आदमीओं को जबान दे आया हुं वरना सारा ही दयानन्द के मतका पालन करा देता और तुझे समाजका ताज पहना देता ! (इस प्रकार हरदत्तको बोलते हुए देखकर किसीकीभी सामने उत्तर देनेकी हिम्मत न चली इतनेमें)

माया-(बेधडक होकर बापसे) बस पिताजी ! बस !

उंची नीची जुबान मत निकालो ! अगर हरामजादी हुं तो आपकी हुं ! बदजात हुं तो आपकी हुं ! मगर आपको याद रहे कि मैं उसके साथ विवाह कराने को कदापि तैयार नही हुं, जिसकी कि, मैं अपनी मरजी के मुताबिक परीक्षा न करलुं ! आप क्या मेरी जिन्दगी को खराब करना चाहते हो ? आपने कहा है कि, ऐसा तो काम बडों बडों के घरमेंभी नहीं हुआ ! आपको क्या मालुम है कि, क्या होता है ? और हमारे पूर्वज क्या करते आये हैं ? आप तो जबसे होश संभाली है तबसे कन्ट्राक्टर (ठेकेदार) बनकर, बन बन में लकडियोंका ठेका लेते फिरे हो ! अगर आपने पूर्वजोंका इतिहास पढा होता तो कभीभी ऐसे असमंजस वचन मुंहसे न निकालते !

और न "स्वामीजी" को बुरा भला कहते ! पिताजी ! ये याद रखो कि, मुझे मरजाना तो मंजूर है, मगर यह उत्तम आर्य धर्म और "स्वामीजी" के किये हुए वेदों के अर्थ और बतलाये हुए गुप्त रहस्योंसे बरखिलाफ चलना मंजूर नहीं ! मेरे दादा वगैरह से जुदा होकर क्या मुझे आप अपनी मरजीके मुताबिक किसी के साथ व्याह दोगे ? आप इस ख्याल में मत रहना ! राज्य गवर्नमेन्ट सरकार महाराणी मलका का है, इस लिये आपको लाजिम है कि, आप घरमें झगडा मत डालो और मेरे लिये "स्वामीजी" के ही वचन पालो ! आगेके लिये आपकी मरजी ! अपनी सारी जिन्दगी पोप धर्म में ही गालो ! आप मुझे आर्य ब्रह्मानन्द को देनेके लिये उसके बापसे प्रतिज्ञा करचुके हैं, सो बहुत अच्छा मैं आपकी, प्रतिज्ञाका खंडन नहीं होने दुंगी, यह मेरा भी धर्म नहीं है ! लोग बिरादरी में हाँसी होने का ख्याल अगर आपको होतो यह आपका गलत ख्याल है, विवाह में आर्य धर्म के निन्दक पोप पाखंडियों को बुलाना ही क्यों ? जो हाँसी करें ! आपको चाहिए कि एक पत्र छपवाकर आर्य विद्वानो और बडे बडे ग्रेज्युएटो तथा पं० सुन्दर सहाय P.C. जज आदिकोंको भेज दीजीये, और आर्य सभाओ को भेजदीजीये, और बाहर शहरों में भी भेजदीजीये गा. जैसी उन विद्वान आर्य पंडितो के आनेसे मेरे विवाह मंडपकी शोभा होगी क्या उन पोप पाखंडी अनपढो के ग्रोहसे वैसी होगी ? नहीं ! हरगिज नहीं ! और उन

लोगों के आने से आपका महत्व बढेगा और सारे हिन्दुस्तानमें आपका नाम प्रसिद्ध होगा ! आप प्राचीन रीती के अनुसार प्रवृत्ति करने वाले कहलायेंगे, इसवक्त आपको विरादरीका खौफ करना विलकुल ही निकम्माहै, धूल डालो इस पोप विरादरी के सिरपर ! जो आर्य हैं वही हमारी विरादरी है बाकी तो सब बुरादरी ही हैं ! आज कल ऐसा जमाना आ गया है कि, जो अच्छी बात बतलाओ तो बुरी मालुम देती है ! इसकी वजह यही है कि, उनको बचपन से तालीम ठीक नहीं मिलती ! मैं देख रही हुं कि, इसवक्त मेरी मा, दादी वगैरह सबही दांत पीस रही हैं इसकी वजह यही है कि, ये अनपढ और मूर्खनी हैं! दूसरी को पढी हुइ देखकर इर्षा करती हैं! पहले भी मैं इसके मूंह से सुनचुकी हूं कि " राय साहब ने ' विद्या ' को विद्या क्या पढाई है हमसे घडीभर बात करनी तो दूर रही सीधे मूंह बोलती भी नहीं ! ऐन्ट्रॅन्सका तो इम्तिहांन दिला दिया न जाने अभी कहां तक पढाये ही जायेंगे ? " अब सोचना चाहिये कि, इनके साथ घडी आध घडी निकम्मी बातें करनी अच्छी या उतनी देर में अपना लहसन्स याद किया जावे वो अच्छा ? (दादीसे) दादीजी ! बुरा मत मनाना तुमतो मुझे बडा प्यार करती और अच्छी तरह रखती हो और तुम्हारीही मेहरबानीसे में इतना पढ भी गई ! वरना अम्माकी तरह मैं भी रहजाती ! इसलिये गुस्सा छोडदो और जिस तरह से बने आपसमें सलाह करके मेरे

ब्याहकी वात प्रसन्नता पूर्वक करदो बाद में जो बनेगा वो मैं आपही समजूंगी ! जब वो आर्य रीति से विवाह करना मंजूर करते हैं तो आपको मेरे लिये मंजूर करना ही पडेगा ! मैं ने ' ब्रह्मानंद ' को देखा है, वो एक पढा हुआ लायक है, उसके एक लडका "सत्यवाला" से है, सो उसका मुझे कुछ एसा विशेष दुख उठाना पडे एसा नहीं मालूम देता, क्यों कि उसको उसकी बुआ (मालती) पाल रही है, वह अनुमान तीन सालका होनेका आया है (सबके सब " माया " को इस तौर खुले दिल शरम रहित बेधडक देखकर सोचने लगे कि, बस ! हद हुई ! अब बोलनेकी जरुरत नहीं अबतो जैसे बने वैसे अपनी इज्जत रखनी चाहिये !)

कीर्तिप्रसाद-(हरदत्तसे) बेटा ! तूं हमें जुदा होनेकी धमकी देता है सो तेरी मरजी ! मगर ये तो बता कि "माया" ने इस वक्त क्या बुरा कहा है? खैर तूं जान तेरी लडकी! हमतो आर्य धर्म पर जितना बनेगा उतना अमल करेंगे अगर इस लडकीने जो कहा है उसके मुताबिक काम होगा तो हम तेरे साथ शामिल है वरना तु जान तेरा काम !

हरदत्त-अच्छा पिताजी ! (सांसभरकर) आपकी मरजी जो आपके मनमें आवे सो करो ! कुछ अपनी इज्जतका ख्याल आपकोभी तो होगाही ! क्या अपना भला बुरा आप नहीं जानते ?

कीर्तिप्रसाद- मुझे तेरे कहने पर बडा ही अफसोस मालूम होता है कि क्या, जितने सज्जन और आवरूदार वडे बडे ग्रेज्युएटस अहलकार व अमलदार लोग आवेंगे क्या वे सबके सबही तेरी समझमें बेवकूफ हैं ? क्या उनको अपनी इज्जतका ख्याल नहीं है ? इतना तो जरुर है कि, जो इज्जत और आवरु व विद्या इस वक्त इनको पैदा हो रही है वह आर्य धर्म अंगीकार करनेसे पहले कोसों-तक भी नजरमें नहीं आती थी! हां अगर वो कुछ वेद विरुद्ध करते नजर आते हों तो कहनाभी ठीक है, इस लिये मुझे आर्यधर्म (स्वामीजीके वचनों) से विपरीत चलना पसंद नहीं है. मैं भला बुरा सब जानता हुं ! मैं अब ज्यादा बात बढानी ठीक नहीं समझता अगर विवाह करना हो तो आर्य रीतिसे करनेमें मैं तेरे सामिल हुं वरना तेरी लडकी तूं जान !

हरदत्त-(अपने कपालको हाथ लगाकर) पिताजी ! कहो आप क्या चाहते हैं ? मैं तो अब जो आप कहो सो करनेको तैयार हुं, मुझे तो इस वक्त आप कहो कि-नंगे होकर बजारमें नाच तो मैं नांचनेको भी तैयार और नचाने को भी तैयार (अपनी मांसे) मां ! मुझे पिताजीका हुकम मंजुर है (यह सुनकर सबही हंसपडे)

रुकमणी-लायक पुत्र हो तो तेरे ही जैसा हो (घरमें अंदर से सिवाय कीर्त्तिप्रसाद (हरदत्त के पिता) के और

माया के किसीकी भी मरजी नहीं है कि इसका विवाह आर्य विधि से हो ! लेकिन क्या करे ? आखर लोग दिखावे के लिये नाई के हाथ रुपया नारियल दे भेजा और व्याहका निश्चय हो गया, सहारनपुरसे पंडित मोहनपाल को आर्यविधि से विवाह करानेके लिये बुलवा लिया ! और हेन्डाबिल छपवाकर सबजगह आर्यसमाजियो को भेजवा दिया कि—

मान्यवर महाशयजी ! नमस्ते

सविनय निवेदन है कि दश फरवरी सन् १८०१ वार बुध के रोज मेरे पुत्र हरदत्तकी वडी पुत्री 'माया' का विवाह संस्कार है, विवाह वैदिक रीतिसे होगा. संस्कार करानेके लिये सहारनपुरसे पंडित मोहन पालजी बुलाये गये हैं इसलिये आपलोग पधारकर सभामंडपकी शोभाको वढाते हुए मुझे अनुग्रहित करेंगे ! वैदिक धर्मकी उन्नति और शोभा आप पर हि निर्भर है

आपका शुभचिन्तक

कीर्त्तिप्रसाद.

नोट—दस बजेसे चार वजे तक स्वामीजीके लेखानुसार वर कन्याकी परस्पर परीक्षाका कार्य होगा.

उधर ब्रह्मानन्दभी अपने बाप शारदाचन्द्रके बुलानेपर अपनी एवजी (डयूटी) पर एक उम्मेदवार अगड़दत्त आर्य समाजीको रखकर घरको आ पहुंचा ! और पूर्वोक्त रीतिसे फोटोपचार हुआ. और कीर्त्तिप्रसादने जहां मंडप सजायाथा (राय श्री शंकरकी कोठीमें) मायाको ले जाकर वहां ब्रह्मानंदको बुलाया, उसवक्त मान्यवर आर्यसुप्रतिष्ठित महाशयोंसे सभा मंडप भर गया. उनके सामनेही पत्र द्वारा " माया " और " ब्रह्मानंद " का " स्वामीजी " के वचनानुसार, सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ९३ के मुताबिक (कन्याके माता पिता आदि भद्र पुरुषोंके सामने उन दोनोंकी आपसमें बात चीत शास्त्रार्थ करना और जो कुछ गुप्त व्यवहार पूछे सोभी सभामें लिखके एक दूसरेके हाथमें देकर प्रश्नोत्तर कर लेवें) इत्यादि कार्रवाइ शुरु हुई ! मगर उस वक्त " माया" की मां या दादी वगैरह अन्य कोई औरतें हाजर नहीं हुई.

पं० मोहनपाल– (ब्रह्मानन्दसे) हां साहब ! अब क्या देर है ? खड़े हो जाओ और परमेश्वरकी प्रार्थनाके लिये वेदकी ऋचासे मंगलाचरण करो !

ब्रह्मानन्द– (खड़ेहोकर) हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे । भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ १ ॥

पं० मोहनपाल– बस! अब आप (अपने सामने खड़ी हुई को विवाहनेकी इच्छा वाले) को चाहिये कि जो तुम्हारे दिलमें आवे उस प्रकार प्रश्नोत्तर कीजीये ! (मायासे)

भद्रे ! तुम भी शांतिके साथ अपने भावि पतिको उत्तर दो और जो तुमने भी पूछना हो वो पूछो ! आप दोनों का जीवनचरित्र आप दोनोंने सुन ही लिया है.

ब्रह्मानन्द- (मायासे) तुमको कौनसा धर्म मान्य है ?

माया- मुझे वैदिक धर्म मान्य है! और नाहीं मैं इस वैदिक धर्मसे परे किसी धर्मको मानती हूं !

ब्रह्मानन्द- तुमने कौनसे ग्रंथ पढ़े हैं ? और किन किन ग्रंथो पर तुम्हारी प्रीति है ?

माया- मैंने "आर्यकन्या पाठशाला" की अध्यापिका बीबी पानादेई की मेहरबानी से "स्वामीजी" के बनाये हुए "यजुर्वेद भाष्य" "वेद भाष्य भूमिका" "संस्कार विधि" और "सत्यार्थप्रकाश" आदि ग्रंथोंको पढ़ा है, मुझे इन्हीं ग्रंथों पर प्रेम है !

ब्रह्मानन्द- सत्यार्थ प्रकाशके कितने समुल्लास हैं ?

माया- चौदह !

ब्रह्मानन्द- अच्छा ! बतलाओ कि, यह वर्णन किस ग्रंथमें किस जगह "स्वामीजी" ने किया है कि, जिससे कुरूप और वक्रांग संतान न हो !" और गर्भ धारण करनेकी विधि किस प्रकार बतलाई है ?

माया- (कुछ विचार कर) "स्वामीजी" के किये हुए यजुर्वेद भाष्यके अध्याय १९ मंत्र ८८ में इसका वर्णन है.

ब्रह्मानन्द- (हाथमें स्वामीजीके भाष्यको लेकर) अच्छा ! बोलो क्या विधि है ?

माया- क्या मुझे मुंह जवानी थोड़े ही याद है, लाइये दीजीये मुझे (हाथ लंवा करके) पुस्तक, मैं आपको पढ़कर सुना देती हूं ! (ब्रह्मानन्दके हाथसे यजुर्वेद भाष्य ले कर और झट अध्याय मंत्र निकाल कर सुनाने लगी !)

" स्त्री पुरुष गर्भाधानके समय परस्पर मिलकर प्रेमसे पूरित हो मुखके साथ मुख, आंखके साथ आंख, मनके साथ मन, शरीरके साथ शरीरका अनुसंधान करके गर्भको धारण करें जिससे कुरूप और वक्रांग संतान न हो ! "

ब्रह्मानन्द- थैंक्स ! ऑलराइट ! (वाह वहुत ठीक !)

माया- अच्छा अव आप वतलाइये कि, यजुर्वेद भाष्यके अठ्ठावीस (२८) में अध्यायके वत्तीसवें (३२) मंत्र का " स्वामीजी " ने क्या अर्थ किया है ? यह लो पुस्तक (हाथ वढ़ाकर पुस्तक देती है)

ब्रह्मानन्द- वस वस ! पुस्तकको तुम अपने पासही रखो ! मुझे " स्वामीजी " का किया हुआ अर्थ याद है. सुनो मैं वोलता हूं तुम मिलाती जाओ ! " हे मनुष्यो ! जैसे वैल गौओंको गाभिन करके पशुओंको वढाता है वैसे गृहस्थ लोग स्त्रियोंको गर्भवती कर प्रजाको वढ़ावें ! "

माया- (हँसकर) वस साहव वस ! आपने तो हिफ्ज कर रखा है !

ब्रह्मानन्द- अगर हिफ्ज नकर रखा होता तो तुम्हारे जैसी इन भले आदमियों के वीचमें तौड़ियां न वजादेती ! और फिर यह भी डर है कि, तुमसे फ़ेल हुआ कि

हिन्दकी लड़कियोंसे फेल हुआ ! मेरी कोई बातभी न पूछे, और वेदादि शास्त्रको कंठस्थ रखना यह अपना आर्यधर्मका कर्त्तव्य है.

माया–आपने सच फरमाया ! " स्वामीजी " ने " संस्कारविधि " के पृष्ठ ११२ में इसी लिये तो लिखा है कि " चाहे मरण पर्यंत कन्या पिताके घरमें बिना विवाहके बैठी रहे परंतु गुणहीन असदृश पुरुषके साथ कन्या विवाह कभी न करें ! "

ब्रह्मानन्द–हाँ ! मैं तुम्हारे कहनेको समझ गया ! कहो मैं तुम्हारे लिये सदृश हूं या नहीं ?

माया– (नीची गरदन कर शरमाती हुई धीरेसे) yours is not the question but it appears that you have played a joke (आपका यह प्रश्न नहीं है, लेकिन मश्करी ठट्ठा करते हो !).

ब्रह्मानन्द–ओहोहो ! तुम तो इंग्लिशभी जानती हो ! नहीं नहीं भला यह वक्त ठट्ठा मश्करी करनेका है ! और फिर इन बड़े बड़े महाशय भद्र पुरुषोंके सामने ! अगर अकेली होतीं तो बातभी थी ! अच्छा बोलो मेरा वाक्य सर्वथा हमेशाके लिये तुमको कबूल है ?

माया– क्यों नहीं ? जब आपको मेरे वाक्य मान्य हैं तो मुझे आपके क्यों नहीं ? (थोडी देर ठहर कर) अच्छा ! कहिये कि यजुर्वेद अध्याय ६ के मंत्र १४ का "स्वामीजी" ने क्या अर्थ किया है ?

ब्रह्मानन्द- तुम पहले चौदवां (१४) मंत्र तो उच्चारण करो जिससे मुझे भी मालूम होवे कि, तुमको मंत्र उच्चारण करना भी आता है या कि नहीं ?

माया- मुझे कंठस्थ तो है नहीं ! लाओ देखकर मंत्र उच्चारण करती हुं ! (वड़े उच्च और मधुर स्वरसे)

वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि
चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रन्ते शुन्धामि
नाभिन्ते शुन्धामि मेढ्रं ते शुन्धामि
पायुन्ते शुन्धामि चरित्रांस्ते शुन्धामि ॥१४॥

पं० मोहनपाल- (ब्रह्मानन्दसे) मैं उम्मेद करता हूं कि इस प्रकारके मधुर स्वरसे इस मंत्रको और ऐसा स्पष्ट और शुद्धतो आप भी उच्चारण नहीं कर सकेंगें ! अच्छा ! अव आप इसका अर्थ पढ़ सुनाइयेगा !

ब्रह्मानन्द- (मायाके मधुर स्वरको सुनकर लट्टु हुआ हुआ) क्या मैं इसका अर्थ सुनाऊं ! वेहतर हो कि तुम . इसके अर्थको अपने दिल ही दिलमें पढ़लो ! मुझे जरा इसके पढ़ने में संकोच होता है !

माया- आप यूं हीं क्यों नहीं कहदेते कि मुझसे पढ़ा नहीं जाता ! अभी तो आप कहतेथे कि " स्वामीजी " के किये हुए अर्थ हिव्ज हैं अव आपको यादतो है नहीं इस लिये कहते हो कि संकोच होता है ! इसमें क्या संकोच की वात है ? (पं० मोहनपालसे) सुनि-

येगा पंडितजी साहब ! इस अर्थ में क्या ऐसीबात है जो इन्हें संकोच होता है ! लो मैं ही सुनाती हूं आप लोग सुनिये !

" हे शिष्य ! मैं विधि शिक्षाओंसे तेरी जिससे बोलता है उस वाणीको शुद्ध अर्थात् सद्धर्मानुकूल करता हूं ! तेरे जिससे देखता है उस नेत्रको शुद्ध करता हूं, तेरी जिससे नाड़ी आदि बांधे जाते हैं उस नाभीको पवित्र करता हूं, तेरे जिससे मूत्रोत्सर्गादि किये जाते हैं उस लिङ्ग (पुरुष चिन्ह) को पवित्र करता हूं, तेरे जिससे रक्षा की जाती है उस गुदा इन्द्रियको पवित्र करता हूं समस्त व्यवहारोंको पवित्र शुद्ध करता हूं—तथा गुरुपत्नी पक्षमें सर्वत्र " करती हूं " यह योजना करनी चाहिये !" (पंडित मोहनपालसे) क्यों पंडितजी ! इसमें क्या संकोच होनेकी बात है ?

पं० मोहनपाल— नहींजी कुछभी नहीं ! संकोच होनेकी क्या बात है ! !

ब्रह्मानन्द— अच्छा तो पंडितजी ! फरमाइयेगा मैं आपका शिष्य होता हूं ! क्या आप मेरी 'गुदा' की और 'लिङ्ग' की शुद्धि करोंगे ? अगर करोंगे तो क्या इन लोगोंके समक्ष करोंगे ? या अन्दर कोठडीमें ले जाकर !

शारदाचंद्र— (ब्रह्मानन्दसे) अबे ! भूतनीके ! इसवक्त उस बिचारीके साथ बात करता है या कि पंडितका चेला बनता है ? पहले उस बिचारीको चेली बना ले

बादमें पंडितजीका चेला बनकर शुद्धि कराता फिरियो !

पं० हरदत्त– (इन बातोंको सुनकर दुःखी होता हुआ अपने मनहीं मनमें) धिक्कार है ऐसे धर्मको और लानत है बैठे हुए इन ग्रेज्युएटोंको ! और सबसे ज्यादा धिक्कार है मेरी इस लड़की–'माया' को जो इतने आदमीओंमें वेश्या (रंडी) की तरह बोलती हुई जराभी नहीं शरमाती ! ! (शारदाचंद्रके कानमें) भाई ! मुझे तो ये बातें बहुतही बुरी लगती हैं ! अगर इनमें सनातनधर्मी या और किसी मतके माननेवाला कोई मनुष्य निकल आया तब तो बहुतही फजीता होगा !

शारदाचंद्र– भाई ! अब अपना बोलना अच्छा नहीं है चलने दो जैसे काम चलता है, विवाह के बाद 'ब्रह्मानन्द' और 'माया' दोनोंको मैं एकही महीने में ऐसा तीर बना दूंगा कि, इस (अनार्य) धर्मकी धूल यही दोनों उड़ायेंगे ! तुम देखते जाओ क्या होता है ! दरवाजे पर मैंने अपना चपड़ासी बिठा रखा है इस लिये सिवा दयानन्दियोंके दूसरा आदमी अंदर नहीं आ सकता ! (ब्रह्मानन्दसे) बेटा ! चल आगे अब जो प्रश्न करना है सो कर या उस बिचारीको इजाजत दे ताकि तुझे पूछे ! निकम्मी बातोंमें वक्त जाया करना ठीक नहीं !

माया– (अपने भावि पति–ब्रह्मानन्दसे) जाने दो इस बातको ! आप ये बतलाइये कि–" ऐश्वर्य की इच्छा रखने वाले मनुष्यको क्या करना चाहिये ? इसके बारे

में "स्वामीजी" का क्या मत है? और वह कहां लिखा है?

ब्रह्मानन्द– तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर मैं कागज पर लिख कर दूं तो क्या तुम मंजूर करोगी?

माया– कागज पर लिखी हुई उन्हीं वातोंको मंजूर करूंगी जो कि मेरे और आपके गुह्यव्यवहारसे संबंध रखती होंगी!

ब्रह्मानन्द– अरे! (अपने मनमें) क्या ये कोई पा.... तो नहीं है? (अव्यक्त चेष्टासे) हुं–हुं–हुं खैर (प्रगट माया से) हां तो लो! ऐश्वर्य चाहने वालेको क्या करना चाहिये? यही तुम्हारा प्रश्न है न?

माया– (मुसकराकर) जी हां!

ब्रह्मानंद– लो सुनो इसका उत्तर (धीरेसे मायाके नजदीक मुंह करके) "ऐश्वर्यके लिये वैलसे भोग करे" फिर तुमने इसके साथही पूछा है कि "स्वामीजी" का इसके वारेमें क्या मत है? और वह कहां लिखा है? सोभी सुनो! यजुर्वेद अध्याय २१ मंत्र ६० में "स्वामीजी" लिखते हैं कि–" हे मनुष्यो जैसे आज भली भांति समीप स्थिर होनेवाले और दिव्य गुणवाला पुरुप वट वृक्ष आदिके समान जिस जिस प्राण और अपानके लिये दुःख विनाश करनेवाले छेरी आदि पशुसे वाणीके लिये मेढ़ासे परम ऐश्वर्यके लिये वैलसे भोग करे."

माया– क्या "स्वामीजी" का किया हुआ यह वेद मंत्रका अर्थ आपको मान्य है?

में "स्वामीजी" का क्या मत है? और वह कहां लिखा है?

ब्रह्मानन्द– तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर मैं कागज पर लिख कर दूं तो क्या तुम मंजूर करोगी?

माया– कागज पर लिखी हुई उन्हीं बातोंको मंजूर करूंगी जो कि मेरे और आपके गुह्य व्यवहारसे संबंध रखती होंगी!

ब्रह्मानन्द– अरे! (अपने मनमें) क्या ये कोई पा.... तो नहीं है? (अव्यक्त चेष्टासे) हुं–हुं–हुं खैर (प्रगट माया से) हां तो लो! ऐश्वर्य चाहने वालेको क्या करना चाहिये? यही तुम्हारा प्रश्न है न?

माया– (मुसकराकर) जी हां!

ब्रह्मानंद– लो सुनो इसका उत्तर (धीरेसे मायाके नजदीक मुंह करके) "ऐश्वर्यके लिये बैलसे भोग करे" फिर तुमने इसके साथही पूछा है कि "स्वामीजी" का इसके बारेमें क्या मत है? और वह कहां लिखा है? सोभी सुनो! यजुर्वेद अध्याय २१ मंत्र ६० में "स्वामीजी" लिखते हैं कि– "हे मनुष्यो जैसे आज भली भांति समीप स्थिर होनेवाले और दिव्य गुणवाला पुरुष वट वृक्ष आदिके समान जिस जिस प्राण और अपानके लिये दुःख विनाश करनेवाले छेरी आदि पशु- से वाणीके लिये मेढ़ासे परम ऐश्वर्यके लिये बैलसे भोग करे."

माया– क्या "स्वामीजी" का किया हुआ यह वेद मंत्रका अर्थ आपको मान्य है?

से बात करती हूं त्यूं त्यूं ही मेरा दिल विवश होता जाता है, बस ज्यादा क्या कहूं ? अब मुझे आपके वगैर दूसरे पतिसे बस है, आपकी आज्ञा सर्वथा मान्य है !

ब्रह्मानन्द– (पं० मोहनपालसे) अजी पंडितजी !

पं० **मोहनपाल**– हाँ भाई ! क्यों ?

ब्रह्मानन्द– क्यों क्या ? आप तो नींदके झोके खाते हैं ! क्या रात सोये नहीं ?

(सभा में सब लोगोंकी हँसा हस)

पं० मोहनपाल– (आंखोंको मसलकर) भाई ! इस वकत में नींदका झोका नहीं खाता तो इसवक्त इन महाशयोंके दिलकी कली कैसे खिलती ? सारी रात खटमलों ने सोनें नहीं दिया इस लिये नींद आती है ! अच्छा हां अब तुमने क्या किया ? आगे काम चलाओ ! माया के प्रश्नका उत्तर दे दिया ?

ब्रह्मानन्द– जी हां । उत्तर दे दिया ! मगर आप जरा इजाजत दो तो मैं भी बाहर जाकर अपनी सुस्ती उतार आऊं और जरा पानी पी आऊं ?

शारदाचंद्र– (ब्रह्मानन्दसे) अरे ! सुस्ती फुस्ती पीछे उतारते फिरना पहले इस कामको भुगताले ! फिर ये महाशय लोग भी अपने अपने घरोंको जावें !

ब्रह्मानन्द– आप तो ख्वामुख्वा जलदी मचाते हैं देखो तो स्वयंवरका टाइम १० से ४ बजे तक का दिया है, और अभी तो ग्यारां ही बजे हैं, अभी पांच घंटे बाकी हैं,

इतनी वातचितमें तो न मेरी ही तसल्ली हुई है और न इस मायाकी ! (सभा में से एक वृद्ध महाशय शारदाचंद्रसे) नहीं नहीं जलदी करने की जरूरत नहीं है यह काम आहिस्ते ही होना चाहिये ! यहां हम सब खा पीकर आये हैं (फिर ब्रह्मानन्दसे) जाओ वेटा ! जाओ ! जरा बाहर फिर आओ !

ब्रह्मानन्द– जी ! वहुत अच्छा ! (इतना कहते ही वाहर आया और उस कोठी (जिस जगह में स्वयंवर का काम हो रहा था) के समीप चांदनी चौक में टहलने लगा, इतने हीं में क्या देखता है कि " दया " और " नंदिनी " नाम की दो विधवा नवयौवना स्त्रिएं रोती हुई स्वयंवरके स्थानकी तर्फको आरहीं हैं, उनको समीप आती देख आगे होकर) क्यों बहनों ! तुम क्यों रोती हो?

दया– भाई ! हमारे रोनेको कौन सुनता है ? मगर आप इतना वतलाइये हमने सुना है कि, पंडित हरदत्त सहाय कन्ट्राक्टरकी लड़की " माया " का विवाह शारदाचन्द्रके लड़के " ब्रह्मानंद " के साथ वैदिक रीति (दयानन्द संस्कार विधि) से होना स्वीकार हुआ है ! सो आज राय श्री शंकरकी कोठी में उनके निमित्त स्वयंवर रचा गया है, वहां पर वड़े वड़े आर्यमहाशय इकठे हुए हैं उनमें पंडित सुन्दर सहाय P. C. जजसाहव भी आये हुए हैं वह कौनसी और किस जगह पर है ?

ब्रह्मानन्द– बहेन ! उनसे तुमको क्या काम है ?

नंदिनी- आप मकान तो बतलाइये !

ब्रह्मानन्द- मकान तो यहा है ! चलो अंदर (यह सुनकर दोनों जनी अंदर चली गईं और पीछे पीछे ब्रह्मानन्द भी पहुंच गया. सभा मंडप में बैठे हुए महाशयों को तथा बीचमें खड़ी हुई 'माया' को देखकर)

दया-और-नंदिनी- (आंखों से आंसू बहाती हुई गाती है)

"क्या दुख कहूं मैं तुम से ये ऐ जनाव मन ! ।
दुखियाके दुःखको सुनता है क्या कोइ जनाव मन ! ॥१
सोला वरसकी छोड़ मुझे मरगया खाविंद ।
कैसे निबाहूं हाय ये जोबन जनाब मन ! ॥ २
उठती है आग तनमें मेरे हाय हाय हाय ! ।
कैसा जुल्म ये होता है हम पर जनाब मन ! ॥ ३
जी चाहे नर करे विवाह चार पांच या कई ।
क्या नारियोंने है गुनाह किया जनाव मन ! ॥ ४
आज्ञाभी दी है वेद में करने नियोग की ! ।
होता न अमल इसपे कहो क्यों जनाव मन ! ॥ ५
रांडे न रहें दुनियां में करिये उपाय ये ।
सुनना मेरी पुकार ये अहले जनाव मन ! ६

दया- महाशयो ! सभासदो ! बड़ा अफसोस है कि, आप जैसे प्रतापी पुरुष भी वेद की मर्यादाको नहीं चला सकते!

नंदिनी- सुज्ञ महाशयो ! मुझे शोकसे कहना पड़ता है कि आप जैसे इन्साफ पसंद आदमी भी बेइन्साफी करनेको तैयार हो जावें तो हमारे जैसी अनाथ विधवायें

किससे पुकार करें! संसारमें अग्निको शांत करनेके लिये जलका ग्रहण किया जाता है, यदि जलमेंसे ही अग्नि धद्कने लग जावे तो फिर क्या उपाय ? (लंबा-सा सांस लेकर) हा दैव! अब तो स्वामीजी भी मर गये! नहीं तो उन्हींके दरबारमें अपने इन्साफके लिये पुकार करतीं!

"एक नारिके मरत नर, दूजो करत विवाह।
तरुण त्रिया बिन पुरुषके, कैसे करे निवाह॥ १"

दया– दयावान् महाशयो! गजबकी बात यह है कि, आप लोग अच्छी तरह जानते हुएभी कुछ ध्यान नहीं देते पुरुषोंसे आठ गुणा काम स्त्रियोंमें ज्यादा होता है इस लिये आप साहिबोंको कुछ विचारना चाहिये मेरे ख्या-लमें आप लोग सिर्फ आर्य नामको धारण कर "स्वा-मीजी" के पैरो (शिष्य) बन जगह जगह आर्य धर्मके फैलानेकी फोकी तुनतुनी बजाते फिरते हो! सो हमारी समझमें यदि ऐसा नहीं तो क्या हमारी यही हालत होती ? हरगिज़ नहीं! "स्वामीजी" ने हमपर अपनी तरफसे उपकार करनेमें कुछ कसर नहीं रखी! मगर आप लोगोंने कलयुग महाराजसे ऐसी प्रीति लगाई है कि जिसकी वजहसे रात दिन सिवा आँसू बहानेके और कुछ सूझताही नहीं! साहिबो सुनो!

"जबसे पती अदमको सिधारा हजार हैफ़!।
तबसे रही न कोइ तमन्ना हजार हैफ़॥ १

वह माहरू जुदा है तो जीभी उदास है ।
है रात चांदनी शबे यज़्दा हजार हैफ़ ॥ २
मैले कुचैले कपड़े हैं चेहराभी ज़र्द है ।
अब संदली नहीं वुह दुपट्टा हजार हैफ़ ॥ ३
पट्टी नहीं जमीं न निकाली गई है मांग ।
कानोंमें अब नहीं कोई बाला हजार हैफ़ ॥ ४
सुनिये तबीब मेरे मरज़का नहीं कोई इलाज ।
मुझसे जुदा है मेरा मसीहा हजार हैफ़ ॥ ५
तारीक हो गया है मेरी नजरमें जहां ।
जबसे जुदा है रूफ मुजफ्फा हजार हैफ़ । ६
सौदा हो जिसको जुल्फ परीशान यारका ।
क्यों कर वो हो इलाजसे अच्छा हजार हैफ़" ॥७

(इस प्रकार 'दया' और 'नंदिनी' का गाना और बोलना सुनकर सभा में बैठे हुए सब महाशयों के दिल पिघल उठे और एक दूसरे के कानमें काना फूसी करने लगे कि– देखो ! क्या सुरीला आवाज है ! क्याही चांदसा मुखड़ा है ! क्या ही उछलता यौवन ! मगर अफसोस है कि हमारे आर्य धर्मके होते हुए भी ये इस प्रकार पतिके विना रझलती नजर आती हैं ! इतने ही में 'नंदिनी' पं० सुन्दर सहाय जज से)

क्या जजसाहब आप ही हैं ?

जज्जसाहब– हां ! परमेश्वरकी कृपासे !

नंदिनी– अफसोस है कि परमेश्वरने आपको इतने बड़े रुतबे पर पहुचाया मगर इतना तो बतलाइए कि आप

गवरमेन्ट सरकारकी इजलासमें बैठकर भी क्या एसाही न्याय करते हो ?

जज्जसाहब- क्यों ?

नंदिनी- यहां तो मैं इन महाशयों मे वैठे हुए आपको अन्याय करते देखती हूं ! यहां तो आप अपने धर्माचार्य "स्वामीजी"के वचनोंका अनादर ही करते दिखाइ देते हो !

जज्जसाहब- अरे यह क्या कहा ? क्या मुझे यहां वैठे हुए अन्याय करते देखती है ?

नंदिनी- वेशक !

जज्जसाहब- कैसे ?

नंदिनी- आप जरा अपने दिलमें सोचियेगा तो आपको स्वयं ही मालूम हो जायेगा. (मायासे) वहन ! तुम्हारा क्या नाम है ?

माया- मेरा नाम 'माया' है.

नंदिनी-वहन ! मैने तुम्हारा नाम ही सुनाथा तुम्हे देखा न था !

माया- मैंने भी तुमको आजही देखा है !

नंदिनी- बहन ! तुमको यह उचित नहीं !

माया- यह क्या कहा ? याद रखना जमीनका आसमान और आसमानकी जमीन क्यों न बन जाये मगर अपने परम गुरु परम हंस परिव्राजकाचार्य श्रीमद्दयानंद सरस्वती महाराजके कथनसे एक कदमभी विपरीत चलना मैं अपने लिये पाप समझती हूं ! परमेश्वर जानता है कि इस वक्त तुमको देखकर मेरा दिल टुकड़े टुकड़े होता

जाता है ! (आंखमें आंसू लाकर) मगर तुम मत घब-
डाओ ! मैं तुम्हारे लिये शीघ्रही अपने विवाहके बाद
किसी " नियोगी " पुरुषकी तलाश करूंगी !

दया- बाईजी ! बस करो निकम्मा झूठ बोलनेसे क्या फायदा ?

माया- अच्छा तो क्या मैं झूठ बोलती हूं ?

दया- क्या झूठ बोलनेके सिर सींग होते हैं ? आपही तो
कहती हो कि " स्वामीजी " के कथनसे विपरीत चल-
ना मुझे पाप है और फिर सबके सामने विपरीत चल
रही हो ! क्या कहना है आपकी सत्यताका !

माया- हैं ! हैं ! यह तुम क्या कहती हो ? (इतना कहकर
अपने मनहीं मनमें विचार करने लगी)

नंदिनी- विचार क्या करती हो ? क्या " स्वामीजी " का
लेख याद नहीं आता ?

माया- बहन ! सच कहती हूं मुझे इसवक्त " स्वामीजी "
का लेख बिलकुल याद नहीं आता !

दया- (नंदिनीसे) बहन ! इस वक्त इनको कहासे याद
आवे ? इनका मन तो इसवक्त सामने खड़े हुए उस
आर्य छबीलेमें गया हुआ है ! परंतु आश्चर्य है कि, दूस-
रेका हक मारनेमें भी इसवक्त इनको नेकी व बदीका
ख्याल नहीं है ! अब तो जब तुमहीं " स्वामीजी " का
लेख निकालकर इनके सामने रखोगी तोही इनको
याद आवेगा !

नंदिनी- (मायासे) क्यों बाईजी साहब ! दिखलाऊं क्या ?

(नंदिनीकी बात सुनकर 'सत्यार्थप्रकाश' हाथ में लिये खड़ी खड़ी सोचती हुई और कभी सभासदोंपर, कभी ब्रह्मानन्दपर, कभी दया और नंदिनीपर, कभी अपने बापपर और अपने दादेपर नजर डालती हुई मायाको देखकर फिर) बहन ! ऐसा क्या बड़ा भारी विचार करती हो लाओ सत्यार्थप्रकाश मुझे दो ! (मायाके हाथ से 'सत्यार्थप्रकाश' लेकर झटपट पृष्ठ ११५ निकालकर) " द्विजोंमें स्त्री और पुरुषका एकही वार विवाह होना "वेदादि शास्त्रो में लिखा है द्वितीयवार नहीं कुमार और "कुमारी का ही विवाह होनेमें न्याय और विधवा स्त्रीके साथ "कुमार पुरुष और कुमारी स्त्रीके साथ मृतस्त्री पुरुषके "विवाह होनेमें अन्याय अर्थात् अधर्म है" (पंडित मोहनपालसे) क्यों पंडितजी साहब ! ठीक है न !

पं० मोहनपाल– भला इसे कौन बे ठीक कह सकता है ? मैंने खुद ही इस मुताबिक कई नियोग और विवाह कराये हैं !

दया– अजी पंडितजी महाराज ! तो क्या यहां ही आकर आपकी अक्ल चक्कर खागई जो "स्वामीजी" के कथन को भूल गये ?

नंदिनी– (दयासे) बहन दया ! मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि 'माया' ने पंडितजी की मुट्ठी गरम करादी है (जजसाहबसे) रायसाहब ! अब आपको मुन्सफी का Robe (चोगा) उतार कर पंडितजीसे पूछना चाहिये !

सभाके सब लोग— (जज्जसाहब और पंडित हरदत्त, शिवदत्त आदिकोंसे) भाईसाहब! "दया" और "नंदिनी" का कहना बिलकुल ही ठीक है! बेशक हम लोगोंने "स्वामीजी" के कथनको भुलाकर अन्याय किया है "स्वामीजी" के सिद्धान्तके मुताबिक "ब्रह्मानन्द" का विवाह कुमारी कन्याके साथ नहीं हो सकता! "माया" के लिये किसी दूसरे कुंआरे आर्य नवयुवककोही ढूंढना चाहिये!

ब्रह्मानन्द—(माया तर्फ इशारा कर धीरेसे) देखना संभलना! यह तो दुनियां ही उलट चली! अपना दिया वचन याद रखना! मुझे विधवा रांडके साथ विवाह करना बिलकुल मंजूर नहीं है!

दया— (ब्रह्मानंदसे) साहब! मैं भी सुन रही हूं! इसका नाम आर्य धर्म नहीं है! "स्वामीजी" का यह कथन भी नहीं है इस लिये जरा सोच समझकर ही अपनी अकलका बाइसीकल चलाना! क्या कभी कानका मोतीभी नाकमें शोभता है? इस लिये अपनी आँखे फाड़कर 'माया' पर मैस्मॅरिज़म न कीजीये! जरा रहमका जाम पीकर हमपर ध्यान दीजीयेगा! (मायासे) बाईजी! ईश्वरके वास्ते माफ कीजीयेगा! आपके लिये कारे पुरुषोंका घाटा नहीं! मगर हम सरीखी दीन दुखिया राँड विधवाओंके लिये "ब्रह्मानंदजी" जैसे रंडवोंका मिलना आज कलके ज़मानेमें बड़ा मुशकिल हो रहा है

(सभासदों और पंडित मोहनपालसे) क्यों साहब ! आपकी रायमें क्या आता है ?

जज्जसाहब- (पं० मोहनपालसे) क्यों पंडितजी ! अब क्या विचार है ? और क्या करना चाहिये ?

नंदिनी- (झुँझलाकर) अजी जज्जसाहब ! पंडितजीकी जाने बला ! हमको तो एक एक घड़ी एक एक वर्षकी तरह वीत रही है ! इसवक्त इनको तो रिशवतका ऐसा नशा चढ़ा हुआ है कि "स्वामीजी" का लेख पढ़ सुनानेमेंभी हिंचकूं हिंचकूं करते हैं ! (फिर मायाके हाथसे सत्यार्थप्रकाश लेकर पृष्ठ ११५ निकालकर-) " जैसे "विधवा स्त्रीके साथ पुरुष विवाह नहीं किया चाहता वैसे "ही विवाहे और स्त्रीसे समागम किये हुए पुरुषके साथ "विवाह करने की इच्छा कुमारी भी न करेगी "

दया- (नंदिनीसे) क्यों क्यों ! चुप क्यों कर गई ! पढ़ पढ़ आगें और पढ़ !

नंदिनी- वहुत अच्छा ! "जब विवाह किय हुए पुरुषको "कोई कुमारी कन्या और विधवा स्त्रीका ग्रहण कोई कु- "मार पुरुष न करेगा तब पुरुष और स्त्रीको नियोग कर- "नेकी आवश्यकता होगी " फिर ११५ पृष्टकी अंतिम "पंक्ति- " और यही धर्म है कि जैसेके साथ वैसे हीका "संबंध होना चाहिये."

– (दया और नंदिनीके कानमें) बहनों ! "स्वामीजी"

के इस कथनको वो कौन आर्यसमाजी है जो न माने ? और इसपर अमल न करे ? मगर तुम जानती हो कि अभीतक " स्वामीजी " के मतकी जड़ अच्छी तरहसे नहीं जमी और जहां कहीं थोड़ी वहुत जमी है वहां पोप धर्मोपदेशक सनातन धर्मी आदि सवके सवही पीछे लग तालियां वजाते हैं और मैं चाहती हूं कि किसी तरह विधवाओंका दुःख दूर हो जावे ! और नियोगके प्रचार द्वारा " स्वामीजी " के कथनका पालन करूं और लोगोंसे कराऊं ! मैं वचन देती हूं कि मैं तुम्हारे लिये शीघ्रही अपने विवाह के वाद अच्छे उत्तम कुलीन वावूओं (दोनोंके लिये दो) की अपने पति द्वारा तलाश करवा कर आपका दुःख दूर करूंगी ! मगर इसवक्त यहां आप माफ ही रखो तो मैं ताजिन्दगी के लिये तुम्हारा ऐसान मानूंगी ! " स्वामीजी " की प्रगट की हुई यह कारवाई नवी नवी होनेसे किसी को अच्छी नहीं लगती ! और उसमें भी मेरे वापको तो देखो कैसे मांथेमें त्रिवड़ियां डाल, लाल लाल आंखे कर, दांत पीस होठ चवा रहा है ! इस लिये इसवक्त तुमको मेरे विवाहमें विघ्न डालना ठीक नहीं है ! "ब्रह्मानंद" को मैं पसंद कर चुकी हूं ! तथा इसमें एक औरभी दूरंदे-शीकी वात है कि शारदाचंद्रके घरमें स्त्री पुरुष छोटे वड़े मिलाकर वत्तीस-तेतीस जने हैं उन्हें भी मैं जाकर " स्वामीजी " के आर्य रहस्यका उपदेश देके वेद मार्ग पर चलाऊंगी ! रहा " स्वामीजी " का यह कथन

कि-" जैसेके साथ वैसेहीका संबंध होना " सो तुम सामनेहीं देख लो ! करीबन वीस सालका नौजवान, लिखा पढ़ा है इस वास्ते मैं इसके लिये और यह मेरे लिये काविलही है !

दया- बहन माया ! तुम क्यों निकम्मा " स्वामीजी " का नाम ले लेकर और अपने मन चाहा सो उनके कथनका इसारा वतला वतलाकर अपने आपको " स्वामीजी " के मंतव्य पर चलनेवाली सिद्ध करना चाहती हो ? अगर मानना है तो " स्वामीजी " का लिखा अक्षर अक्षर मानो वरना ढुंढियोंकी तरह (जैसे वह लोग भगवत मूर्तिपूजक श्वेतांबरी जैनोंके साथ विरोध करते हुए एकही शास्त्रमें लिखी हुई वातोंमेसे जो मनको अच्छी लगी वो मान ली और जो न अच्छी लगी व छोड़ दी) तुमभी करती हो ! सो बिलकुल भूल भरी वात है ! याद रखो ! ऐसा करनमें जैसे भगवत मूर्त्तिपूजक जैन श्वेतांवरीयोंसे जगह जगह वहेस मुबाहशः[१] (शास्त्रार्थ) में ढुंढियोंको नीचा देखना पड़ता है वैसेही कहीं आपको भी न देखना पड़े इस लिये बहन ! " स्वामीजी " का कथन सर्वथा ही तुमको मान्य करना चाहिये ! अगर तुम अभी इस प्रकार अपने बापसे या अन्य किसी संबंधिओंसे डरती हो तो हम कैसे यकीन करसके कि तुम " स्वामीजी " के

१) देखो " ढुंढकमत पराजय "

कथनका प्रचार अपने सुसरालमें जाकर करोगी! क्या! इसी "ब्रह्मानंद" की बड़ी बहन "अंगिरा" जिसे अभी एक सालही विधवा हुएको हुआ है उसका नियोग किसीके साथ कराओगी? मुझे तो यकीन नहीं के उस घरमें तुम्हारा पंथ चले! हां इतना तो जरूर है कि जहां तुमने उनके घरमें 'सत्यार्थप्रकाश' खोला कि वहां ही तुम्हारा निरादर हुआ और 'सत्यार्थप्रकाश' के पत्रे उखाड़ उखाड़कर उनसे 'अंगिरा' और 'मालती' जैसी औरतें घरमें छोटे छोटे लड़के लड़कियोंको देकर पतंगे बनवा उड़ा खिलायेंगी! इस लिये तुम 'ब्रह्मानंद' से ऐसे ऐसे सवाल पूछो कि वो जवाब न दे सके! बस फिर इन बैठे हुए बड़े बड़े आर्य महाशयोंके समक्ष हम दोनोंमें से एक इसके साथ नियोग करलेवेंगी! तुम्हारे लिये कुंआरे पुरुषोंका क्या घाटा है? मुशकिलतो हम रांडो को है! देखो! तुमको अगर "स्वामीजी" के कथन का पास है तो तुम अपने लिये पचीस वर्षका वर तलाश करो! यह तो अभी बीसकाभी पूरा नहीं है तुम्हारे लिये "स्वामीजी" के कथनानुसार कुंआरा वर होना चाहिये ये तो रंडवा है! देखो! "स्वामीजी" का कथन है कि—"जैसे लड़के पूर्ण ब्रह्मचर्य और पूर्ण विद्या "पढ़ ज्वान होके अपने सदृश कन्यासे विवाह करें वैसे "कन्या भी अखंड ब्रह्मचर्यसे पूर्ण विद्या पढ़ पूर्ण युवती "हो अपने तुल्य पूर्ण युवावस्थावाले पतिको प्राप्त होवे"

(संस्कार विधि पृष्ठ ८८)

बताओ तो "ब्रह्मानन्द" ने किस गुरु कुलमें या किस पाठ शालामें रहकर वदाध्ययने और ब्रह्मचर्य पालन किया है ? फर्ज करो कि कियाभी होतो तुम्हारे पास इसके (ब्रह्मानंदके) ब्रह्मचर्य पालने का और तुम्हारे ब्रह्मचर्य पालनेका ब्रह्मानदके पास क्या सबूत है ? फिर और भी लो—संस्कार विधि पृष्ठ ९२ में "स्वामीजी" कथन करते हैं कि " २०–२१–२२– और २४ वर्ष "की स्त्री और ४०–४२–४६ और ४८ वर्षका पुरुष हो "कर विवाह करे तो वह सर्वोत्तम है" अब कहो! यहां तो तुम्हारी उमर पंद्रा (१५) वर्षकी, और ब्रह्मानन्दकी करीबन उन्नीस (१९) वर्षकी है ! अब "स्वामीजी" के वचनों पर चलने वाली तुमको, और ये आर्यसमाज के अग्रेसर जो उपाधिओंकी बडी २ पूछें लगाकर सभा में वैठे हैं इनको क्या शरम नहीं आती ? अपने गुरुके वचनसे जो करना सो उलटा ही उलटा करना और फिर "स्वामीजी" के कट्टर चेले कहलाना ! क्या झूठ बोलने और लोगोंसे दगावाजी करनेके वास्ते "स्वामी-जी" ने कहीं आज्ञा दी है ? या ऐसा करनेसे पुण्य होता है ? जरा सोचो तो सही "स्वामीजी" ने तीन प्रकार के विवाह लिखे हैं अधम, मध्यम और उत्तम ! सो तुम्हारा 'ब्रह्मानंद' के साथ जो संबंध हो रहा है वो न उत्तम है, न मध्यम और नाहीं अधम !

दे० – (दयासे) वहन ! ठहर ठहर मुझे "स्वामीजी"

की एक बात और भी याद आगई ! पहले उसे 'माया' को सुना देने दो !

दया- अच्छा तूं भी सुनाले ! मगर यहां इसवक्त 'माया' को अपना सुनाना निकम्मा है, क्यों कि 'माया' के दिल में तो 'ब्रह्मानंद' बस गया है ! अब "स्वामीजी" के लेख पर तो क्या साक्षात् "स्वामीजी" भी इसवक्त आजावें तो भी यह मानने की नहीं है !

नंदिनी- यह मानो या न मानो मगर हमको "स्वामीजी" का कथन छिपाना ठीक नहीं है ! वरना इसवक्त इस भरी सभामें बैठे हुओंमेंसे किसी न किसीको यहांसे उठकर बाहर निकलेनकी देर है कि, कोई तो अखबारोंमें लंबे लंबे कालम् लिख भेजेगा और कोई ट्रेक्ट बनाकर बाटेगा ! और कोई जगह जगह लेक्चरोंमें सुनायेगा कि-पंडित हरदत्तकी लड़की 'माया' का विवाह शारदाचंद्रके लड़के 'ब्रह्मानन्द' के साथ बहुत अच्छी तरहसे हुआ ! (पंडित मोहनपालकी तर्फ हाथ करके) औरोंकी तो क्या बात ! हमने आर्य विधिसे विवाह कराया-इस बातको सुनाते हुए ये पंडितजी भी फूले नहीं समायेंगे ! इस लिये "स्वामीजी" का लेख इन पंडितजीसे ही पढवाऊं (पं० मोहनपालसे) पंडितजी साहब !

मोहनपाल- हाँ बहन ! क्यों ?

नंदिनी- ये लीजीयेगा "सत्यार्थप्रकाश" और इसके पृष्ठ ११२ में (उंगलीसे बताकर) यहांसे पढ़कर जरा ऊं-

चेसे सुनाइयेगा ताकि सबको मालूम हो जावे कि हमारे "स्वामीजी" महाराजका क्या कथन है और हम लोग करते क्या हैं ? और लोगोंसे कराते क्या हैं ? पंडितजी साहब ! ये आप खूब अच्छी तरहसे ख्याल रखियेगा कि आप जितने यहां पर बैठे नजर आते हो केवल लोक दिखावा मात्र केही आर्य बन रहे हो ! इतना हीं नहीं बलकि "स्वामीजी" के नामको कलंकित कर रहे हो ! क्यों कि आप कोई भी काम "स्वामीजी" के कथनानुसार नहीं करते। इसी लिये हरएक धर्म वालेसे जहां देखो वहां नींचा ही देखते हो ! अगर आप लोग "स्वामीजी" की लकीर के फकीर बन, अपनी जान कुरबान कर मैदानमें निकल, सरे बाजार "स्वामीजी" के कथनानु सार लज्जाको हमारी तरह उतार कर बाबा दयानंदका झंडा फकाओ तो कोई भी धर्मवाला आपके सामने चूँतक कर जावे तो हमें कहना ! हम अब तक सिर्फ आप लोगों की वजह से ही आज दिन तक (पति मरेको तीन महीने गुजर जाने पर) नियोगी पुरुषके विना फिरती हैं ! अगर हमको मालूम होता कि ये बड़े बड़े अग्रेसर केवल नाम मात्रके ही आर्य बने फिरते हैं तो हम आज तक कभीकी "स्वामीजी" के कथनानुसार नियोग करलेती ! (दया बीचमें हीं बात काट कर) अरे नियोग तो क्या अब तक पेटमें तीन महींने का चारों वेदोंको मनन करने वाला एक एक पुत्र भी धारण कर लेतीं ! अगर गर्भ धारणकी अवस्थामें

भोग (हम् विस्तरी) की इच्छा पैदा होती तो " स्वामीजी " के– " गर्भवती स्त्री से एक वर्ष समागम न "करने के समयमें पुरुष वा स्त्री से न रहा जायतो किसी "से नियोग करके उसके लिये पुत्रोत्पत्ति कर दे" (सत्यार्थप्रकाश स० १८८४ पृष्ट १२०) इस कथनानुसार ही अपना काम वना लेती !

नंदिनी– (दयासे झिड़ककर) वंसरी ! चुप कर ! तुझे बोलने का विलकुल भी वकूफ नहीं है ! देख इसवक्त इस पंक्ति पर इन सभासदों में से किसीका भी ध्यान नहीं गया वरना अभी पकड़ी जाती ! और साथ ही ' स्वामीजी ' को लाज लगवाती !

दया– झिड़कती क्यों हो ? " स्वामीजी " की लिखी हुई पंक्ति में, किसीकी माँने घँस खाई है जो गलती निकाल सके ! तूं ही वता इसमें कौनसी पकड़ने की वात हैं ?

नंदिनी– अव तूं जरूर ही क्या " स्वामीजी " की गलती को प्रगट कराना चाहती है ? अगर ऐसाही है तो ले मेरे वापका क्या विगड़ता है अगर इस सभामें कोई अकल मंद–चालाक आदमी वैठा होगा तो अच्छा ही है ! आगे के लिये जो " सत्यार्थप्रकाश " छपेगा उसमें यह गलती निकाल डालेगा !

दया– तुम क्यों गलती गलती पुकारती हो ? अगर है तो कह वताओ वरना निकम्मी वात मत वढ़ाओ !

चंदिनी–अरी तो ले ! " स्वामीजी " ने लिखा है कि

"गर्भवती स्त्रीसे एक वर्ष समागम न करने के समयमें पुरुष "वा स्त्रीसे न रहा जाय तो किसीसे नियोग करके उसके "लिये पुत्रोत्पत्ति करदे " अब सोच कि स्त्रीके पेटमें एक गर्भ तो पतिका स्थापन किया हुआ है ही ! और उस वक्त भोग करनेकी इच्छा पैदा हो गई गर्भावस्थामें अपने पतिसे तो भोग करना ही नहीं ! क्यों कि " स्वामीजी " ने " स्त्रीसे न रहा जाय तो किसीसे " इस वाक्यसे निषेध किया है ! तो सिद्ध हो गया कि नियोगीसे भोग करे ! अच्छा अब फिर सोच कि, जब दूसरेसे भोग करेगी तो जो बिचारा पेटमें आ बैठा है क्या उसे तकलीफ न होगी ? या उसको अंदर ही अंदर सिकुड़कर बैठ जानेके लिये कोई दूसरा स्थान दे दिया जावेगा ? खैर फिर सोच ! कि, कभी किसीको आज तक ऐसा हुआ भी है कि जिसके पेटमें चार पांच महीनेका गर्भ हो और फिर भोग करनेसे दूसरा गर्भ रह जावे ? फर्ज कर कि " स्वामीजी " के कथनानुसार किसी गर्भवतीने अन्य किसीसे नियोग किया और कदापि पेटमें रहे बिचारे कोमल ऊंधे शिर लटके हुए बालकके सिरमें नियोगी जबरदस्त पुरुषसे कोई आघात पहुंच जावे तो बिचारी दूसरा गर्भ धारण करती करती पहलेसेभी हाथ धो बैठेगी ! मैं अच्छी तरह जानती हूं और बहुतसी

दाईयोंसे भी सुना है कि गर्भवती स्त्रीस भोग कभी नहीं करना और शास्त्रकारभी ऐसा काम करनेवालेको दोषी वताते हैं! अच्छा फरज़ कर कि यहभी मान लिया जावे कि एक गर्भपर दूसरा (नियोगीसे) भी रह गया तो फिर यह वताकि जव पांच महीनेका गर्भ धारण करने वाली स्त्रीने नियोगी पुरुषसे भोग करके दूसरा गर्भ धारण किया तो पहला जो पांच महिनेका है वोतो और चार महीने गुजरने पर वह जन देवेगी, लेकिन जो पीछे नियोगीसे धारण किया है उसे अगले पांच महीने वाद जनेगी या एक साथ ही? (एक नौ महींनेका और एक चार महानेका) जनेंगी ?

अच्छा! अव एक वात औरभी है कि जो "स्वामीजी" ने ' संस्कार विधि ' के पृष्ट ४६ पंक्ति १९ में लिखा है कि–" इन दो मंत्रो को वोल के पति अपनी गर्भिणी पत्नी के गर्भाशय पर हाथ धर के यह मंत्र वोले " ले अव तुंहीं अपनें मनमें अच्छी तरहसें विचार कर कि " गर्भिणी पत्नी के गर्भाशय पर हाथ धरके " यह जो काम है वह उस स्त्री के पति और नियोगीजी दोनों हीं करें या केवल पति ही करे ? क्यों कि उसके अंदर तो दो वटेरे हैं एक नियोगीजीका और एक अपने पतिका! और " पुंसवन " संस्कार तो जरूर ही होना चाहिये! कहीं " स्वामीजी " ने यह वयान किया याद नहीं है कि नियोगी के गर्भका पुंसवन संस्कार नहीं होता है ! वलकि " स्वामीजी " के न्याय से तो अवश्य ही होना

चाहिये, क्यों कि " स्वामीजी " का संस्कार विधि में फरमान है कि " गर्भ स्थिति के ज्ञान हुए समय "से दूसरे वा तीसरे महींने में पुंसवन संस्कार करना "चाहिये जिससे पुरुषत्व अर्थात् वीर्यका लाभ होवे" वस सिद्ध है कि विवाहित पतिके गर्भ को जैसे वीर्य के लाभ की जरुरत है वैसेही नियोगी पतिके गर्भ को भी वीर्य के लाभ की जरूरत है वरना वो विनावीर्य (नपुंसक) आगेको किस काम आयेगा? हां! वेशक इतनी वातका ख्याल तो अवश्यहीं यहां हो सकता है कि यदि गर्भ में लडका होवे तो उसको तो 'पुंसवन संस्कार' से वीर्य-का लाभ वकौल "स्वामीजी" के होसकेगा मगर लडकी होवे तो उसके लिये क्या करना? कोई 'स्त्रीसवन' संस्कार वनालेना या उसकोभी वीर्यका लाभही होने देना? अगर ऐसा हुआ तो कुदरत से उलटा क्यों नहीं? इसका सोचना जरूरी मालुम होता है.

"स्वामीजी" के ख्याल में यह आयाही नहीं है वरना स्वामीजी चूकने वाले नथे! जवाकि गर्भस्थिति में भी हमारे (स्त्री वर्गके) लिये न रहाजावे तो नियोगी से हुकम देगये हैं तो क्या वे ऐसी वात में भूलते? कभी भी नहीं! मगर एक और भी टंटा वना रहता, अगर फरज करो "स्वामीजी" लडका लडकी के लिये जुदा जुदा संस्कार वनाजाते तो पेटमें लडका है या लडकी? उसके इम्तिहानके लिये भी कोई नयी डॉक्टरी विद्या उनको निकालने की जरूरत पडती!

क्यों अब मालूम हुआ कि "स्वामीजी" के पूर्वोक्त लेख में कितनी गलतियां हैं ? "स्वामीजी" ने जो औरतों के लिये दश पति करने की आज्ञा दी है सो दश के वीश क्यों न आकर जोर लगावें फिरभी पेटमें एक गर्भ के होते हुए दूसरा गर्भ नहीं रह सकता !!! अरी ! और भी इस में एक सवाल पैदा होता है कि, जो नियोगी के संभोग से गर्भ रहा है वह नियोगी को देदेवे यह बात "स्वामीजी" के— "स्त्री पुरुष से न रहा जाय तो किसी, से नियोग करके "उसके लिये पुत्रोत्पत्ति करदे" इसकथन से साफ जाहिर है. अब जरा सोच तो सही कि क्या कोई यह नियम ही है कि नियोगी से भोग करनेपर जरूर ही गर्भ रह जावेगा ? अगर फर्ज कर कि रहभी गया तो वो जरूर पुत्र ही होगा ? जो लडकी हो पडी तो फिर ? फिर तो पतिका और नियोगी जी का आपस में जगडा हो जानेका अंदेशा है ! क्यों कि नियोगी को तो "स्वामीजी" ने "पुत्रोत्पत्ति करदे" यही लिखा है और नियोगीजी भी "स्वामीजी" की कलम के मुताविक उससे पुत्रही मांगे गे ! पुत्री को कौन चाहता है ? मगर हां पुत्री की कदर उम्मेद है कि इस हालत में होजावेगी !

दया— (धीरसे) बस ! चुपकर चुपकर ! मुजे मालुम हो गया अब आगे के लिये मैं सोच समज कर ही बोला करुंगी. मुजे क्या मालूम कि "स्वामीजी" भी भूला करते

थे ! खैर और भी कोई ऐसी गलतियें अपने वनाये हुऐ "सत्यार्थ प्रकाश" आदि ग्रंथो में कहीं कर गये हों तो वे भी वता छोड ताकि मुजे आगे के लिये ख्याल रहे !

नंदिनी– इसवक्त मौका ठीक नहीं है कि मैं तुजे "स्वामीजी" ने जहां जहां भुलें खाई हैं और विना विचारे अंड वंड लिख मारा है कह सुनाऊं ! क्यों कि यहां इस सभा में कितने एक अधकच्चें समाजी वेठे हुए हैं अगर सुनेंगें तो झट इस पंथको छोड देंगे फिर हमारा मनोर्थ भी पूरा न होगा ! और फिर ऐसे ऐसे-स्वयंवरभी अपनेको देखने न मिलेंगे ! इस लिये फिर कभी निश्चिन्त होकर एकांतमें कहुंगी.

इतनी वात "नंदिनी" और "दया" की परस्पर होनेके वाद "नंदिनी" अपने प्रस्तुत विषयको लेती हुई "माया"से) वहन माया ! सुनो पंडित मोहनपालजी "स्वामीजी"के कथनको सुनाते हैं सुनकर विचारनाकि, मैं "स्वामीजी" के कथन को कितनाक मानती हुं और उसपर कितनाक अमल करती हूं ?

पंडित मोहनपाल–("सत्यार्थप्रकाश" के पृष्ट ११२ को देख मन ही मनमें) अरे ! यह "स्वामीजी"ने क्या लिख दिया है? मेरी तो समझमें हीं नहीं आता ? अस्तु ! अव पढकर सुनाये विना तो छुटकारा नहीं ! (प्रकाशमें) लो बहन ! अव सुनो !

"जिस स्त्री वा पुरुप का पाणी ग्रहण मात्र संस्कार
"हुआ हो और संयोग अर्थात् अक्षत योनी स्त्री और
"अक्षत वीर्य पुरुप हो उनका अन्य स्त्री वा पुरुप के साथ
"पुनर्विवाह न होना चाहिये किंतु ब्राह्मण क्षत्रीय और
"वैश्य वर्णों में क्षतयोनी स्त्री क्षत वीर्य पुरुषका पुन र्विवाह
"न होना चाहिये" (सुनाकर नंदिनी से) वीवीजी!
मुजेही पहले इसका मतलव समजमें नहीं आया तो
ऊंचे से क्या सुनाऊ ? मैं सच कहता हूं कि
"स्वामीजी" ने वाजी वाजी जगह तो ऐसी गलती
खाई है कि, कुछ भी मत पूछो! आप तो लिखकर मर
गये मगर आफत हमारी जान को! जहां कहीं ऐसा
ऐसा अपना मन घडत ढकोंसला घसीट मारा है वहां
वहां हम लोगों को हरएक मजहब (मत) वालों से
नीचा देखना पडता है और लजाना पडता है! मगर
तुमको इस वक्त यह विपय चर्चना योग्य नहीं था!
खैर! जरा सन् १८८७ का " सत्यार्थ प्रकाश "
तो लाओ!

नंदिनी– मैं क्या "सत्यार्थ प्रकाश" हरवक्त वगलमें दवाये
फिरती हुं? यह सन् १८८४ वाला भीतो "माया"
से लिया है, इसके पास १८८७ का भी हो तो पूछ
देखो!

मोहनपाल–(मायासे) वाईजी! सन् १८८७ का "सत्यार्थ
प्रकाश" यदि यहां तुम्हारे पास हो तो दीजीये!

माया–(हाथसे बताकर) वो देखो सामने आलमारीमें सिर्फ आर्यधर्म (स्वामीजीके बनाये हुए) केही कुल ग्रंथ मौजूद हैं, जो चाहिये सो लीजीये.

नंदिनी–(यह सुन झट जा कर अलमारीमेंसे पुस्तक निकाल पंडितजीसे) पंडितजी साहब ! लीजीयेगा !

पं० मोहनपाल–लाओ बहन ! (सत्यार्थप्रकाशको हाथमें ले और पृष्ट ११० निकाल कर) " जिस स्त्री पुरुषका "पाणीग्रहण मात्र संस्कार हुआ हो ओर संयोग न हुआ "हो अर्थात् अक्षत् योनी स्त्री और अक्षत वीर्य पुरुप हो "उनका अन्य स्त्री वा पुरुषके साथ पुनर्विवाह न होना "चाहिये किंतु ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य वर्णोमें क्षत "योनी स्त्री क्षत वीर्य पुरुषका पुनर्विवाह न होना चाहिये " (अपने मनही मनमें) हत्तेरा भला हो ! यह क्या लिख मारा ? जहां देखो वहां नन्ना हीं नन्ना !

माया–(पंडितजीके हृदयगत भावको समझ कर) पंडितजी साहब ! किस विचारमें पड गये हो ? जरा शुद्धिपत्र तो देखो पहला नकार अशुद्ध है !

पं० मोहनपाल–(शुद्धिपत्र देखकर) हां बीबीजी ! ठीक है पहले जो लिखा है कि " न होना चाहिये " उसके ठिकाने " होना चाहिये " एसा ही है (नंदिनीसे) हां लो बोलो बीबी नंदिनी ! इसमें आपका क्या शक है ? और हम यहां पर " स्वामीजी " के कथनसे क्या उलटा करते हैं ?

नंदिनी-(मनहीं मनमें) वाहरे पंडित ! क्या कहना है तेरी पंडिताई का और क्या कहना है तेरी समझ का (प्रगट) पंडित जी साहव ! अच्छा तो क्या आप अभीतक समझे ही नहीं कि, हम " स्वामीजी " के कथन से क्या उलटा करते हैं और क्या कराते हैं ?

(वीचमें 'दया' धीरे से 'नंदिनी' के कान में) वीवी ! उलटा करना कराना इन के हाथ में नहीं वो तो पैसा करा रहा है ! पैसा तो ऐसी चीज है कि पंडितजीसे जो चाहे सो करावे !

पं. मोहनपाल-(दोनो कों काना फूसी करते देख) क्यों वीवी ! क्या है ? ऊंचे से कहो न !

नंदिनी-नहीं नहीं कुछ नहीं ! आप अपना कहिये ! कि पूर्वोक्त लेख से विपरीत आप यहां कुछ नहीं करते कराते ?

पं. मोहनपाल-अरे वीवीजी ! तुमतो वडी ही झंझट वाज मालूम देती हो ! इसमें एसा कौनसा वडाभारी गुप्त रहस्य है कि, जिसका मैं मतलव अवतक नहीं समझा ! " स्वामीजी " ने ठीक तो लिखा है कि " जिस स्त्री "व पुरुप का पाणी ग्रहण मात्र संस्कार हुआ हो और "संयोग न हुआ हो उनका अन्य स्त्री पुरुप के साथ "पुनर्विवाह होना चाहिये " इस में " स्वामीजी " ने आगे और खुलासा किया है कि " ब्राह्मण क्षत्री और "वैश्य वर्णों में क्षत योनी स्त्री और क्षत वीर्य पुरुष का "पुनर्विवाह न होना चाहिये " ठीक ही तो है !

नंदिनी-(ताली वजाकर और हँसकर मायासे) वीवीजी साहव ! आप भी क्यों जानवूझ कर चुप किये खडी हो ? हमारा कुछ जोर थोडा ही है होगा तो वही जो तुम्हारे दिल में वस रहा हैं मगर सच कहो कि यहां " स्वामीजी " के कथन से विपरीत कार्रवाई हो रही है या नहीं ?

माया-(पंडित मोहनपालसे) पंडितजी साहव ! वीवी नंदिनी का कहना तो ठीकही है, भले हम करे चाहे किसी तरह ! " स्वामीजी " के कथनमें यह तो साफ है कि " ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य वर्णोंमें क्षत योनी स्त्री और "क्षत वीर्य पुरुषका पुनर्विवाह न होना चाहिये " तो यहां अव आप सोचियेगा कि मैं तो क्षत योनी नहीं हु मगर ब्रह्मानंद तो क्षत वीर्य है ही इसमें जराभी शक नहीं ! क्यों कि उसके तो तीन सालका एक लडका है यह सवको मालूम ही है ! (नंदिनी और दयासे वडी नरमाईके साथ) वहनजी ! इस वक्त तुम किसी तरह मेरा इसके साथ विवाह हो जाने दो वादमें मैं तुम्हारे लिए कुछ इंतजाम जरूर ही करूंगी !

नंदिनी-वाईजी साहव ! फिर यूं सीधे रस्ते पर आओ ना ! यूं क्यों वार वार वांग देती हो कि मैं " स्वामीजी " के कथनपर चलती हूं और यूं कहा है ! त्यूं कहा है ! मैं यूं करती हूं. मैं " स्वामीजी " के लिखे मुताविक यूं करूंगी, त्यूं करूंगी ! वेशक तुमने इतना तो जरूर

" स्वामीजी " के कहे मुताबिक किया जो कि यह स्वयंवर इन आर्य महाशयों को इकट्ठे करके इन के सामने मन माने पति को पसंद कर उसकी परीक्षा ले विवाहकी तैयारी की है !

दया-(बात काटकर बीचमें) जीजी ! " स्वामीजी " ने तो लिखा है कि-" जिस दिन ऋतु दान देना योग्य "समझे उसी दिन " संस्कार विधि " पुस्तकस्थ विधि के "अनुसार सब कर्म करके मध्य रात्रि वा दश बजे अति "प्रसन्नता से सबके सामने पाणी ग्रहण पूर्वक विवाहकी "विधि को पूरा करके एकांत सेवन करें पुरुष वीर्य स्थापन "और स्त्री वीर्याकर्षण की जो विधि है उसीके अनुसार "दोनों करें " * सो बहन ! तुम "माया" से पुछो तो सही कि इन को यह विधि विवाहवाले दिन ही करनी होगी ! सो क्या इन्हों ने " स्वामीजी " के कथनानुसार वीर्याकर्षण आदिकी विधि भी सीख ली है याकि नहीं? और " स्वामीजी "का कथन है कि " जिस दिन ऋतु "दान देना योग्य समझें उसी दिन " संस्कार विधि " "पुस्तकस्थ विधिके अनुसार सब कर्म करके मध्यरात्री "वा दश बजे अति प्रसन्नतासे सबके सामने पाणीग्रहण "पूर्वक विवाहकी विधिको पूरा करके एकांत सेवन करे" सो ऋतुदान देना " ब्रह्मानन्द "ने किस दिन स्वीकार किया है? और विवाहके अनंतर 'माया' के बापके घरपर

---

* सत्यार्थ प्र० पृष्ठ ९३.

ही एकांत सेवन करना मंजूर किया है या अपने घर ला कर ? मगर नही " स्वामीजी "ने तो यही लिखा है कि " विवाहकी विधिको पूरा करके एकांत सेवन करे " इस से सिद्ध होता है कि लडकीके पिताके घर पर ही रातके दश वजे अति प्रसन्न से सवके सामने पाणीग्रहण पूर्वक एकांत सेवन करें !

ब्रह्मानंद- (पंडित मोहनपालसे) पंडितजी साहव ! यह क्या इन्होंने आपसमें घसरपसर लगा रखी है ?

पं० मोहनपाल- क्या कहें ? इन्होंने तो " स्वामीजी " का शरण लेकर हम तुम और यहां वैठे हुए कुल आर्य सभासदोंको ही शरामिन्दा करना शुरु किया है ! अगर इनके कहे मूजिव " स्वामीजी "के लेखको माना जावे तो तुमको इस विवाहसे हाथ ही धोने पड़ते हैं ! इस लड़की (माया) से विवाह करने का तुम्हारा हक्क विलकुल नहीं सिद्ध हो सकता ! क्यों कि " स्वामीजी " का साफ लिखना है कि, द्विजो में क्षतवीर्य पुरुष या क्षतयोनी स्त्री का पुनर्विवाह नहीं हो सकता और आप के क्षतवीर्य होने में तो शकही नहीं ! " स्वामीजी " के कथनानुसार विधि विधान करना आपको भी मंजूर है और मायाको भी मंजूर है परंतु मुझे जरा कहने में संकोच होता है कि, मैं यहां पर किन वेद मंत्रोसे विधि विधान कराऊं ? क्यों कि विवाह और नियोग इन दोकी विधि तो

" स्वामीजी " ने फरमाई है, परंतु विवाह और नियोग से विलक्षण जो इसवक्त होता नजर आता है इस तीसरे प्रकार के संस्कारका न तो " स्वामीजी " ने कहीं नामही लिखा और नाहीं कहीं उसकी विधि ही बत-लाई ! यदि अन्यका अन्यही विधि विधान किया जावे तो हम तुम सबको प्रतिज्ञा भ्रष्ट होना पड़ता है ! इतनाही नहीं, किंतु " स्वामीजी " के लेख को भी कलंक लगाने वालों में हम गिने जाते हैं ! क्योंकि " स्वामीजी " ने कुमार कुमारी का विवाह और क्षतयो-नी स्त्री और क्षतवीर्य पुरुषका नियोग यह दोही बताये हैं, परंतु क्षतवीर्य पुरुष और अक्षतयोनी स्त्रीका तो मेलही नहीं लिखा ! आपही स्वयं विचार करलेवें ! क्यों कि आप भी तो दयानंदी कहलाते हैं ! और "स्वामीजी" के लेख को स्वीकारते हैं ! हां ! अक्षतवीर्य पुरुष और अक्षतयोनी स्त्रीका तो पुनर्विवाह हो सकता है ! बडे आश्चर्य की बात है कि आजतक किसी भी आर्यसमाजी ने इस बातका विचार नहीं किया ! कितने हीं आर्यों के घरोंमें वैदिक मर्यादा से विरुद्ध इसी प्रकार से विवाह हो चुके हैं; कितनेक तो मैंने अपने हाथसेही कराये हैं आप दूर मत जाइये इस सभामें बैठे हुए कितनेही महाशय ऐसे हैं कि जिनका क्षतवीर्य होने पर भी कुमारी कन्या के साथ विवाह हुआ है !

(पंडित सुन्दर सहाय जज साहबकी तर्फ इशारा कर के) आप इनसेही पूछ लीजीये !

ब्रह्मानंद–वाह पंडितजी साहव ! क्या पूछना है ? मेरी मृत स्त्री के फूफाजी लगते हैं, मैं खुद अच्छी तरह जानता हूं ! आपने खूब याद दिलाया ! जबकि इन्हों ने ऐसा काम किया है तो अब हमको डरही क्या है ? आप मत घवराइये !

पं० मोहनपाल– वेशक ! आपका कहना तो ठीक है, परंतु अन्याय तो अवश्यही है ! और साथ में " स्वामीजी " का लेखभी झूठा ठहरता है ! या हम तुम "स्वामीजी" के लेखसे विपरीत करने वाले सिद्ध हाते हैं.

जब कि " स्वामीजी " पुकार रहे हैं कि जैसेके साथ वैसेका ही संवंध होना धर्म है तो विचारीयेगा यहां तो " क्षतवीर्य पुरुष " के साथ कुमारी कन्याका विवाह होता है ! इस अधर्म अन्यायसें " स्वामीजी "के लेख को असत्य सिद्ध करना नहीं तो और क्या है ? इस वास्ते मैं विचारमें पडा पडा घवडा रहा हुं ! आपको तो सुन्दर स्त्रीकी प्राप्तिकी खुशीमें कुछभी [illegible]ा साफ लि[illegible] ! मगर लोग तो हमसे ही पूछेंगे कि–पंडितजी [illegible]तयोनी [illegible]मीजी " के लेखसे विपरीत (वेदविरुद्ध) य[illegible]प के क्षतव[illegible] लिये करते हो ? क्या कोई खीसा गरम हो[illegible]ीजी " के [illegible]र वातका हमारे पास क्या ज- वाव है ?

[illegible]र है और

मैं संको

और दूसरा एक [illegible] विधि प्रश्न है कि "क्षतवीर्य पुरुष" का यदि कुमारी कन्यासे विवाह हो सकता है तो

" क्षतयोनी " स्त्रीसे कुंआरे लडकेका विवाह भी क्यों नहीं होना चाहिये ?

पुनर्विवाह तो " स्वामीजी " के लेखसे अथवा अपनी मरजीसे आर्य पुरुषोंने मंजूर करही लिया है ! यदि यह ख्याल है कि द्विजोमें पुनर्विवाह नहीं होना चाहिये, तो बेशक ! नियोग किया जावे, परंतु (जरा अटक अटक कर धीरेसे) अयोग्य काम करना तो अच्छा नहीं है !

नंदिनी- (दयासे) वहन ! सुनती हो ? पंडितजी क्या ठीक फरमाते हैं !

दया-इन पंडितों का क्या ठिकाना है ? " स्वामीजी " भी तो पंडित हो थे ! जबकि " स्वामीजी " जैसे महान पंडित गोता खा गये और विना विचारे सटर पटर लिख गये तो इन विचारे पेटार्थी पंडितों का क्या कहना ? तू अपने मन में यह समझती होगी कि पंडित जी 'ब्रह्मानंद' के साथ मेरा नियोग करा देवेंगे परंतु यह वात स्वप्नमें भी नहीं समझनी !

नंदिनी-नहीं नहीं पंडितजीका स्वभाव तो वहुत ही अच्छा है, न्यायवान् भी हैं, सत्यासत्य को समझते भी हैं, परंतु ये बिचारे क्या करें ? जव अपने घरकी तर्फ ख्याल करते हैं तो दिल में यही आता है कि इस व्यभिचार वर्द्धक आर्य पंथको घडी के छठे भाग में छोड देवे !

परंतु क्या करें आजीविका के लिये नाम लिखा रखा है! काम चलता है! वाकी "स्वामीजी" के लेख पर इनको कितना अभिमान है वह मैं सब समझती हुं! पंडितजीकी बहन इसवक्त भरयौवनमें है, और विधवा है, जैसी हम हैं वैसी ही वह है! क्या उसका दिल हमारी तरह पतिकी इच्छा नहीं करता होगा? पंडितजीने उसको कभी कहा ही नहीं कि बहन! यदि तुझसे न रहा जावे तो वेदकी आज्ञा है "स्वामीजी" का हुकम है तुम वेशक अपने मन पसंद के किसी पुरुष से नियोग करलो! क्रिया वगैरह सब काम मै खुद करादुंगा! जब कि मैं औरोंके घरोंमे नियोगादि का काम कराता हुं तो तुम्हारे लिये करानेमें मुझें क्या जोर लगता है? परंतु मनमे पंडित जी साहब यह अच्छी तरह समझते हैं कि हम उत्तम खानदानके कहेजाते हैं! यह काम तो गिरे हुए मनुष्योंका है! इस लिए बहिन! चुपचाप तूंने जो कुछ करना हो सो करेजा और यहां जो कुछ होता है सो देखेजा!

दया-(पंडितजीसे) क्यों साहब ! यह क्या कहती है?
(पंडितजी चुप. न हां न हूं)

ब्रह्मानन्द- (पंडितजीके वोलने से पहलेही) चलिये पंडितजी! इधर ख्याल करिये! ये तो यहां पर दिल्लगी करनें आई हैं, इनको तो जरा भी हया (लज्जा) नहीं! क्या कभी "स्वामीजी" महाराज ऐसा लिख सकते

हैं ? जैसा कि, ये कहती हैं (नंदिनी और दया से डपट कर) जाओ चली जाओ ! यहां गड़बड़ मत करो ! हमारे काम में हरजा होता है ! (पं मोहनपालसे) हां पंडितजी साहब ! आपके पहले कथनमें जो " अक्षत-योनी स्त्री " " अक्षतवीर्य पुरुष " का नाम आया है उस से क्या मुराद है ? मेरी समझमें नहीं आया !

दया-(नंदिनी से) बहन ! ख्याल रखना अपनेही मतलब का प्रश्न ' ब्रह्मानन्द ' ने पंडितजीसे पूछा है, देखें क्या उत्तर देते हैं ? कहीं गालमाल न कर जावें !

पं० मोहनपाल-(ब्रह्मानन्द से) वाह साहब ! आप इल्म-दार होकर इतना भी नहीं समझ सकते ? जिस स्त्री पुरुष का संयोग (हम विस्तर) हो गया हो उसको क्षतयोनी स्त्री और क्षतवीर्य पुरुष कहते हैं ! क्षतयोनी स्त्री और क्षतवीर्य पुरुषका विवाह नहीं होता किन्तु नियोग होता है !

और " अक्षतयोनी स्त्री " और अक्षतवीर्य पुरुष " का पुनर्विवाह हो सकता है. इसी वास्ते तो मैंने आप को कहा कि " स्वामीजी " के लेखानुसार इस कुंआरी कन्या (माया) से आपको विवाह करना योग्य नहीं है ! और अगर जबरदस्ती करते हैं तो " स्वामीजी " के लेखका उल्लंघन होता है ! जिस से अधर्म प्राप्त होता है ! (इस बातको सुनकर विचार में पडे हुए ' ब्रह्मानन्द ' को देखकर)

नंदिनी- क्यों बाबुजी ! विचारमें क्यों पड गये ? जैसे हम अबलाओं को डपट कर धक्का देते हो ऐसे ही अब पंडितजी को भी धक्का दे कर क्यों नहीं बाहर करते ? देखो आप को क्या कहते हैं ? (पंडितजी से) क्यों पंडितजो साहब ! कभी विवाहित स्त्री और विवाहित पुरुष भी "अक्षतयोनी" या " अक्षतवीर्य " वेदाज्ञानुसार " स्वामीजी " के लेख मूजिब हो सकते हैं ?

पं. मोहनपाल- हां बेशक ! हो सकते हैं ! इस में क्या है?

नंदिनी-(दयासे हँसकर) क्यों बहन ! पंडितजी क्या कहते हैं ? मालुम होता है पंडितजीका विवाह वैदिक रीति से नहीं हुआ ! वरना एकदम ऐसा न कह बैठते ! जरा तूं पंडितजी को समझा दे !

दया- क्या समझाना है ? अगर यह समझभी गयेतो कौनसा इन्होंने अमल करलेना है ? तोभी ले तेरे कहनेसे कहती हूं ! (पंडितजीसे) क्यों पंडितजी साहेब ! वेदानुसार " स्वामीजी " फरमाते हैं कि बाल्यावस्थामें तो हरगिज विवाह होनाही न चाहिये और युवावस्थामें विवाहके अंतहीमें स्त्री पुरुषका संयोग होना चाहिये ! वही पूर्वोक्त सत्यार्थ प्रकाशका लेख याद किजिए कि-

" जिस दिन ऋतुदान देना योग्य समझे उसी दिन
" संस्कार पुस्तकस्थ विधिके अनुसार सर्व काम करके
" मध्य रात्री वा दश बजे अति प्रसन्नतासे सब के
" सामने पाणी ग्रहण पूर्वक विवाह की विधिको पुरा

" करके एकांत सेवन करे पुरुष वीर्य स्थापन और
" स्त्री वीर्याकर्षणकी जो विधिहै उसी के अनुसार
" दोनो करें " (पृष्ठ ९३) यह बात ठीक है या नहीं ?
हमको तो खुद इस बातका तजरबा भी होचुका है !
क्यों कि " स्वामीजी " के लेखानुसार हमने माता
पिताकी परवाह न करके खुद पसंद किये पतिके साथ
(जैसा के इस वक्त ये वीवी माया कररही है) आर्य वि-
धिके अनुसार विवाह करके संस्कार विधिके लेख मूजिब
उसी दिन पतिसे संयोग किया था ! और "स्वामीजी"
की शिक्षा के अनुसार ही वीर्याकर्षण आदि का काम
किया था जिससे गर्भभी रहा परंतु हमारे मंद भाग्यसे
वह अंदर ही अंदर छण (खिर) गया ! नहीं मालूम
क्या कारण बना ? परंतु दायी को पूछनेसे मालूम हुआ
कि हमने "स्वामीजी"की शिक्षाके अनुसार गर्भकी स्थि-
तिमें स्वपति से तो संयोग नहीं किया मगर हमारे से
रहा नहीं गया इस लिये किसी दूसरे (नियोगी) पुरुष
से कई दफा संयोग किया, उससे पति के द्वारा
धारण किये हुए प्रथम गर्भको भी नुकसान पहूंचा और
नया गर्भ भी नहीं हुआ ! दोनों खोकर बैठना पडा !
पंडितजी साहब ! जब विवाह की विधिके समाप्त होते
ही संयोग करना "स्वामीजी"ने कहा है तो अब आपही
सोचें कि विवाहिता स्त्री "अक्षत योनी" और विवाहित
पुरुष "अक्षतवीर्य" किस प्रकार हो सकता है ? हां अगर
वेदी में ही पति मरजावे तो बेशक अक्षतयोनि स्त्री हो

सकती है और वेदीमें ही स्त्री मरजावे तो अक्षत वीर्य पुरुष हो सकता है परंतु इस में भी विचार करना पडता है कि जब "स्वामीजी" महाराज ने अक्षतयोनी स्त्री और अक्षतवीर्य पुरुष फ़रमाये हैं तो वह ठीक "स्वामीजी" के लेखानुसार अक्षतयोनि या अक्षतवीर्य है इस बातका निर्णय किस तरह हो सकता है? क्योंकि विवाह होने से प्रथम की अवस्था में वो साफ ही रहे हों ऐसा कोई निश्चय नहीं हो सकता। इस लिये इस बात को यहां अधिक न लंबाकर इतना ही कहना ठीक हो सकता है कि कन्या या कुमार के 'अक्षतयोनी' या 'अक्षत वीर्य' के होनेका निश्चय किये बादही विवाह किया जावे तो वेदानुकूल "स्वामीजी" के लेख को आदर देने वाले हम तुम आर्य सच्चे आर्य कहे जा सकते हैं वरना नामधारी आर्य मात्र ही समझना चाहिए! (मायाकी तर्फ ख्याल करके) क्यों बहिन! मैंने जो कुछ कहा ठीक है या कि नहीं?

माया—बेशक! आर्य धर्म पालने वाले उत्साही प्राणियों को तो ऐसाही करना योग्य है!

दया—(जरा हँसकर माया से) तो बहन! तूं ठीक 'अक्षतयोनी है इस बातकी परीक्षा दे सकती है?

माया—(मनमें शरमिंदी होकर) क्या तेरी अकल ठिकाने नहीं है? ऐसे सुशिक्षित (इल्मदार) महाशयों की सभा में विना विचारे बोलते तुझे शरम नहीं आती?

नंदिनी—बहन इस में शरम की क्या बात है? यदि शरमकी बात होती तो अपने परमब्रह्मचारी "स्वामीजी" महाराज ही अपने पुस्तक में ऐसा क्यों लिखते? इस वास्ते शरमका नाम लेकर "स्वामीजी"के वचनों का अनादर करना ठीक नहीं है! जब कि तूं ने "स्वामीजी" के कथनानुसार मन पसंद पति "स्वामीजी"के वर्णन किये— " परस्पर फोटू दिखाना " " जीवन वृतांत कहना " "गुह्य वातोंको लिखकर पूछना" वगैरह वगैरह स्वीकार कर लिया है तो अब अपनी इस बात के जाहिर करने में तुझे क्यों शरम आती है ? अगर मुख से कहना ठीक नहीं समझती हो तो कागज पर लिख दे ! परंतु "स्वामीजी"के कथन का अनादर करना उचित नहीं है आगे तेरी मरजी!

ब्रह्मानन्द्—पंडितजी साहब ! यह क्या बनता है ? तुमतो हमारा हक्क खोने लगे थे परंतु इन दया और नंदिनीने तो हमारा ही हक्क साबत करना शुरू किया है (दया और नंदिनीकी तर्फ इशारा करके) वाह ! तुमने खूब " स्वामीजी " के शास्त्रोंका अध्ययन किया है जितनी बाते तुमको याद और ख्याल में हैं पंडितजी विचारोंके तो स्वप्नमें भी इतनी नहीं होंगी ! (पंडितजीसे) अच्छा पंडितजी साहब ! इस टंटेको छोडो इसका तो अंतही आना मुश्किल है अब जो अपना कर्तव्य है सो करो !

हरदत्त– (इस कार्रवाईको देख कर और सुनकर "माया" का पिता ' हरदत्त ' अपने अंदरही अंदर वडा क्रोधित हुआ ! और मनही मनमें धिक्कार है इस (आर्य कहना तो ठीक नहीं) अनार्य धर्म पर ! और इसके चलाने वाले पर ! और लख लानत है इन वैठे हुए वड़े वड़े महाशय नाम धारियो पर ! इससे तो वेहतर था कि इस हरामजादी " माया " को किसी भंडेलाके हाथ दे दिया जाता; मगर इतनी वेशरमी तो भांडोमें भी नहीं होती ! (शारदाचंद्रसे) भाई साहव ! मेरेसे तो यहां अव वैठे वैठे यह कार्रवाई नहीं देखी जाती ! अफसोस कि आपभी वुड्ढे होकर अपने लड़केको इस कलयुगा नंदी पंथसे न हटाकर वैठे वैठे हंसते हो ! शरम ! शरम ! ! शरम ! ! ! वस अव जल्दीसे इस मामलेको यहां ते करदो वरना अव मेरे पैरसे खास विलायतका वना फुलवूट उरता है और अभी इन पंडितजी, दया, नंदिनी, माया और साथही ब्रह्मानंद और सभासदोंके सिरपर फूलोंकी वर्षा करता है ! मैंने आपको जता दिया है लो अव इनको वोलनेसे जल्दी वंद करदो वरना मैं अकेलाही (वूट उतार कर) सवको पान वीड़ी देकर विदा करता हूं !

शारदाचंद्र– (हरदत्तका हाथ पकड़कर खडे हुएको वैठा कर) हैं ! हैं ! एक दम ऐसा साहस मत करो ! आप मुझे कहते हैं कि " ब्रह्मानन्द " को इस कलयुगा नंदी पंथसे क्यों नहीं हटाते ? सो भाई साहव ! पहले जरा आप

अपनी लडकी की तर्फ ख्याल कीजीये ! पीछे मुझे समझा इए ! आपके पिता (चाचा) भाई वगैरहको आप क्यों नहीं समझाते ? अच्छा ! अव सवर करो ! जो होना था सो हो लिया ! अव आप चुप करके " माया " को घर ले जाओ ! और मैं इन लोगोंको समझाकर रवाना करता हूं ! (जज साहव और युगलकिशोरको पास बुला कर) अव आप लोग इस वक्त रईसी इज्जत को लेकर चले जाईयेगा वरना यहां अभी रंग विरंगी होली खिल जायेगी ! (अपने वेटे ब्रह्मानंदसे) अवे ! इधर देख ! (हाथ लंवा करके) घरको चला जा !

ब्रह्मानंद— (क्यों ? वस क्या इमतिहान होलिया ? मैंने तो अभी कई एक वातोंकी परिक्षा करनी है ! आप अ-भीसेही कहते है कि घर चला जा ! मैं अपने दिलमें यही समझ रहा हूं कि आजही विवाह हो जाय तो " स्वामीजी " के कथनानुसार सवके सामने से इसको एकांतमें ले जाऊं और " स्वामीजी " का हुकम वजा-ऊं ! कोई ऋतुदान देनेके लिये मूहूर्त देखनातो लिखाही नहीं है अगर लिखा है तो वताओ ?

(मायासे) क्यों ? तुमको तो तसल्ली होगई मगर तुम्हारी तर्फसे मुझे विलकुलभी तसल्ली नहीं हुई ! तुम आर्य धर्मसे विलकुल अनभिज्ञ और कच्ची हो ! तुमको " स्वामीजी " के कथनका विलकुल पास नहा है ! मगर खैर तुमने मुझे इतने आर्यसभासदाके सामने

मंजूर किया है इस लिये मैं भी आगे कुछ नहीं कहता और पूछता ।

माया– (धीरेसे बसबस! अब आप कुछ भी मत बोलो देखो जरा मेरे बापकी तर्फ! अगर कुछ और कहा सुना गया तो यहां पर कुछ और का और ही न बन जाय! जो होगया सा ठीक है आप के साथ विवाह होने पर मेरी सबही कचास निकल जायगी अब तो आप कुछ मत बोलिये चुप करके सभा बरखास्त करने की तदबीर सोचिये। मुझे अपने बापको सकल देखकर बहुत डर लग रहा है और दिल टुकड़े टुकडे होता जाता है! देखो मेरा बदन कैसे कांप रहा है इस वक्त मेरा दिल बिलकुल कावूमें नहीं है मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि यह आपके साथ आखरी मेला है क्यों कि घर जाने पर मेरे साथ मेरा बाप न जाने क्या करेगा ? यह तो मुझे पक्का यकीन है कि आज घरमें जो आर्य धर्मके ग्रंथ हैं वो तो राख हुए बगैर बचते नजर नहीं आते !

(बहुतही उदास होकर अपने मनही मनमें) हायरे! मुझे क्या होगया ? यह मैंने क्या किया ? अब मैं अपनी जान कैसे बचाऊंगी ? अरे रे ! धूल पड़ो ऐसे आर्यधर्म पर ! हायरी मां अब मैं क्या करूं ? अगर मेरी जान बचजावे तो धूलगेरूं " स्वामीजी " के क़थन पर और ऐसे बेशरमी भरे ग्रंथों पर ! हाय हाय ! आजकी कार्रवाईको शहरकी औरतें सुनकर क्या कहेंगी ? मैं उन्हें

क्या मुंह दिखाऊंगी ? हायरे ! न जाने मेरी अकल पर क्या परदा पडगया ? हे ईश्वर ! अबतो मेरी लाज तेरे ही हाथ है ! (ऐसे विचार करती हुई रोने लगी)

दया और नंदिनी– (हैं ! हैं ! बाईजी ! यह क्या हुआ ? क्यों रोती हो ? (हाथसे पकड़ कर धीरज देती हुई) अजी तुम ऐसी समझदार होकर यह क्या करने लगी ? क्या कोई हमारी बात चीतसे दिल दुखा ? या " ब्रह्मानंद " ने कुछ ऊंचा नीचा कहा ? याकि " मुझे उत्तर नहीं आया " इस बातका अंदर दुःख पैदा हुआ ? कहो तो सही बात क्या है ?

पं० हरदत्त– (दया और नंदिनीको ऊंचे आवाजसे) अरे ! तुम हट जाओ इसके पाससे ! और रहने दो समझानेका ! मेरी लड़की है मैं आपही समझा लूंगा ! (मायासे लाल आंखे करके) एं ! ये कैसी ऊं ऊं और चूं चूं लगाई है ? जरा ठहर जा ! अभी घर चलके तेरी चतुराई बतलाउंगा ! जिसने तेरेको पढ़ाई है उसके भी धुर्रे उड़ाऊंगा ! क्या करलेगा मेरा भाई और चाचा.

जो विचारी पूर्व किये पाप कर्मसे पतिके मर जानेपर दुःखी दीन मीनकी तरह अधमरी हो तड़फती हैं उन ऐसी अबलाओंको दुखमें धीरज देनेके बदले कलयुगानंदी ऐसा उपदेश देते फिरते हैं कि जिनके वाक्योंको सुन सुन कर बाज बाज पतिव्रता सतियोंके (जिन्होंने अपने पतिके अलावा जगतभरके पुरुषोंको पिता, पुत्र

और भाईके सदृश समझा है) हृदय टुकडे हो जाते हैं ! इन "दया" और "नंदिनी" जैसीयोंने तो ब्रह्मचर्यको तो एक पाप समझ रखा है ये तो दयानंद सरस्वतीके कथनका सहारा ले, दरबदर खराब होती फिरती हैं ! और विचारे अन्य भोले जीवोंको भी नरकका रास्ता बतला दुःख जालमें डाल हाल बेहाल करनेकाही पेशा पकड रखा है !

क्या कोई है इन सभासदोंमें बैठा हुआ जिसने अपनी मां, बेटी, बहेन, बुआ, मासी, चाची, ताई वगैरह किसीकोभी दूसरा पति करलेनेकी इजाजत दी हो ? या स्वयं जाकर उसके लिये कोई दयानंदी पुरुषढुंढ लाया हो ? या अपनी औरतको यह इजाजत दी हो कि—जा दयानंदके कथनानुसार दूसरा खसम (नियोग) करके पुत्रोत्पत्ति करले ! और आजतक किसी दयानंदिनीने ऐसा किया भी कि ? जिसने दश खसम किये ! या दश लड़के पैदा किये ? और पति और नियोगी दोनोंने मिलकर उन लड़कोंके हिस्से किये ! याने बांट बांट कर लिये ?

(हरदत्तको इस तोर पर बोलते हुए देखकर सभासद तो खिसकने लगे एक के बाद दूसरा दूसरेके बाद तीसरा बस उस जगह (स्वयंवरमें) गिनतीके ही आठ दश जने रह गये ! या मूं लपेटकर रोती हुई "माया" !)

शारदाचंद्र– (पं० हरदत्तसे हसकर) भाई साहब ! अब शांति करो ! जो होना था सो होगया ! अब आगेके लिये सोचो क्या करना चाहिये ? यहतो तुम जानते ही हो कि, हमारे घरमें आर्यधर्म किस खेतकी मूलीका नाम है सो क्या छोटे क्या मोटे कोई भी नहीं जानते ! हां इस " ब्रह्मानंद " को जरा बाहर रहनेसे कुछ कुछ हवालगी है सो सिर्फ जबतक मैं कहता नहीं हूं वहां तक ही ! वरना कहोतो अभी ही हटा दूं !

(दूरसेही खड़े खड़े, रोती हुई " माया " को पुचकार कर) बेटा ! चुपकरो ! मतरोओ ! उठो और मत डरो ! मैंने समझा दिया है तुम्हारे पिताजीको ! मजाल है कि वो तुम्हें कुछ कहें ! उठो उठो ! बस ! चुपकर जाओ !

(अपने बेटेसे) अरे " ब्रह्मानन्द " !

ब्रह्मानन्द– जी हां !

शारदाचंद्र– बतला तो अब तेरी क्या मनशा है ?

ब्रह्मानन्द– जो आपकी मनशा सोही मेरी मनशा है ! पंडित 'हरदत्तजी' की क्या मनशा है ?

पं० हरदत्त– (ब्रह्मानन्दसे) भाई ! मेरी मनशा क्या पूछते हो ? तुम्हारे " स्वामी दयानन्द "के उपदेशको सुनकर मेरा दिल तो जल भुन कर खाक हो गया है ! क्या करुं ? आपके पिताजीसे जबान कर चुका हुं और

अब बात भी बाहर निकल गई है इस लिये लाचार हूं वरना इस "माया" को ऐसे माया जाल में फँसाता जो ये भी सारी उमर "बाबा दयानन्द" को ही रोती पीटती रहती ! औरतो कुछ नहीं मगर मुझे इस बातका बड़ा ही ख्याल है कि मैंतो इसे आपको दे चुका लेकिन कहीं ये आप के यहां जाकर, आपकी इज्जत में बट्टा न लगा बैठे !

शारदाचन्द्र- अजी नहीं नहीं ! आप क्या बात करते हो ? आखर तो पढ़ी लिखी और समझदार है ! बस अब आप इसे ज्यादह कुछ मत कहियेगा !

पं हरदत्त- हां अगर ये इस ऊत पंथ से बाज आजावे तो मुझे कहने की कोइ जरुरत नहीं ! (मायासे डांट कर) ले अब चुप होती है या कि अच्छी तरहसे चुप कराऊं ?

शारदाचन्द्र- लीजिये साहब अब जाने दीजिये ! अब आप ज्यादह मत डपटिये और घर ले जाइये ! अब आपने व्याह (साहे) का दिन निकल वा भेजना ताकि हम भी अपना इन्तिजाम करें ?

पं० हरदत्त-अच्छा साहिब ! मैं कलरोज आपको पता दूंगा अब मैं जाताहूं मगर यहां जो आज कार्रवाई हुई है उसे आपने किसीके सामने प्रगट मत करना ! वरना इसमें उलटी हमारी तुम्हारी ही बदनामी और नमोसी है ! अच्छा लीजीये अब मुझे इजाजत है ? नमस्ते ! जाता हुं !

शारदाचन्द्र—वाह साहब वाह ! जिनके सिरपर अभी जूत लगानेको तैयार हुए थे उन्ही की दुम पकडे हुए अभी-तक चलते हो ? देखना दुलत्तेसे बचना ! क्या नहीं मालूम के यह जितने झगड़े नजर आते हैं वे सब इस नई नमस्ते के ही हैं ! मेरी तो सबसे प्रणाम करनेकी आदत है सो लीजिये साहब–प्रणाम ! मैं भी जाता हूं.

पं० हरदत्त– (जब सब लोग चले गये तब ' शारदाचंद्र ' से) देखिये साहिब ! मैं तो आजसे इस आर्य पंथको मानना तो किनारे रहा परंतु नाम तक भी न लूंगा ! अफसोस ! इसका नाम धर्म है ? भाई मुझे क्या मालूम कि इस मतमें ऐसी पोलंपोल चलतो है ! न मालूम (पास खडे हुए ' ब्रह्मानंद ' की तर्फ हाथ करके) इन्हों ने क्या समझकर यह हठ पकडा था कि मैं आर्य रीति से (स्वामीजीके लिखे मुताबिक) सब काम करूंगा ? क्यों ? अबी भी यही विचार है ? कुछ कसर हो तो पूरी करलो ! वडे शरमकी वात है कि तुम पढ़े लिखे दाना होकर ऐसा काम करनेको तैयार हुए ! कुछ तो अपनी इज्जतका ख्याल किया होता ! (शारदाचन्द्रसे) खैर जो होना था सो हुआ अब मैं घर जाकर शीघ्रही किसी पंडितको बुलाकर विवाहका दिन नियत करके आपको खबर दूंगा, विवाह सब उसी रीतिसे होगा जैसे अपने सबके होता आता है, अगर भाइ वगैरह मेरे सामिल न होंगे तो मत हो !.. लेकिन एक बात है

कि आप जानते हैं मेरे लडका नहीं है वस जो कुछ समझो, यही दो लडकियां है, इस लिये मेरा विचार है कि इनका विवाह खूब धूम धामसे करना. आपतो "ब्रह्मानंद" का यह दूसरा विवाह समझ कर अगर यूंहीं साधारण फेरे फिरा लेनेका विचार रखते हो सो ठीक नहीं! इस समय मेरे कहने से आपको जरुर ही धूम धाम करनी पडेगी, और वरातमें नाच वगैरह के लिये एक दो तायफे साथ लानेही पड़ेगे! वस मैं अव अपनी मरजी के मुताविक विवाह करुंगा, मेरे घरमें सवके विवाह में ऐसा होता आया है, अगर ये अव समाजी वन नई रोशनी के चांदनेमें चलने लगे तो क्या हुआ? वस देख लिया इनका समाजीपना! आपसे मैं हाथ जोडकर प्रार्थना करता हूं कि आप मेरी यह वात अवश्य ही मंजूर करें.

शारदाचंद्र- भाई साहव! (हाथ पकडकर) आप यह क्या करते हैं? मुझे आप जैसे कहें वैसे करने को तैयार हूं, मगर वरातमें नाच (तायफे) लानेके लिये मैं आपसे विरुद्ध हुं, क्यों कि मैं इसमें नुकसानके सिवाय कुछ फायदा नहीं समझता! और मैं इस वातका पुरा विरोधी हूं, यह तो आपको वात तीन काल भी नहीं मानुंगा! हां आप कहें तो लखनऊ के भांड तो जरूर वुलवालूं (वह भी आपको खुश रखनेके लिये) मगर रंडियोंको वरातमें लानेके लिये आप न वोलें!

पं० हरदत्त– अच्छा तो यूंही सही! आप जिसमें खुशहों वह मैं मानने को तैयार हुं, मगर वरात खूब धूमधामसे आनी चाहिये!

शारदाचंद्र– आपके सगे संवंधी आर्य समाजी इसवातमें आपसे विरोध करेंगे तो?

पं० हरदत्त– अजी आप भी भोली वात करते हैं! किसी की मजाल है? अगर करेंगे तो अपने घर वैठो! मुझे कुछ परवाह नहीं!

शारदाचंद्र– अच्छा तो ठीक!

(इतना कहकर अपने अपने घरको गये. "हरदत्त" ने भी विवाह का दिन निकलवाकर "शारदाचंद्र" के घर भेज दिया. दोनो घरों में विवाहकी तयारियां होने लगी. "शारदाचंद्र" ने अपने वडे लडकोंकी सलाह लेकर लखनऊ से वढिया भांड बुलवाये! खूब धूमधाम से संवत १९४४ वैसाख वदि छठ के दिन वरात "पं० हरदत्त" के घर पर पहुंची.

"माया" के दिलसे समाजी ख्याल उसी दिन से ऐसे निकल गयेथे जैसे किसी के शिर भुत आता हो और वह उसे छोडकर भाग जावे! अपने कमरेमें वावाजी की फोटो लगी हुईथी वह भी उतार कर सुवह कुडा लेने आई हुई भंगन के टोकरे में फेंकदी और जितने समाजी पुस्तक थे वे सव अपने दादा "कीर्त्तिप्रसाद" के सामने फेंक दिये. यह कार्रवाई देख "कीर्त्तिप्रसाद"

बहुत ही चिढ गये थे मगर करही क्या सकते थे? "हरदत्त" ने भी खुबही आडे हाथ लिया था. जिस दिन बरात आई "कीर्त्तिप्रसाद" तो उसी दिन किसी कामका बहाना निकाल कर मेरठ चले गये! इधर बरातमें "शारदाचंद्र" के सब सगे संबंधी जज साहब और 'युगलकिशोर' वगैरह आयेथे मगर "विश्वंभरनाथ" भी बरात में जाने के लिये रोने लगा परंतु अपने बापके विवाहमें लडका नहीं जा सकता इस लिये "युगल किशोर" ने बरात में साथ न जाने के इरादे से "शारदाचंद्र" से कहा कि, लो मैं "विश्वंभरनाथ" को रख लूंगा ये यहां औरतों से किसी से नहीं रहेगा अगर रह गया तो मैं कल आजाऊंगा. "शारदाचंद्र" ने "युगल किशोर" का दिली इरादा जान लिया मगर बोलने में कुछ सार न समझ उन्हों ने भी साथ चलने के लिये आग्रह न किया. "युगल किशोर" "विश्वंभरनाथ" को गोद में ले तमाशा दिखाने के बहाने से अपने घर ले गये! उधर जब बरात दरवाजे पर पहुंची तब औरतें खुशी में आकर तरह तरह के गीत गाने लगी. एक औरत ने दरवाजे पर आये हुए दुल्हा को अपनी तर्फ मुखातब करके नीचे मुताबिक मुबारक बाद देना शुरु किया—

"हमें मालूम है सब कुछ, नहीं मालूम क्या तुमको।
"हुए बेशर्म थे जिसदिन, नहीं मालूम क्या तुमको॥ १
"करूंगा आर्य रीतिसे, विवाह अपना मैं ये हठ था।

"धर्म क्या चीज है असली, नहीं मालूम क्या तुमको ।। २
"दयानन्द नाम तो था ठीक, मगर सब काम था उलटा ।
"सबी धर्मोंकी की निन्दा, नहीं मालूम क्या तुमको ।। ३
"धर्म भारत किया गारत, उलट कर वेद मंत्रोंको ।
"लिखे औरतको दश खाविन्द, नहीं मालूम क्या तुमको ।। ४
"बचो बन्ने ! हटो इससे, धर्म उसका है दुःख दाई ।
"किया अंधेर "स्वामी"ने, नहीं मालूम क्या तुमको ।। ५
"पढा करतीथी जब "माया", विनिर्मित ग्रंथ "स्वामी"के ।
"बकी थी वेहया होकर, नहीं मालूम क्या तुमको ।। ६
"फक्त पढने से ग्रंथोंके, बनी वेशर्मथी जब ये ।
"हूई नफरत है अब उनसे, नहीं मालूम क्या तुमको ।। ७

(बरात को यथा योग्यस्थान में उतारा दे दिया गया, नियत लगन के समय में वरको विवाह मंडप में बुलाकर सनातन धर्मकी रीति सें बडे आनन्द पूर्वक विवाह संस्कार किया गया ! विवाह के अगले दिन दुपहेर के एक बजे जहां बरात ठहरी थी वहां महफल लगी. तमाशं वीन लोगो से मकान गचा गच भर गया लडके और लडकी वालों के भाईबंद सब ही मौजुद थे यह ठाठ देखकर)

पं० हरदत्त- (शारदाचंद्रसे) देखिये साहब ! क्याही महफल लग रही है, मगर बिना वेश्या के नाच के यह एसा है जैसे स्त्री सब शृंगार करले ओर कपडे न पहने ! क्या करुं आप मानते नहीं है वरना मै अभी अपनी तरफसे एक तायफा तो जरूर ही मंगालूं !

शारदाचंद्र- (हरदत्तकी अत्यंत अभिलाषा देखकर) अच्छा भाई साहब! अगर आपकी यही इच्छा है तो लो अभी किसीको भेजकर मंगवाता हुं! बोलो किसे बुलाया जावे?

पं० हरदत्त- (खुश होकर) बस बुलाना हो तो "आफताब" को ही बुलाईए! चालीस रुपयेकी जगह पचास सही मगर लोग तो खुश होंगे और कहेंगे तो सही कि किसी के विवाह में रंडी आई थी!

(यह सुनकर "शारदाचंद्र" ने एक अपने खास आदमी को भेजकर "आफताब" को बुलवा मंगाया, मगर "आफताब" के आने स पहले दो भाट कहीं से आ पहुंचे उन्होंने आते ही)

भाट- (कवित्त)

जय हो जजमानकी बात करुं ज्ञानकी
ध्यान दे सुनिये कलयुगकी कमाई है।
दयानंद सरस्वतीने वेदके प्रमाणसे।
नई एक रीत मत आपने चलाई है॥
सुता सुत जायबेको उत्तम प्रकार एही।
एक दो तीन पति करो सुखदाई है॥
एकादश पतिलों बनाय उपजावे पुत्र।
वेदको प्रमाण दोष दीखत न भाई है॥

(यह सुनतेही महफलमें बैठे हुए लोग एकदम हसपड़े लेकिन दश वीस जो समाजी महाशय बैठे थे वे जरा हिचकिचाये मगर करही क्या सकते थे? इतनेमें-

शारदाचन्द्र- (भाटसे) अरे भाई ! तेरा क्या नाम है ? और कहांसे आया ?

भाट- (दांत निकालता हुआ आगे बढकर दोनों हाथोंसे जुहार करके) हजूर ! मैं " बिजनोर " से आया हूं ! मेरा नाम " कपोल कल्पित " पांडे है ! जजमानकी जय रहे ! (बीचमें बैठी हुइ " आफताब " (वेश्या) को दोनों हाथ जोड कर)

हे स्वर्गकी सीढी ! लक्ष्मी सहोदरे ! हे सर्व प्रिये ! मैं लाडु भट्ट आपकी क्या स्तुति कर सकता हूं ! हे धर्म प्रचारिणि ! प्रत्यंगालिंगनीरंभे ! आपका अनुकरण करानेके लिये भारत वर्षकी स्त्रियोंका पतिव्रता धर्म भ्रष्ट करनेको हमारे बाबाजीने बडे प्रयत्नसे ग्रंथ बनाया है वह आपको मिला कि नहीं ? अगर न मिला हो तो लादूं ?

हे देवि ! आपके समान जगतमें परोपकारी मुझे तो कोई नहीं जान पडता ! हे सभा मंडपकी मन मोहिनि ! धन्य है आपको ! आपके दर्शनसे आज मेरा जन्म जन्मका धर्म कर्म सफल होगया ! (सभासदोंकी तर्फ एक हाथसे " आफताब " को बताता हुआ)

" जात्यन्धाय च दुर्मुखाय च जरा-
जीर्णाखिलाङ्गाय च ।
ग्रामीणाय च दुष्कुलायच गल-

त्कुष्ठाभिभूताय च ॥
यच्छन्ती सुमनोहरं निजवपु-
र्लक्ष्मीलवश्रद्धया ।
पण्यस्त्री सुविवेककल्पलतिका

स्वस्त्रीषु रज्येत कः ? ॥ १ ॥ " (१) (ळाकटानंद)
वाह ! वाह ! क्या कहना है ? शास्त्र कारकी बलिहारी जाऊं ! कहीं पाऊं तो सीस नवाऊं ! गुन गाऊं ! मर जाऊं ! तौभी पार न पाऊं ! जजमानजी ! आज आपका बडाही पुण्यका उदय है ! देखो तो एक कविने क्या ही अच्छा कहा है—

" यवनी नवनीतकोमलाङ्गी
शयनीये यदि नीयते कथं चित्
अवनीतलमेव साधु मन्ये
नवनी माधवनी विनोदहेतुः ॥ "

अर्थात्—यवनी वेश्या नवनीतके समान कोमल अंगों वाली

---

(१) अर्थात् जन्मके अंधेको, बदसूरतको, सारे अंगोंसे जीर्ण शिथिल अंग वालेको गंवारोंको, दुष्ट कुल वालोंको, गलित कुष्टरोग वालोंकोभी तथा और भी प्रत्येक पुरुषको थोडासा धन लेकर अपना मनोहर स्वर्णके समान अंगको केवल परोपकार और दया करके ही अर्पण-करदेती है ऐसी कल्प लतिका वेश्याको छोडकर दूसरेमें कौन मूर्ख चित्त लगावे !

अगर भाग्य वश शयन कालमें किसीको मिलजाय तो उसी समय उसका पृथ्वीतल पर जन्म होना सफल होता है क्योंकि वह इंद्राणीसे भी अधिक सुख देने वाली होती है !

(अपने मनमें) हाय हाय ! पापी पेटके लिये मैं इनके गुन गाउं ! राम राम यह तो कभी न होगा !

(शेर)–" जो फसे फन्देमें इनके वो गये शुभ कामसे ।
दीनसे औ धर्मसे औ शहर जंगल ग्रामसे ॥
है वही मूरख जो घिसते चाम देखो चामसे ।
जांयगे अग्निमें डाले जो विमुख हैं रामसे ॥
धन वो देकर रंडियोंको वात अभिमानी करें ।
पापके भागी हैं वो जो धर्मकी हानी करें ॥
फिर उसी धनको लेके रंडियां कुर्वानी करें ।
मांस औ मदिरा मंगा भड़वोंकी महमानी करें ॥"

हत् तुमारी ! रंडियोंको धन देनेका अंतमें यही फल ! छिः ! छिः ! कहां आ फसा !

(प्रगट सभासदोंसे) भगवान् आपका तप तेज प्रताप वढ़ावे ! तो यह भाट भी कुछ पावे ! जय हो ! (इतना कहकर वैठ गया तव दूसरा भाट)

गट्टूलाल–"सत्य वरावर धर्म नहीं, नहीं झूठ सम पाप ।
सत्य धर्मका मूल है, झूठ पापका वाप ॥ "
" कोई ले निरूक्त नाम विधवा नियोग करे

वहां भी परंतु नहीं लिखा ऐसा रूल है ।
कोई ले निघन्टु नाम विधवा विवाह करे
वहांभी न लिखी कहीं मित्रो ! ऐसी भूल है ।
कोई लेके व्यास नाम विधवाको बेटा देवे
वो भी गप्प क्यों कि नहीं वेद अनुकूल है ।
न मालूम सेठ और बाबू क्यों प्रमादी हुए
विधवा विवाह नहीं ईशको कबूल है ॥
विधवाके प्यारे बाबू कामसे मुर्दार हुए
बने हैं बेकारे नारी विधवा निहारके ।
लाते दरबार करें विधवा विचार होवे
विधवा नियोग बाबू रोवे चीख मारके ।
होवते बेहाल हाल विधवाका देख देख
विधवा नियोग छापे बीच अखबारके ।
विधवाके भक्त बाबू भोगोंमें आसक्त हुए ।
विधवाको कंचनी बनावें ये पुकारके ॥
विधवाके प्रेमी बाबू विधवाका जाप जपे
विधवाकी संध्या करें भक्त निराकारके ।
रात दिन सदाकाल विधवाको यादकरे
देखो बाबू ध्यानी शुद्ध ब्रह्म निराकारके ।
रूल व्यभिचारके जो नारीके विगार वाले
देखो सेठ ज्ञाता बने ब्रह्म निराकारके ।
न मालूम विधवाके बने क्यों ये बाबू वैरी
विधवाको कंचनी बनावें ये पुकारके ॥
माता स्वसा बेटी बैठीं विधवा अनेक घर

क्यों नहीं कराते पति वाको गप्प मारके ।
माता आदि वावू और सेठका सियापा करें
वाबू सेठ वके व्यर्थ वीच जा वजारके ।
घरोंमें अंधेर सेठ विधवासे शादी करें
कामके अधीन वैठे खाक सिर डारके ।
पतिव्रता धर्म न सुनावें सेठ विधवाको
विधवाको कंचनी वनावें ये पुकारके ॥
एक पति छोड पति दूजेका जो नाम लेवे
जान लो वो नारी ठीक वेश्या है वजारकी ।
पति मरे वाद पति दूजेकी जो इच्छा करे
पूंछ विना मानो उसे गर्दभी कुम्हारकी ।
रोगी पति त्याग जो अरोगी दूजा पति करे
जान लो वो वेटी किसी ढेढ़ या चमारकी।
मनूका सिद्धांत नारी दूजा न वनावे पति
आज्ञा है ये ठीक शुद्ध ब्रह्म निराकारकी ॥ *

(ज्यों ही भाट इतना कहकर चुप हुआ त्योंही एक महाशय महफलमें से उछल कर आ खडा हुआ और वोला) अरे ओ ! वट्ट के भट्ट ! चुपकर इन चिकने चुपडे वघारों से क्या भारत को रहासहा भी गारत किया चाहता है ? भाड में जाय यह तेरी कविता और चुल्हे में पडे तेरी यह विरुदावली ! तेरे जैसे झूठे खुशामदीयोंने ही देश घातक धर्म नाशक पाखंडियों को

* स्वामी आलारामसागर संन्यासी । (मनहरछंद)

प्रशंसा के वैलून में चढाके देशका सत्यानाश करना शुरू किया है ! (इतने में)

शारदाचंद्र– (आफतावसे) क्यों ? अव क्या देर है ? उठो ! होने दो ! हां !

आफताव– (खडी होकर दोनो हाथों से सवको सलाम कर वडी सुरीली अवाजसे गाने लगी)

"ये कैसा कल्युग का दौर आया,
"कि सत मिटाया असत वढाया ।
"उडाया धर्म और कर्म सारा,
"अधर्म वृद्धि में मन लगाया ॥ १

(१) "जो मांस संयुक्त भात खाये,
"वो वीर वेदज्ञ पुत्र पाये ।
"कोई समाजी हमें वताये,
"किसीने इसको भि आजमाया ॥ २

(२) "उदर में सुत होवे जव कि मांके,
"तो वस्त्र वालक को तव पिन्हाके ।
"खिलावें जंगल में वाप जाके,
"वचन असंभव ये क्या सुनाया ॥ ३

(३) "जो घी मृतक के समान पाओ,
"तो अपने मुरदे को तुम जलाओ ।

(१) संस्कार विधि सं० १९३३ पृष्ट ११
(२) " " " ४१

"नहीं तो जंगलमें छोड आओ,
"ये कर्म अनुचित तुम्हें सिखाया ॥ ४

(४) "तुम्हारा ईश्वर है दुःख भोगी,
"कभी वो होता हो स्यात रोगी ।
"कब उसकी दुखों से मुक्ति होगी,
"गुरुने यह भी तुम्हें बताया ॥ ५

(५) "गुदाकी और लिंग की भी शुद्धि,
"करे गुरु क्या कहां है बुद्धि ।
"प्रगट है स्वामीजीकी अशुद्धि,
"ये हास्य वेदोंका भी उडाया ॥ ६

(६) "जो चाहे शूरोंसे अपनी रक्षा,
"तुम्हारी रक्षा वो क्या करेगा ।
"कहो तो ईश्वरको भय है किसका,
"ये दोष उसको वृथा लगाया ॥ ७

(७) "वह नील गाओं के वधकी आज्ञा,
"यजु की व्याख्या में जो न लिखता ।
"कहै तो कोई विगाड क्या था,
"ये पाप भारी वृथा कमाया ॥ ८

---

(३) संस्कार विधि १९३३ पृष्ठ १४१
(४) दयानन्द. यजुर्वेद भाष्य पृष्ठ ४३५
(५) " " " ५००
(६) दयानंद यजुर्वेद भाष्य पृष्ठ ६३५
(७) " " " १३६३

(८) "सुअर की उपमा जो नृपको दी है,
"किसीने मित्रो कभी सुनी है ।
"ये उस के अज्ञान की ध्वनी है,
"जो मूं में आया सो कह सुनाया ॥ ९

(९) "कहो तो वकरे का दूध और घी,
"किसी मनुजने सुना कहीं भी ।
"ये स्वामीजीकी थी तीव्र बुद्धि,
"यजुकी व्याख्या में जो छपाया ॥ १०

(१०) "लिखा वृषभ से है भोग करना,
"गुरुकी आज्ञा पै ध्यान धरना ।
"जरा तो ईश्वर से मनमें डरना,
"ये कैसा अज्ञान उर में छाया ॥ ११

(११) "जो चेले स्वामीजीके कहावें,
"वह पालें उल्लू गधे बढावें ।
"लिखा गुरुजीका हम दिखावें,
"सवक ये कैसा तुम्हें पढाया ॥ १२

(१२) "कहै वह शंकर की मृत्यु जैसे,
"लिखी नहीं दिग विजय में वैसे ।
"किया है भाषण अनृत ये कैसे,
"कि उनको जैनों ने विष खिलाया ॥ १३

---

(८) दयानंद यजुर्वेद भाष्य पृष्ठ १६८०

(९) „ „ „ ७४ अध्याय २९

(१०) „ „ „ ११९ अध्याय २१

(११) „ „ „ ३३१ अध्याय २४

(१२) सत्यार्थ प्रकाश सन् १८८४ पृष्ठ २०७

(१३) "लिखा है मुक्तिको जहल खाना,
"समान फांसीके उसको माना ।
"समझ ले मन में जो होवे दाना,
"ये कैसा बे ताल गीत गाया ॥ १४

(१४) "कहे वह मुक्ति से लौट आना,
"न व्यास के भी वचन को माना ।
"विरुद्ध वेदोंके है ये गाना,
"लिखेको अपने भी तो मिटाया ॥ १५

(१५) "लिखे हैं सौ वर्ष के भी जो दिन,
"जरा समझ कर उन्हें तुंई गिन ।
"थी बुद्धि स्वामीजीकी परिछिन्न,
"कि धोखा लाखों का व्हांभी खाया ॥ १६

(१६) "ध्रुवा है पृथ्वी ये वेद गावे,
"विरुद्ध उसके तु क्यों बतावे ।
"अनृत से कोई भी जय न पावे,
"कहीं न झूठे ने यशको पाया ॥ १७

(१७) "गुरुकी फोटोको शिर झुकावे,
"शिवादि मुर्त्ति वृथा बतावे ।

---

(१३) सत्यार्थ प्रकाश सन् १८८४ पृष्ठ २४१
(१४) " " " २३९
(१५) " " २४१
(१६) " " २२८

"जरा तो लज्जासे मुं छिपावे,
"कि मनको हड्डी में स्थिर कराया ॥ १८

(१८) "पति से पहिला हो गर्भ जिसको,
"नियोग फिरभी विहित है उसको ।
"कहूं समंजस मैं कैसे इसको,
"महा असंभव वचन सुनाया ॥ १९

(१९) "पति हो जिसकाकि दुःखदाई,
"उसे नियोग विधि विहित बताई ।
"यही है स्वामीजीकी बडाई,
"कि दुःख अबलाओंका मिटाया ॥ २०

(२०) "किसी का पति जो विदेश जाये,
"नियोग करके वह सुत जनाये ।
"ये धर्म कैसा गुरु दिखाये,
"कहो तो शिष्यों के मन भी भाया ॥ २१

(२१) "है सब मनुष्यों से ग्राह्य नारी,
"तो फिर न वर्जित रही चमारी ।
"ये कैसी कलयुगकी आई बारी,
"किथत धर्म और कर्म सब मिटाया ॥ २२
"कि उ

(८) दयानंद यजु प्रकाश सन् १८८४ पृष्ठ १८८
(९) " " १२०
(१०) " " ११९
(११) " " " ११९
(१२) सत्यार्थ प्रकाश " " ९७

(२२) "न कोई ईश्वरका है विजाती,
"ये गाई वे ताल क्या प्रभाती।
"वने हो शंकर के तुम घराती,
"तो उनसे फिर द्वेष क्या वढाया॥ २३

(२३) "जो ग्रंथ भाषाके सव हैं मिथ्या,
"तो होवें 'सत्यार्थ' कैसे सच्चा।
"जरा तो मन में तुं अपने शरमा,
"तेरे वचन से तुझे हराया॥ २४

(२४) "किया है कैसा नियोग जारी,
"कि भोगे दश मर्द एक नारी।
"है स्वामीजीकी ये होशियारी,
"कलंक वेदोंके सिर लगाया। २५

[ब्राह्मण सर्वस्व]

('आफताव' के इस गीतको सुनते ही सव समाजी महाशयों के चेहरे फक्क पड गये ! और इधर उधर झांकने लगे ! मगर उस परी के जादु जमाल व हुसने कमाल के सामने ऐसे मोहनी माया में दवे हुए थे कि कुछ कहने की वात नहीं थी ! बुद्धिमान ताड गये कि हां खूव चोट लगाई ! इतने में कोट पतलून चढाये,

---

(२२) सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ २४५
(२३) ,, ,, ,, ७१४
(२४) ,, ,, ,, ११८

मूं में चुरट दवायेहुए पिलपिलीसाहवकी शकलमें उठकर एक)

महाशयजी– (वीवी "आफताव" के कॉन पर होठ लगा कर कहने लगे) वाइजी ! मान लिया कि तुम्हारा कहना विलकुल ठीक है, मैं जानता हुं कि तुम्हारी और आर्य समाज के प्रेमी इन [हमारे मिस्टर साहव] की गहरी दोस्ती और हँसी मजाक दिल्लगी में जूती पैजार तक है ! मगर यहां दिन दहाडे भरी महफल में तुम्हें इनकी पोल खोलनी न चाहिये ! देखोतो विचारे शरमके मारे नीची गर्दन किये आंखोंसे जमीन खोद रहे हैं, कहीं मारग मिले तो समा जावें ! वाईजी ! तमाशवीनोंकी माईजी ! हमें अपने भाई जीकी कसम ! इनकी समाज में वडी प्रतिष्ठा है और इस समय शहरके कितने एक छोटे वडे जो इनको इस शहरमें समाजकी नींव डालने वाले होनेसे ईश्वरका भी ताऊ और वावा आदमका भी किवला समझते हैं ! और ये वहुत कुछ पढे लिखे आलिम, फाजिल, आकिल ज़हीन व फहिम हैं ! कोई भैंसके वावा और वछियाके मौसाजी तो हैं ही नहीं जो कुछ समझें हीं नहीं ! वीवी-जी ! ये सव आड़ी टेढी जानते हैं, दवे ढके नुकते पह-चानते हैं, वडे वडे न्याय और इन्साफ करते हैं, इस लिये आपको इनकी खैर ख्वाही करनी चाहिये ! नांकि वे भावकी चोटे लगानी चाहिये ! क्या तुम्हें यह चाहियेकी, " उसीके पगोंमें उसीका सिर " या " उसीकी जूती उसीका सिर " जो ऐसा है तो हम आपके रूपको

और इसको वश करे ? " वह सोना किस कामका जिससे कान टूटें " वीवीजी ! " सोनेकी कटारी पेटमें नहीं मारी जाती " इस लिये मेहरवानी करके कोई उमदा चीज गाईये !

आफताव– (धीरेसे) हैं ! इज्जत ! इज्जत ! ! हमारे गानेसे छिनाल प्रतिष्ठामें दीमक लगती है ! पितिष्ठा पी. पी. या खुदा पितिस, तोवा तोवा कैसा गंदा लफज है कि जुवानसे अदाही नहीं होता ! प्रतिष्ठातो अगर कोई रईस हो, साहूकार हो या भला आदमी हो उसकी घटे तो कुछ हर्ज भी है, और रहे ये महाशयजी ! सो तो जैसें हम वैसे ये ! जैसे हम तेल फुलेलमें रेल पेल रहती हैं, वैसे ये ! जैसे हम वीचमें वालोंकी मांग निकालती हैं, वैसे येवीचमें मांग निकाल ते हैं ! (नजदीकमें जाकर हाथसे वताती है. लोग हंसते हैं) जैसे हमारे पतिका ठिकाना नहीं, वैसे २१ग्रुरू घर-वालियोंके !

" स्वामीजी " तो दश तथा ग्यारांकी आज्ञा देते हैं मगर भीतरकी तो हमें सब खबर है. जैसे इनके धर्म ग्रंथोंमें वेशरमी की वातें हैं, वैसी हमारे मूं में ! वस सब तरहसे वरावर हैं ! न ये हमसे कम, न हम इनसे ज्यादा ! कांटेकी तोल ! राई घटे न तिल वढे ! एक वेलके तूंवडे ! सांपोंके सांपही महिमान ! इसमें मुई परतिष्ठा खरतिशकी नानीका कौनसा तैमद मैला होता है ?

अजी सुनिये ! मैं किसीके वावाजान वांके पठानकी लौंडी या गुलाम तो हूं ही नहीं जो तुम्हारे दवानेसे अपना नाम डूबाऊं ! मैंने वडे वडे शहजादे नवावजादोंकी वड़ी वड़ी महफलोंमें गाया तोभी अपनी खुशीकी चीज गाई है मगर खैर क्या मुजायका है अवके पूरी पूरी सच्ची सच्ची ही कैफियत गाऊं चाहे कुछ हो ! वहुत करेंगे तो मं वना लेगे वस हद है !

(गाना)

"कहां सभा और समाज किसका,
आया ये कलयुगका राज क्या है ?
"नया जमाना नई है रंगत,
कलतो क्या था औरआज क्या है ?
" अंगरेज लोगोंकी करके नकलें,
लाई क्या क्या अजीव शकलें ।
" है कोट पतलून बूट कालर,
चुरट मुंहमें मिजाज क्या है ? "
" टकोर तवला औ हारमोंनियम्,
नं संध्या वंदनकानाम नेस्त ।
"आप साहिव ये वीवी मम,
ये चक्की चरखा रिवाजक्या है ? ।।
"कहांतो होटल औ कहां अग्निहोतर,
इधर है व्हिश्की वरांडी वोतल ।

"सुनावे खबरें क्या आके लोकल,
नजरमें अरशोंमें राज क्या है ? ॥

"जले हैं भारतके भाग यारो,
हुए जो ऐसे नमूने पैदा ।

"वर्ण व्यवस्थाको तुम ही तोडो,
तुम्हारे शिरपै ये ताज क्या है ? ॥

"गई है विद्या अविद्या छाई,
धर्म कर्मकी हुई सफाई ।

"पढे लिखे नहीं एक अक्षर,
कहें मनूजी महाराज क्या है ? ॥

"उलटे मंत्रोंकी लेके आशा,
वनाई मर मरके पोथी भाषा।

"कहां वशिष्ट और व्यास आदिक,
कहां " स्वामी " समाज क्या है ? ॥

"हुई है विधवासे क्या अवज्ञा,
कि कैद ग्यारां खसमकी ला ।

"करे जो दिन भरमें ग्यारां ग्यारां,
तुमको इतराज आज क्याहै ? ॥

"कहां पतिव्रत कहां ये व्यभिचार,
रहे न वरकी जरूर हरवार ।

"नशस्त बाजार क्या है बदकार,
तो वेवाका अजूद वाज क्या है ? ॥

"पढ़ेगी शाला जबकि बाला,
अंगरेजी सीखेंगी सारी चाला ।
"करेंगी शेकहैन्ड आज हमसे,
तो वरकी कन्या मौताज क्या है ? ॥
"कहां तो वेद और कहां ये वंदर,
हमारे भाई वन कलंदर ।
"चुनाच चाहें न चाहें इनको,
जरातो चेहरेपै लाज क्या है ? ॥
"ववाय ताऊन है समाजी,
वचो वचो तुम रहोगे राजी ।
"सिवाय खारज अज खानदांके,
और दीगर इलाज क्या है ? ॥

इसको सुनते ही महाशयोंकी अकल चकराई, सोचने लगे कि, देखो रांडने कैसी वजहकी गजल गाई है जो मारे शरमके गर्दन झुकानी पड़ी ! लेकिन जो बीचमें सनातन धर्मी वगैरह लोग बैठे थे वे तो खूबही खुश हुए ! इतनेमें बीचमेंसे एक मशखरा बोल उठा)

धन्यरी माई ! आफताब बाई ! बड़े भाग्यसे तूं यहां आई ! इनकी सफल हुई कमाई ! तमाशबीनोंने जीतेजी मुक्ति पाई ! है तुं किसी अगले जन्मके सन्तकी जाई ! तैने फेरी धर्म दुहाई ! इनकी सच्ची भागवत सुनाई ! ये करते अकलके अंधोंकी ठगाई ! तैने जग कीर्ति फैलाई ! अरी वाहरी मेरी ताई ! अशराफोंकी भौजाई ! तेरी जय करे ज्वाला माई !"

यह सुन साराही मैफलका मकान गूंज उठा ! इतनेमें भांडोंका लश्कर भी वरसाती मींढकोंकी तरह, तरह तरहकी वोलियां वोलता हुआ आ निकला ! और तालियां वजाने लगे फटा फट् फटा फट् ! कोई किसीकी रोड़ मोड खोपडीपर चपतका चांटा जमाता था चटाक ! कोई दूसरेके सिरपर फटाहुआ वांस फटकारता था फटाक ! कोई वोलता था ! कोई हंसता था, कोई हिंन हिंनाता और कोई गधेकी तरह रेंकता था ! कोई म्यांऊं...कोइ फुस ! गरज तरह तरहके कतूहल करते करते उन्होंने एक नकल करनी शुरू की.

एक भांड सिरसे पांवतक रोडमोड (जो सवका उस्ताद था) कमरमें लंगोट ऊपरसे एक भगवें रंगकी चद्दर ओढे हुए सवके वीचमें एक फुटे हुए तेलके पीपे (टीनका कनष्टर) को मुंधा कर, उसपर महफलकी तरफ मूं करके वोला—

उस्ताद्- कढी विगाड यार निखट्टू है वस नाम हमारा ।

सवके सव- यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥

उस्ताद्- उमरा जो कहे राततो मैं चांद दिखादूं ।

खुशामदसे भरा हुआ है ये जाम हमारा ।

सवके सव- यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा।

उस्ताद्- महफल में अमीरों की हां में हां करूं ।

इन उल्लुओं में नाम है सरनाम हमारा ।

पीकदान चपर गट्टू है बस नाम हमारा ॥
दीन इमान बेच वजर वट्टू है नाम हमारा ॥

सबकेसब– यक मुफ्तका खाना हैं यही काम हमारा ॥

उस्ताद– गप्पें इधर उधरकी उडाते हैं हम सदा ।
यक झूठ यही दोस्त है गुलफाम हमारा ।
करते हैं खुशामद हम आमद इसीसें हैं ।
इन मशखरों में पंडित है नाम हमारा ।
फंदेमें मेरे आन के लाखों फंसे है काग ।
इस हाल में गुलशन में बिछा दाम हमारा ।
अजब सांड निखट्टू है बस नाम हमारा ।

सबकेसब– यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥

उस्ताद– दोनों इमान जर है रामो रहीम जर ।
मादर पिदर बिरादर है दाम हमारा ॥
जरके लिये अदालतमें झूठ बोल दूं ।
जरका गवाह नाम है सरनाम हमारा ॥
हिन्दू से नहीं काम न इसाकी कौम से ।
ज़र वालों की चौखट पै है विश्राम हमारा ।
अल्लाह ज़र खुदा है काबा है जर नबी है ।
बस जर यही है दीन और इस्लाम हमारा ॥
कपडा कहींसे खाना लाते है मांगकर ।
बस है यही रोजगार सुबह श्याम हमारा ॥

सबकेसब –यक मुफ्तका खाना है यही काम हमारा ॥

[ब्लाकूटानंद]

(इतना कहकर जो सब भांडोका उस्तांद था वो ही खडा हो कर एक दास्तान बयान करनेके लिये महेफल-में तमाशवीनोंका ध्यान अपनी तरफ खैंचता हुआ बोला)

" जनाब ! जरा कांन लगाकर सुनिये ! "

एकभांड- (उठकर उस्तादके मूंके साथ अपना कांन लगा कर खूब ऊंचेसे जी हां......! सुनाईए !

उस्ताद- (हाथसे परे ढकेलकर) अरे मूर्ख ! ये क्या करता है ? मूंके आगे कांन लगाता है ! (लोग हंसते हैं)

भांड- (धक्का लगनेसे जान बूझकर लोगोंपर गिरता हुआ) या खुदा ! कर खैर ! अजी आपनेही तो कहा कि कांन लगा कर सुनिये !

उस्ताद- मूर्ख ! तुझको किसने कहा ?

भांड- तो किसको कहा ?

उस्ताद- इन सब सभासदों को !

भांड- अच्छा ! तो मैं ध्यान लगाकर सुनता हूं (लोगोंसे) आप कांन लगाकर सुनिये ! (सब लोग हंसते हैं)

उस्ताद- जनाब ! शहर जालंधरमें "लाला घंटनाथ रंगजी" बडे पैसे वाले मालदार आसामी थे ! उनका एक लडका " अजरनाथ नंगजी " वीस बाइस वरसकी उमरका जवान एकका एकही था ! उससे एक दिन किसी बातके लिये " घंटनाथ " से बोल चाल होगई, वोभी बीबी मूंजकी रस्सीके बड़े भाई ऐंठखां मिजाजीके पूतले थे !

बस फिर क्या था ? अपने बाप " घन्टनाथ " से गुस्से होकर भाग निकले ! और शहर पूनेमें जाकर एक आर्य विश्रांति होटलके बबरचीकी जगह तीस रुपये महीनेपर नौकर होगये. इधर " घन्टनाथ रंगजी " की उमर पचपन वर्षसे ऊपर हो चुकी थी. अपने मनमें विचारने लगे कि-" हे निराकार ! तेरी मूर्तिके देखनेसे मेरी आधी व्याधी और उपाधी सबही दूर होगई है, मगर सृष्टि की आदिमें अनेक जवान स्त्री पुरुषोंको पैदा करने वाले ! निराकार ! अबमें क्या करूं ? मेरा लडका तो भाग गया ! और घरमें दौलत वे शुमार है इसका मालिक किसको बनाऊं ? हे अमूर्त्त ! तूने स्वयं आ आकर अपने सेवकोंकी खबर ली है मैं तो तेरा पक्का सेवक हूं !

" घन्टनाथ " की इस प्रार्थनापर " निराकारजी " को भी चिन्ता हुई कि बेशक ! कोई उपाय अवश्यही करना चाहिये ! तब "निराकार" ने आकर "घन्टनाथ" के अंदर प्रेरणा की, कि यतीमखानेमें " उत्तमकुल भूषण " चमारकी लडकी सुकन्या " गिदौडी " बाईके साथ विवाह कर ! उससे जो पुत्र होगा वह इस जायदातका मालिक बनेगा ! बस फिर क्या था "घंटनाथ" ने लोहेकी अलमारीसे एक थैली निकाल उ..का मूंह खोल रूपचंद मनीरामकी सुरीली आवाजसे लोगोंके दिल अपने काबूमें करलिये और घंटोंके अंदरही "घन्टनाथ" " गिदौडी " बीबीको व्याह लाये ! जब " गिदौडी बीबी " घर आई तो झाड़, फानुस और तरह तरहके

फरनीचरसे सजे हुए मकानकी शोभाको देख साक्षात् अपने आपको स्वर्गलोकमें आगई मानने लगी.

मगर ज्यों ही " घन्टनाथ " एक हाथमें लाठी लिये, दूसरा हाथ टेढी कमरपर रखे हुए, माथेमें रुईके समान सफ़ेद वालोंको विखेरे हुए, विना दातोंके जवाडे (मूंह) को हिलाते (मानो सुपारी ही खारहे हों) खौं खौं करते हुए " वीवी गिदौडी " के सामने आकर खड़े हुए, त्यों ही " गिदौडी वीवी " के तो प्राण खुश्क होने लगे ! विचारने लगी कि हाय ! हाय ! क्या यही मेरा पति है ? इतनेमें " घंटनाथ " ने वीवीको पकडनेके लिये हाथ लंवाया त्यों ही " गिदौडी वीवी " तो पीछे पैरों हटती हुई, दोनों हाथ ऊंचे करती हुई मुं फाडकर चिल्लाई कि हाय हाय ! दौडो दौडो मुझे इस राक्षससे वचाओ वचाओ ! खा'ली ! खा'ली ! ! (भांड इतना कहते पीछे भार पीठ चूतड़ोंके वल गिरा यह देख सारी महफल हंस पडी आखर उठकर फिर आगे वोला)

जनावमन् ! जव " घन्टनाथ " ने "गिदौडी वीवी" को इस तरह चिल्लाते देखा तो दोनो हाथ जोडकर गिड़ गिड़ाते हुए और कांपते हुए वोले-चु-चु-चु-चुप चुप-चुर को-को-कोई सु-सु-सु-सुनेगा सुनेगा दरमत दरमत तूं मेड़ी प्याडी प्याडी मैं कु-कुस नहीं क-क कहेता ले मैं जा-जा....ता हूं ! इतना कहकर " घंट नाथ " नीचे चले गये ! "गिदौडी वीवी" सोचने लगी कि हे, ईश्वर ! तूं वडाही दयालु है जो आज मुझे

यमराजके हाथसे बचाया! खैर बात क्या इसी तरह रोज मर्रा "घंटनाथ" की "गिदौडो बीवी" के साथ गुजरती रही! होते हवाते एक सालके बाद "घंटनाथ" की घंटी बंद हो गई और प्राण पखेरू उड़ गये! तब "गिदौडी बीवी" ने भी जो तर तर माल था वह तो अपने कब्जे किया, और मकानको ताला लगाकर अपने भाई "कुल कलंक" सूज कीपर (मोची) के पास शहर पूनें में पहुंचा और आनन्दसें रहने लगी. जब दो तीन महीने बीत गये तब एक दिन अपने भाई "कुलकलंक" से कहने लगी कि भाई! मुझ से तो अब रहा नहीं जाता इस लिये "स्वामीजी" के कहे मुताबिक कोई अच्छा आर्य पुरुष मिले तो उसकें साथ नियोग करलूं! "कुल कलंकजी" तो थेही "स्वामीजी" के पूरे भगत अपनी वहन से कहने लगे कि, एक मेरा मित्र यहां पर है, उसने मुझसे कहाथा कि, अगर कोई नियोग करनेकी इच्छावाली स्त्री हो तो, मुझे कहना! सो वहुत ही अच्छी बात हूई कि तुमने ही यह बात कही. गरज अगले दिन जाकर "अजरनाथ नंगजी" के साथ बातचीत करके "स्वामीजी" के लेखकी जय बुला दी, मियां बीवी राजी तो क्या करें काजी! कलयुगका जमाना बड़ा ही सस्ता टके सेर खाजा टके सेर भाजी! बापकी औरत और दौलत दोनो बेटेको स्वयं आ मिली! किसमत नाम इसका ही है! मगर न "गिदौडी बीवी" को यह खबर कि, ये मेरे ही खाविन्दका लडका है! और न "अजर

नाथ नंगजी" को यह खबर कि, ये मेरे ही बाप की वीवी है! आखिर एक साल के बाद "नंगजी" की मेहरबानी से "गिदौडी वीवी" को पुत्र फलकी प्राप्ति हूई, उसका नाम उन्होंने "जगत उजागर" रखा. एक दिन आनंदमें वैठे हुए "नंगजी" अपनी स्त्री "गिदौडी वीवी" से कहने लगे कि–प्रिये! अगर तुम्हारी मनशा हो तो चलों मैं तुम्हें अपने देशको ले चलूं, क्यों कि वहां मेरा घरबार बाग बगीचा सब है, और मेरा बाप भी बुड्ढा है! वह मेरे वियोगसे बडाही दुःखी हो रहा होगा! बीवीने पूछा कि, तुम्हारे बापका क्या नाम है? "नंगजी" बोले प्रिये! उनका नाम "घंटनाथ रंगजी" है. यह सुनते ही "गिदौंडी वीवी" का चेहरा सफेद पूनी हो गया! विचारमे पडी कि, हाय हाय ये क्या आफत? फिर बोली कि, भला! किस शहेर में? "नंगजी" बोले कि, शहर जालंधरमें! इतना सुनते ही वीवीजी तो चिल्लां उठी कि, हाय! हाय! मैं उन्हीं की तो औरत हूं और यह माल जर जेवर सब उन्हींकी कमाई! जब वो मर गये तब मैं भाग आई! "स्वामीजी" की दुहाई! मैं तो ठगाई सो ठगाई! मगर तुमने मुझ (अपनी) अम्मा के साथ करके सगाई! कहो तो कौन सी डिगरी पाई? अब तुम्हें अम्माके खसम कह कर पुकारूं या अम्मा के सपूत? यह सुन "नंगजी"! के भी हाथ पैर काँपने लगे और बोले कि, अरी वीवी माई! यह हुआ सो हुआ! मगर अब यह कहे कि, ये जो तेरी

कूख से "जगत उजागर" पैदा हुआ है यह मेरा कपूत? या मेरे बापका सपूत? बीबीजी बोली कि, ना ना न तेरा पूत न सपूत! यह तो उसी समाज का भूत है जिसने तेरे साथ मेरा नियोग कराया! इस नकलको देखकर तमाम महफल हँस हँसकर लोटपोट होने लगी! इतने मे एक बुड्ढा सुकडे मूंका भांड उठकर दाढी मरोडता हुआ इस दास्तान सुनाने वाले "उस्ताद" से बोला कि हूँ! नकल करी अपनी भांडकी!

"अम्माने बेटे के साथ नियोग किया तो कौन सा गजब किया?" जब "स्वामीजी" की आज्ञा है तो फिर मां बेटा क्या? और जात पांत, कोली, चमार क्या? कई मुसलमान समाजी आर्य हो गये! यह सुन दूसरा भांड बोला कि, अरे कई मुसलमान क्या सैकड़ों रावल समाज के अग्निकुंडका धुंआ सूंघ सूंघ कर आर्य होगये! तीसरा बोला कि हैं! सचमुच! तबतो—गजब टूटा! गजबटूटा! गजबटूटा! चोथा बोला—धर्मछूटा! धर्मछूटा! धर्मछूटा! पांचवेंने कहा—कर्मफूटा! कर्मफूटा! कर्मफूटा! छठा बोला अजब झूठा! अजब झूठा! अजब झूठा! सातवां बोला तबीनो ढोल फूटा! ढोल फूटा! ढोल फूटा! इस तरह कहते हुए एक के पीछे एक करके सब चले गये! लड़की वालेकी तर्फसे आए हुए सब लोगोंको पान सुपारी दिया गया और महफल बरखास्त हो गई॥

तीसरे दिन विदा होने के समय दहेज वगैरह देकर "ब्रह्मानंद" को चौक में एक पाटले के ऊपर बिठा-

कर तिलक किया. इतनेमें "ब्रह्मानंद" के चारों तरफ खड़ी हुई बहुतसी औरतों मेंसे "माया" की मामीने कहा कि "अपने यहां "छन" बुलानेका रिवाज है सो तो बुलवाओ ! इतना सुनतेही पास में खड़ी हुई एक लड़की)

चंपा-(ताली बजाकर)

" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं भाजी ।

अम्मा इसकी दया नंदिनी, ये है आर्या पाजी ।

यह सुनकर तमाम औरतें हंस पड़ी, अपनी हांसी हुई जान कर कुछक क्रोध पूर्वक ऊंचेसे)

ब्रह्मानंद-"छन पकाऊं छन पकाऊं छन पकाऊं रूठा ।

" जिस पंथमें तू है चलती, बिलकुल है वो झूठा ॥ "

चंपा- बन्ने ! घबराओ मत ! लो ! लो ! सुनो !

" आस कदम पास कदम, बीच में तूं देख ।

" एक जनी को ग्यारां धगगड, यह स्वामीजीका लेख ॥

" वाह तेरा पंथ बन्ने ! वाह तेरा पंथ ! "

ब्रह्मानंद-(हंसकर) अरी ! वाह !

" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं बाजी ।

" स्वामजीके मतसे जानी, बहुती रांडे राजी ॥

" तूं तो मान या ना मान ! "

(एक स्त्री चंपासे बोलीकि अरी जाने दे, चुपकर ! इसके साथ बहसना निकम्मा है. यूंहीं कोई अनघड पथ्थर फेंक मारेगा)

चंपा—तूंने बचके रहना ! मैं तो नहीं डरती ले देख जवाब देती हूं ! (ब्रह्मानंदसे) बन्ने !

" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं कंथ ।
" दुर्गतिका देनेवाला, स्वामीजीका पंथ ॥ और भी लो—
" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं बोल।
" स्वामीजीने पंथ निकाला, जैसा ढोल पोलं पोल ॥
" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं धाते।
" स्वामीजीका नाम न लो, छोडो गंदी वाते ॥

बन्ने ! देते हो जवाब या चौथाभी सुनाऊं ! नहीं देते ! आता ही नहीं दोगे क्या ? अम्मा का चोटला ! या आर्य समाजकी डोलची ! या बाबाजीकी दुम ! वाहरे !
(औरतोंसे ब्रह्मानंदकी तरफ हाथ करके) निरा पुरा आर्य समाजियोंके स्तंजेका डला ही है. (ब्रह्मानंदसे) अरे कुछ तो बोलो ! नहीं बोलते तो लो सुनो मेरा चौथा छन—

" छन पकाऊं छन पकाऊं, छन पकाऊं दंडी ।
" आरियोंका आदी बाबा, खसम करावे रंडी ॥ "

(चंपाकी इस चालाकीसे सब औरतें तालीयां बजाकर हँसने लगीं तब मुसकराकर)

ब्रह्मानन्द— वाहजी वाह ! चित्तोड़का गढ फते कर लिया ! क्या कहना है ! भला यहतो बतलाओ कि यहां पर तुमने आर्य समाजी किसको समझा है ? अगर मुझे आर्य समाजी समझती हो तो बेहतर है कि तुम इस अपनी

"माया" को मेरे साथ मत विदा करो! वरना जाते ही दूसरा खसम करने की इजाजत दूंगा! या मैं खुद ही कहींसे इसके लिये दयानंदीको ढूंढ लाऊंगा! बोलो झट-पट है मंजूर? और तुम में से भी किसीकी मनशा हो तो अपने अपने घरवालोंकी रजा लेलो सबके लियेही वंदो-वस्त करादूं! हां अगर बाबा दयानंदको ही इस वक्त बुरा भला कहने की तुम्हारी मनशा हो तो कसम है तुम्हें अपनी जवानी की, जो चुप करो!

(यह सुनतें ही तमाम औरतें शरमिंदी सी होगईं. आखर " ब्रह्मानंद " को जो कुछ देना दिवाना था वह देकर बरात विदा होकर घर आगई। " ब्रह्मानंद " विवाह के बाद छुट्टी पूरी होने पर 'इटारसी' अपनी ड्युटी पर चला गया. एक सालके बाद " ब्रह्मानंद " को पांच रुपये की (८५ के ९०) तरक्की होकर 'कानपुर' बदली हुई तब "शारदाचंद्र" ने घर से " माया " को कान-पुरमें भिजवादिया, वहां दो सालके बाद "माया" के एक पुत्र हुआ जिसका नाम "श्रीनाथ" रखा. इधर "विश्वं-भरनाथ " (ब्रह्मानंदके पहले पुत्र) को छठा वर्ष लग चुका था. "शारदाचंद्र" ने किशोरी, मदन, दीप, मुकुट और सुधीश वगैरः जिस स्कूलमें पढ़ते थे उनके साथ " विश्वंभरनाथ " को भी पढ़ने के लिये भेजा, और " ब्रह्मानंद " को लिखा कि आज " विश्वंभरनाथ " को पढ़ने बिठा दिया है. यह समाचार सुन "ब्रह्मानंद" एक दिनकी रजा लेकर घर आया, और "विश्वंभरनाथ" को अपने साथ ले गया.

(इस बातका कारण घर में किसी को मालूम नहीं हुआ "ब्रह्मानंद" की मति में भ्रम हो गया कहो, अथवा "विश्वंभरनाथ" की बद किसमति !

ब्रह्मानंद-(विश्वंभरनाथको धमका कर) देख खबरदार ! जो पढनेका नाम लिया ! अथवा मैंने किसी दिन तेरे मुंहसे -ख-ग या अ-इ-उ भी सुन पाया तो चमडी उधेड डालुंगा और खाने खरचनेको भी एक पाई न दूंगा ! वरना सुबह उठ कर रोज एक आना दिया करुंगा बस आनंदसे खेलना और खाना. (मायासे) देखरी ! खबरदार ! इसे एक अक्षरभी जो सिखाया तो तुं जानती है !

माया-हैं ! हैं ! नाथ ! अफसोस यह कैसी उलटी शिक्षा! आपको क्या कुछ होतो नहीं गया ? ऐसा तो, हिन्दुस्तान भरमें तो क्या दुनियाभरमें भी न निकलेगा जो अपनी सन्तानको मूर्ख बनानेकी इच्छा करता हो ! नीतिवाले तो कहते हैं कि वह माता पिता शत्रू हैं जिन्होंने अपने पुत्रको पढ़ाया लिखाया नहीं ! और फिर लोग भी क्या कहेंगे कि, इनकी अकलको क्या हूआ जो लडकेकी जिन्दगी बिगाडने परही कमर बांध रखी है ! और कुछ नहीं तो लोगोंमे यह बात तो जरुरही प्रसिद्ध होगी कि, भाई ! इसकी मां (सतेरई मासी) दूसरी है इस लियेही इसके पढ़ानेकी तर्फ ख्याल नहीं दिया जाता ! इस वास्ते आपको यह योग्य नहीं है, आगे आपकी मरजी !

ब्रह्मानंद–(अपनी स्त्री "माया" से क्रोध पूर्वक डपट कर) अरे रांड ! खबरदार ! मैं अब वो "ब्रह्मानन्द" नहीं रहा ! तूं अपनी इस नसीहतको अपने पास ही रहने दे ! अगर हड्डियां तुडवानेकी मनशा हुई होतो वो कह दे । बस जो मेरे दिलमें आवेगा सो करुंगा अगर मेरे कहनेमें जराभी चरड चूं लगाई तो ऐसा रस चखाउं-गा जो सारी उमर रोते गुजरेगी !

माया–(मन ही मन में वडी दुःखी होकर) हाय ! यह एकदम इनकी अकलमें क्या परदा पड गया ? जो रस्ता मनुष्यको अपनी जिन्दगी के उद्धार के लिये है उसीको ये बंद कर, कांटो की वाड लगाते हैं ! खैर अफसोस ! इसके भाग्यमें जो लिखा है सो होगा ! (प्रगट) प्राण-नाथ ! मुझे क्या जरुरत है ? मैं आज पीछे कभी भी इस विषयमें वात न करुंगी. अब कहा सो कहा आगे के लिये ऐसा न होगा !

ब्रह्मानंद–(विश्वंभरनाथसे) देख वेटा ! जो लडके पढ़ते हैं उन्हें मास्तर मारता है और कान पकड कर उखाडता है इस लिये पढनेका कभी नाम मत लेना ! (प्यार दे-कर) जाओ खेलो ! मगर एक ख्याल रखना ट्रेन (रेल) आनेके वक्त प्लेटफार्म पर मत फिरना वरना कहीं आ-दमीओंकी भीडमें धक्का लगनेसे कचरा जायेगा. (गर-ज कि "विश्वंभरनाथ" का समय इसी प्रकार खेल कूदमें व्यतीत होते हुए तीनवर्ष और निकल गये. इस वक्त इसकी उमर ९ वर्षकी होगई, "माया" को

एक लडकी हुई जिसका नाम " शंका " रखा. "वि-
श्वंभरनाथ " पर " माया " का जो प्रेम था वह अपने
पुत्र " श्रीनाथ" के हुए बाद दिनपर दिन कमती होता
चला जाता ही था; लेकिन पुत्री होनेके बाद बिलकुल
ही चलागया. सिर्फ पतिके डरसे स्नेह दिखलाने मात्र
रखती थी. इतनेमें " ब्रह्मानन्द " को कानपुरसे बदली
होकर ' कालपी ' जाना पडा, तब " शारदाचंद्र " ने
लिखा कि " विश्वंभरनाथ " को नौवां वर्ष शुरू हो
गया इस लिये यहां आकर उसके यज्ञोपवीत डाल जाओ.
अपने पिताकी आज्ञासे पन्द्रह दिनकी रजा लेकर अपने
घर आकर " विश्वंभरनाथ " का यज्ञोपवित किया और
फिर साथही वापस लेगया. "शारदाचंद्र" ने " विश्वं-
भरनाथ " की पढाई के संबंधमें " ब्रह्मानंद " से बहु-
त कुछ बुरा भला कहा, मगर " ब्रह्मानंद " ने एक बात
परभी ध्यान न दिया ! जब " ब्रह्मानंद " कालपी के
स्टेशनपर तबदील होकर आये तो यहां के स्टेशन मा-
स्टर पंडित "मुरारीलाल" बडे लायक और दयालू थे.
उन्ही के हाथ नीचे " ब्रह्मानंद " को काम करना पड-
ताथा ! १०-१२ रोजके बाद " पं० मुरारीलाल " ने
" विश्वंभरनाथ " को अपने लडके " जयनारायण "
के साथ खेलते देखकर अपने मकानपर बुलाया ! (स्टे-
शन के पीछे ही स्टेशन मास्तरका बंगला था, और उसी
के साथमें एक दूसरा बंगला था, जिसमें " ब्रह्मानंद "
तथा और दो बाबू रहते थे.)

पं० मुरारीलाल–(अपनी स्त्री " पद्मा " से " विश्वंरभनाथको वता कर) देखा ! यह नव सालका हूआ है, मुझे इसको देखकर वडी ही दया आती है कि, यह इतना वडा हुआ मगर इसके वापको न जाने क्या वेवकूफीका परदा पडा है ? जो पढनेसे रोकता है ! मुझे तो कल रोज मालूम हुआकि यह वात इस तरहसे है.

पद्मा–अजी आप क्या कहते हो ! इसमें "ब्रह्मानंद" की वेवकूफी है या नहीं यह तो परमात्मा जाने ! मगर इसकी जो मतरेइ मा है वोही इसकी शत्रु वन रही है, आपको क्या मालूम ? वो वाबुआनी इसके साथ क्या क्या सलूक करती है मुझे ! तो मिसरानीने उसके मिजाजका सारा क़िस्सा सुनाया है. यह तो खैर, लेकिन परसोंका जिकर है कि, अपना "जयना" और ये दोनोंहीं इन्हीं के सहन (वंगलेके आगे) खेल रहे थे कि, इतनेमें इसकी मांने इसे कहाकि, अरे वच्चन ! ले " श्री नाथ " को लेजा, और अपने आपाके पास (दफतर) में छोड आ, इसने पासमें खडे हूए घरका कामकाज करनेवाले कहारके लडकेसे कहाकि, जा वे ! इसे छोड़ आ, वह भी इतना कहनेपर झट उसे उठा कर दफतरमें ले गया, लेकिन न मालूम उस वक्त इस ऊपर इसकी मांको ऐसा क्रोध आया कि रोटी खा रही थी, एक हाथमें अचारकी मिरचं लिये हूए एकदम उठी और जहां यह खेलता था वहां आकर, एक लात इसको पीठमें मारी और झुझला कर हांथसे पकड थप्पड मा–

रती हुईने वह अचारकी मिरच इसकी आंखमें धुंस दी यह कारवाई देख अपना "जयना" तो भाग आया. और मैं ऊंचे ऊंचेसे इसका रोना सुन कर वहां गई जाकर देखूं तो ये मछली की तरह तड़फ रहा था. मैंने उसे मना किया और उसके हाथसे इसे छुड़ाया! मैंने और मिसरानीने मिलकर इसकी आंख धोई मगर आंख बिलकुल न खुली तब इसके बापको बुलवाया. उसने आकर पूछा कि, क्या हुआ? तो बोली कि, क्या करूं कहना नहीं मानता था इस लिये आंख में जरा लग गई! उस वक्त इसके बापने कुछ डपटा. और रोते हुए इसको हस्पतालमें ले गया, वहां डॉक्टरने आंख धोई. अपना "जयनारायण" भी साथ गया था उसने मुझसे आके कहा कि, अम्मा! "विश्वंभरनाथ" की आंखम से डॉक्टर साहबने मिरचके तीन बीज साबत निकाले. आंख सूजकर लाल हो गई सो तो अभीतक भी लाल हो रहा है. अब आपही विचार कीजीयेगा कि, जहां यह हाल है वहां इसका सहाई शिवाय दव के आर कान हो सकत है? इतना घमंड तो मैनें किसी औरत म नहा देखा, आज इतने दिन यहां आये को हुए सीधं मुं बातभो नहीं! मैंने बुलाया और वहां गइ तो बोली!

मुं० मुरारीलाल– (विश्वंभरको हाथ से खींचकर अपनी गोदमें बिठा) क्यों? (अपने साथ बाती हुइ बातको सुनकर 'विश्वंभर' का दिलभर आया था, मगर मुरारी-

लालके प्यार से एकदम सिसक सिसक कर रोने लगा) हैं! हैं! बेटा! क्यों ? क्यों ? (पुचकार कर) मत रोओं ! जानेदो गई गुजरी बातको ! भला यह तो कहो कि, तुम्हारा बाप तो तुम्हें प्यार से रखता है ?

विश्वंभरनाथ- (रोना बंद करके) जीहां !

मुरारीलाल- तुम्हे पढाता क्यों नहीं ?

विश्वंभरनाथ-यह में नहीं जानता !

पं० मुरारीलाल-तुम्हारा मन पढनेके लिये करता है ?

विश्वंभरनाथ- जी हां !

पं० मुरारीलाल- (तरस खाकर) अच्छा तो तुम यहां खेलनेके बहाने हमारे " जयनारायण " के पाससे पुस्तक लेकर पढा करो ! तुम्हारे बापको तो बहुत समझाया मगर न जाने उनके दिलमें क्या बैठ रही है ! सारा जहांन तो पढने पढानेको अच्छा समझता है. देखो जो तुम्हारा बाप पढा हुआ है तो ९० रुपये महीना पाता है, और जो नहीं पढे वह देखो कुली (मजूरों) का काम करते हैं. मैं भी पढ गया तो आज १२५ रुपया महींना पाता हूं. इस लिये पढनाही अच्छा है, तुम जब तक यहां हो वहां तक रोज मैं जिस वक्त " जयनारायण " को पढाता हूं उस वक्त आकर थोडा थोडा पढा करो !

विश्वंभरनाथ–बहुत अच्छा ! मगर मेरे बापको खबर होने न पावे !

पं०मुरारीलाल– नहीं नहीं ! इस बातसे बिलकुल बेफिकर रहो ! (अपने लडकेसे) जयना ! तेरे पास प्राइमर है?

जयनारायण– जी हां है !

पं० मुरारीलाल– लाओ ! (जयनारायणने निकाल कर दी, विश्वंभरसे) यह लो ! इंगलिशमें ये २६ अक्षर होते हैं आज इन्हें याद करो और अच्छी तरहसे पहचानो !

विश्वंभरनाथ– इन अक्षरोंको तो मैं पहचानता हूं, और याद भी हैं.

पं० मुरारीलाल–अच्छा–यह किससे शीखा ?

विश्वंभरनाथ–तीन चार दिनसे " जयनारायण " से ही सीख रहा हूं, हिन्दी के अक्षरभी सीख लिये हैं, और बाराखडी भी याद करली है !

पन्ना– (पं० मुरारीलालकी स्त्री, विश्वंभरके माथेपर हाथ फेरती हूई बोली) बच्चू ! तुम इसी तरह रोज " जय नारायण " के पास पढा करो ! मैं उम्मेद रखती हूं कि, यह प्राइमर दो महीनेमें पूरी हो जायगी ! और हिन्दी तो मैं तुझे बचवाया करूगी.

(इस प्रकार " विश्वंभरनाथ " पर पं० मुरारीलाल और उनकी स्त्री "पन्ना" दोनोंही अपने पुत्रके समान स्नेह करने लगे ! एक डेढ महीनेंके अंदर " विश्वंभर-

नाथ " को हिन्दी बांचना आ गया. एक दिन दुपहरके समय "पन्ना" ने विश्वंभरनाथको बुलाकर अपने पास बिठाकर एक पुस्तक हिन्दीकी हाथमें दी.)

पन्ना—लो ! इसमेंसे कुछ पढ कर सुनाओ !

विश्वंभरनाथ—(पुस्तक हाथमें ले कर) हां लो ताईजी ! सुनो—
" संसारमें किसी मनुष्यको बिलकुल तुच्छ या शक्ति
" हीन कभी नही समझना चाहिये. हर एक मनुष्यमें
" इतनी शक्ति होती है कि, किसी न किसी समय या
" किसी न किसी काममें तुम्हारा मतलब उससे निकल
" सकता है, पर जो तुम ऐसे मनुष्यका एकदम तिर-
" स्कार करोगे तो वह कभी तुम्हारे काम नहीं आवे-
" गा, तुमने किसीके साथ बुराई की होगी तो उसे
" वह प्रायः भूल जायगा, पर जो तुमने उसका तिर-
" स्कार किया होगा तो वह उसे कभी नहीं भूलेगा ।"

(विश्वंभरनाथ तो अंदर यह पढकर सुना रहा था मगर होनहार "विश्वंभरनाथ" की सतरेई मां "माया" गोदमें अपनी लडकी "शंका" को लिये हुए उसी कमरे के बाहर आ खडी हुई, और जो कुछ "विश्वंभरनाथ" ने पढा वह सब कुछ सुना. यह सुन कर.

माया—(अपने मनहीं मनमें) हैं ! इसे किसने पढाया ? और इसे डेढ दो महींनेके अंदर ही इस प्रकार तडातड पढना एकदम कैसे आ गया ? क्या ये बापसे निडर हो गया ? मालुम होता है कि, इस बाबुआनी ने ही

अपने बेटे "जयनारायण" के साथ प्राइवेट पढा कर इसे ऐसा बना दिया ! (इस प्रकार विचार करती हुई अपने कमरे में चुपचाप वापस चली गई और ऊंचेसे "विश्वंभरनाथ" को) अरे बब्बन!

विश्वंभरनाथ- हां जी ! ये आया ! (पुस्तक छोडकर सामने आकर खडा हो गया) क्या है ?

माया-क्या कर रहा था ?

विश्वंभरनाथ-करना क्या था ? कुछ नहीं ! खेलता था !

माया-अरे क्यों झूठ बोलता है ? खेलता था ? मुझे क्या ? जो कुछ तूं अभी वहां कर रहा था सो तेरा 'आपा' (बाप) स्वयं देख गया और सुन गया है. मैं तो जानती ही हूं ! देख आज तेरी कैसी चमडी उडयती है !

विश्वंभरनाथ- (कुछक साहस और क्रोध पूर्वक)
Never mind. It matters very little.
(कुछ परवाह नहीं !)

माया-अरे ! गजब ! मैंनेतो हिन्दी ही बांचते सुनाथा, मगर साथ में इंगलिशभी ! (हाथसे अपनी तरफ खीचकर कुछक प्यार पूर्वक) सच कह, तूं किससे पढता है? और कौन पढाता है ? मैं तेरे आपाको बिलकुल भी जिकर करूं तो मुझे तेरी ही सौगन्द है!

विश्वंभरनाथ-(हाथ छुडा कर) बस! तुझे क्या? तू आपाको कह कर जो कराना हो सो करा लेना !

(इतने में "ब्रह्मानंद" आ पहुंचा और "विश्वंभरनाथ" के पढने की बात को सुनकर एकदम क्रोधमें आकर उसको मारता हुआ "माया" से

ब्रह्मानंद- देखरी! तेरी जान ले डालूंगा! अगर जब तक मैं न कहुं वहां तक इसे खानेको दिया, या घरसे बाहर निकलने दिया! फिर देखूं कि, यह किससे और कैसे पढता है? (इतना कहकर पैर में पडे हूए बूट सहित "विश्वंभरनाथ" की पीठ में एक लात मारी. "विश्वंभरनाथ" के रानकी आवाज सुनकर)

पं० मुरारिलाल-(वहां पर आकर ब्रह्मानंद से) क्यों इस बचेको पीटते हो ?

ब्रह्मानंद-अजी! बडा ही शैतान हो गया है!

पं० मुरारिलाल-शैतान बनाने की घूंटी तो तुम खुद हमेशा देते हो! अफसोस कि, फिर शैतान पना करने पर पीटते हो? सच मुच मुझे मालूम होता है कि, वतमान आर्यसमाजके पिता "स्वामी दयानंद सरस्वती" जीने अपने दिलमें यही जाना होगा कि, मेरी पदवी को संभालने वाला "ब्रह्मानंद" हो ही गया है इसी लिये वो मर गये! क्योंकि प्रायः उनका भी यही हाल देखा अपने ही कथनको आप ही मथन कर खंडन करना! जैसे "स्वामीजी" की आदत थी कि, सरासर झूठी बातको भी सच्ची करनेके लीये एसा तर्क घड मारते कि, सच्चे को भी झूठा कर डालते! मगर

अंत में झूठ का झुठ निकले विना नहीं रहता! सो भाइ साहव! तुम उन्ही के भाइ वडे मियां अमीरअली के ववरचीकी तरह तो मत करो।

जैसे "अमीरअली" नामके एक मुसलमान वडे मांसाहारी थे. उसका "ववरची" एक दिन मांस पकानेके समय एक वुगलेकी एक टांग पहलेही काटकर स्वाहा करगया (स्वयं खा गया) वाकीका वनाकर मालिकके सामने खानेको ले आया. तव "अमीरअली" ने उसे देखतेही आंखें तरेर कहा कि क्यों वे! इसकी एक टांग क्या हुई? उस ववरचीने वडे अदवसे खडे होकर कहा कि, हजूर! इस जानवर (वुगले) की एकही टांग होती है! तव "अमीरअली" ने क्रोधमें लाल होकर कहा कि अरे! क्या किसी जानवरको एक पैरभी होता है? ववरचीने कहा कि, हजूर नास्ता कर लीजीयेगा फिर मैं दिखला दूंगा कि, इस जानवर (वुगले) को एकही पैर होता है! यह सुन उसका मालिक मनही मनमें भुलस कर चुप रह गया! और खाना खाये वाद "अमीरअली" ने ववरचीका हाथ पकड कर कहा कि, चल हमारे वागमें तालावके किनारे वहुतसे वुगले हैं देख एक टांगके हैं कि दो? यह सुनकर ववरची झटही साथ चल पडा और दोनों ही वागमें पहूंचे, देखें तो तालावके किनारे वहूतसे वुगले एकही टांगसे कपट ध्यान लगाये खडे हैं यह देखतेही ववरची वोल उठा कि देखिये! देखिये! फिर आप मुझेही दोष देंगे! देख लीजीयेगा इस वक्त

इन बुगलोंको एकही टांग है फिर मुझे दोष मत देना ! तबतो "अमरिअली" को बड़ाही क्रोध आया और भभक उठा " क्यों बे ! आंखोंमें धूल डालता है ?" यूं कहकर उसने जोरसे अपने हाथकी ताली बजाई ! तब उधर बुगलोंका भी ध्यान टूटा और अपने पेटमें लगी दूसरी टांगको निकाल धीरे धीरे चलने लगे, तव वह अपने बबरचीसे बोले कि, अबे ! ले देख ! अब कै टांग हैं ? बबरची ने कहा कि, हजूर ! इस जानवरको एकही टांग होती है, लेकिन ताली बजानेसे दो हो जाती हैं ! अगर जिस वक्त वो तश्तरी (रकाबी) आपके सामने लाकर रखी थी उस वक्त आप ताली बजाते तो शायद उसको भी दो टांग होजाती ! यह सुन वह " अमीरअली " अपनासा मुंह लेकर रह गये !

अब देखो तुम ख्याल करो कि, वो बबरची अमीरको सरासर ठगता है, लेकिन कहोतो, किसी ठिकाने कुछ कसर रही ? इसी तरह " स्वामीजी " की तर्क को एकाएक सच समझ लेना बुद्धिमानोंका काम नहीं है. सो-मालूम होता है कि, तुमभी बाबाजीका अनुकरण करने लगे हो ! सो भाई साहब ! तुम्हारा लड़का है चाहे मारो चाहे काटो हमको क्या ? मगर तुम्हारे जैसा अन्यायी सिवा एक " सरस्वतीजी " के अलावा मुझे तीसरा तो कोई नजर नहीं आया ! हां या यह आपकी औरत, जो आपको विपरीत विचार पर मदद देती है !

मुझे अफसोस इसी वातका है कि, अगर तुम लिखे पढ़े न होते तो आज दिन यह मकान रहनेके लिये मुफ्त ! और (९०) रुपये महीना सरकार क्या तुमको देती ? इस वक्त जो लोग तुमको " वाबूजी " कहकर बुलाते हैं वही लोग " ओ कुली " कहकर बुलाते और वोझ उठाते उठाते तुम्हार शिरमें ताल पडजाती ! टटडी लाल हो जाती ! इसवक्त हमें इस लडकेकी बुद्धि देख कर वडाही रहेम पैदा होता है कि, जिसने तुमसे चोरी छिप कर दो ढाई महीनेमें इंगलिश प्राइमर पूरी करडाली और हिन्दी भी अच्छी तरह पढना आगया है ! मगर ये बिचारा क्या करे ? *" तीर तकदीर अजसिमे तदवीर रदनमी गर्दद (लंबा श्वास लेकर फिर) भाई ! कुछ सोच समझकर लडके पर हाथ उठाओ, नाहक वेवकूफों की गिनतीमें न आओ ! लोग तो लडकेको न पढनेके लिये मारते हैं मगर आफरीन है जो तुम इसको पढा क्यों? इस बात पर मारते हो ! वाह भाई वाह ! !

ब्रह्मानन्द-आप माफ कीजियेगा ! और यह नसीहत अपने पासही रहने दीजिये गा ! आपको क्या मालूम कि, यह पढ जायगा तो जरूरही सुख पायगा ! अगर पढ-जाने पर भी दुःख हुआ तो क्या तुम इसको सुखी कर दोगे ? क्या आप इस वातका दावा करते हो ? वस इस लिये आप इस विषयमें मुझे कुछभी मत कहिये ! मेरा

---

* तकदीरके सामने तदवीर कुछ नहीं कर सकती !

लडका है जो मेरे दिलमें आयगा सोही मैं करूंगा !

पं० मुरारीलाल- अच्छा भाई ! जो तुम्हारी मरजी !
(मनहीमें)

" सीख वाको दीजीये, जाको सीख सुहाय । "

ऐसे ऐसे आदमी इस दुनियाके अंदर हैं यह मुझे आजही मालूम हुआ ! अफसोस कैसी अज्ञानता ? (मुरारीलालजीतो अपने मकान पर चलेगये. उसी दिन, विश्वंभरनाथ रातके आठ बजे की रेलमें चुपकेसे बैठकर चल दिया और सुबह लश्कर (ग्वालियर) जा पहुचा. इधर " ब्रह्मानंद " ने इधर उधर बहुत ढूंढा आखर इंद्रप्रस्थ अपने बापको तार दिया कि, जलदी खबर दिजीये कि " विश्वंभरनाथ " घरतो नहीं आया ? यहांसे कल रातको भाग निकला है.

और स्टेशन मास्टर (पं० मुरारीलाल) से तकरार करने लगा कि तुमने ही " विश्वंभर " को कहीं भगा दिया ! (मगर मुरारीलालजी बिचारेको तो कुछभी खबर नहीं थी) बारां दिनतक " विश्वंभरनाथ " का कहीं पता न लगा, इधर एक दिन " ब्रह्मानंद " एक ऐसे जालमें फँस गये कि, नोकरीसे बरखास्त होने लगे थे मगर पं० मुरारीलालजीने अपनी चालाकीसे ऐसा बचा दिया कि, नौकरीसे बरखास्त तो नही हुए लेकिन नव्वे (९०) मिलते थे उसके पछत्तर (७५) रह गये ! और वहांसे बदल कर पूनामें जाना पड़ा.

अब इधर " विश्वंभरनाथ " को लश्करमें एक रोज दरबार वाडेके पासमें खडे हुए, रॉली ब्रदर्स एम. डी. पिटन् साहबकी लेडी " मिसिज स्टॉर " ने देखलिया मिसिज स्टॉरको " विश्वंभरनाथ " के भाग जानेका हाल मालूम था, क्यों कि, स्टेशनके हातेके साथ जुडवाँ ही इनका बंगला था, इस लिये परस्परमें अच्छी तरह जान पहचान थी, बलकि पंडित मुरारीलाल (स्टेशन मास्तर) की स्त्रीके साथ इनका व्हेनपना था. इस लिये एकदम टमूटम् से उतर कर अचानक ही पीछे से आ-कर " विश्वंभरनाथ " का हाथ पकड लिया.

मिसिस स्टॉर- तुम यहां कहां ?

बिश्वंभरनाथ- (चमककर, आंखमें आंसू लाकर) आपको मालूमही है कि, मैं भागकर आया हूं.

मिसिस स्टॉर-ये टो मैं जानटी हुं कि टुम भागकर आया है मगर टुम ये बटाओ कि, यहां किसके घर और कहां ठहरा है ? टुमारा बाबुका टो पूनामें बडली होगया है! अब टुम यह बटाओ कि मैं टुमको घर भेजूं या पूना ?

(इतना कह कर वहांहीं खड़े खड़े मिसिज् स्टारने एक तार लिखकर सहीसको देकर)

वैल ! यह टारघरमें डे आओ !

(सहीस भी तार लेकर गया और देकर पीछे आया. यह तार पूने " ब्रह्मानंद " को दियाथा जिसमें लिखा

था कि—मुझे बञ्चन लश्करमें मिला है जब तक तुम्हारा ज़वाब न आयगा वहां तक इसको मैं अपने कबजेमें रखती हूं. इधर " विश्वंभरनाथ " को धमका कर) देखो ! मैंने टुमारे फाडर को टार किया है जब टक जवाब नहीं आयगा वहां टक टुमको कहीं जाना नहीं मिलेगा ! चलो मेरे साठ बंगले पर, टुमारा खाने पीने का इंटजाम " डेबीडयाल " जमाडार जो हमारे गोडाग का नौकर है वह करेगा) (इतना कहकर अपने साथ बग्घीमें बिठलाकर जिस साहबके यहां आप उतरी हुईथी वहां ले आई.—" विश्वंभरनाथ " ने ये बारा दिन—एक धर्मशालामें रातको जा कर सो जाना और दिनभर शहरमें फिरकर गुजार देना इस प्रकार काटे थे, पासमें कुल सात रुपये थे. "मिसिज़ स्टॉर" के नाम तीन दिनके बाद पूनासे " ब्रह्मानंद " ने तारमें जवाब दिया कि—" अगर यह घरको जाना चाहता है तो वहां भेज दो अगर यहां आना चाहता है तो यहां भेज दो "

मि०स्टॉर—(विश्वंभरनाथ से) लो टुम्हारे फाडर का टार आया है कि " विश्वंभरनाठ " को यहां भेज डो ! सो चलो टूमको टिकट डिलवाकर ट्रेनमें बिठला डुं !

विश्वंभरनाथ— नहीं ! मैं पूने नहीं जाऊंगा ! अगर आप यहांसे भेजभी दोगे तो मैं रास्तेसे कहीं इधर उधर उतर पडूंगा ! मि. स्टॉरको भी यह कुल हाल मालुम था कि, इसका बाप इसको पढता है तो मारता है !)

मि. स्टॉर–अच्छा टो कहो कहां जाओगे ? क्या इस टरह फिर करही जिन्डगी गुजारोगे अभी टुमारा डश सालका उमर है टुम कुछ कमाभी नहीं सकटा नाहीं किसी की नौकरी कर सकटा है इस लिये इस हालटमें टुम को इस टौर पर डर वडर फिरना डुख डाई हो परेगा ! वेहटर है कि टुम अपने वापके पासही चले जाओ !

विश्वंभरनाथ–आपका फरमाना ठीक है मगर वहां रहनेसे भी जिन्दगीको खरावी है, वहां वापके पास रहकर कौनसी मुझे शिक्षा हासिल हो जायगी ! या कोई हुनर आ जायेगा ! वस मैंने अपने दिलमें यही धारा है कि, जो होना होगा सो होगा, मगर अव वापके पासतो नहीं जाऊंगा ! (इतना कह कर एका एक रो पड़ा) (विश्वंभरनाथके रोनेकी आवाज सुनकर अंदरसे दो मम जिनके यहां " मि. स्टॉर " ठहरी हुईथी आकर उसको प्यार देने लगी. मि० स्टॉरने " विश्वंभरनाथ " को हाथोंसे पकड़, प्यार दे कर पुचकारते हुए उन दोनो लेडियोंसे " विश्वंर " का कुल हाल " ब्रह्मानंद " के न पढ़ाने आदिका कहा ! यह सुन वेभी अफसोस करने लगी.)

मि० स्टॉर–(विश्वंभरसे) वैल मट रोओ ! टुम टीन रोज यहां ठहरो ! डेवीडयाल जमाडारके पास रोटी खाओ अपना साहव(ऐम.डी.पिटिन)आजके टीसरे रोज कालपीसे आयेगा टव उनसे वाट करके टुमको जहां ठीक लगेगा वहां भेज डिया जायेगा ! टुम किसी वाटसे घवराओ मट !

(इस तरह प्यार पूर्वक आश्वासन देकर चुप कराया तीन दिनके बाद ऐम. डी. पिटिन् आये और अपनी लेडीसे " विश्वंभरनाथ " के भाग आने संबंधी कुल हकीकत सुनी. यह हकीकत सुनकर साहबकोभी बडा भारी क्रोध आया मगर अपनी लेडीसे अपनी भाषामें)

पिटन् साहब–

(१) You ought not to have kept him with you because he has come against the will of his parents, but it matters very little. When I shall go from here after a week, I shall take him with me to his house, but at first his parents must be informed.

मि० स्टॉर–

(२) (Showing the telegraph of " Brahmanand") When he first met me, I sent a telegraph to his father at that very time and this is the answer of it.

---

(१) इसको अपने पास, मा बापसे लड़कर भाग आनेकी वजहसे बिलकुल नहीं रखना चाहिये था! मगर खैर मैं एक हफतेके बाद जाऊंगा तब इसको साथ ले जाऊंगा, लेकिन इससे पहले इसके मा बापको खबर दे देना चाहिये !

(२) (ब्रह्मानंदका तार दे कर) मुझे जिस वक्त यह मिला उसी वक्त मैंने इसके बापको तार दियाथा जिसका उत्तर यह है.

पिटन् साहब–

(१) (Reading the telegraph) oh? So very careless.

(उसी वक्त साहबने एक पत्र " शारदाचंद्र " को लिखा जिसमें " ब्रह्मानंद " की अकल अच्छी तरहसे जाहिर की और उसकी तारभी साथही खतके भेजदी और लिखदिया कि, तुम्हारा " बच्चन " हमारे पास आज कई रोज़से जाने जानेको कर रहा है, मगर कहीं खराब न होता फिरे इस लिये जबरन रखा हुआ है, अगर लिखो तो छोड़ देवे, फ़िर हम जिम्मेवार नहीं कि, कहां गया ? बाद अजां पत्र तुम्हारा अगर न आया तो आजके आठवें रोज मैं आने वाला हूं तब उसको अपने साथ लेता आऊंगा !)

पिटन् साहबके इस पत्रके पहुंचते ही एक दम "शारदाचंद्र " को " ब्रह्मानंद " पर बड़ाभारी क्रोध उत्पन्न हुआ. अपने लड़के " जयंतिसहाय " को बुलाकर)

शारदाचंद्र–जयंती ! अभी जा जल्दी और एक तार लश्कर " एम. डी. पिटिन् साहब " को दे कि, मैं आता हुं, और आजही रातकी ट्रेनमें तूं लश्कर चला जा. और " विश्वंभर " को ले आ ! (इतना कहकर जो कुछ साहबने लिखा था वह सब पढ़ सुनाया !

---

(१) (तार पढ़कर) हैं ! इतनी ला परवाही !

यह बात " विश्वंभरनाथ " के सगे मामा (पंडित युगलकिशोर वकील) को मालूम हुई. वोभी "शारदाचन्द्र " से आकर.

युगलकिशोर–देखो इसी लिये हम इस लड़केको नहीं देते थे ! अजी हजरत ! वो हजारमें एकही ऐसी औरत निकले तो निकले जो अपनी सौकनके बेटेको अपना समझे ! अफसोस है कि, उस छोटेसे बच्चेकी जान पर अभीसे इस तरहका सदमा ! मैं तो जानता नहीं हूं कि, कालपीके स्टेशन मास्टर पंडित मुरारीलालजी कौन हैं ? मगर उन्होंने " विश्वंभरनाथ " की कुल व्यवस्था लिख भेजी थी कि, आपका भानजा अपनी मतरेई मां द्वारा कैसे कैसे दुःख पा रहा है वो मैं लिख नहीं सकता !

शारदाचंद्र–भाई ! मैं नहीं जानता था कि " ब्रह्मानंद " ऐसा नालायक निकलेगा ! मगर खैर अबभी कुछ नहीं बिगड़ा ! आज रातकी ट्रेनमें जाकर " विश्वंभर " को ले आते हैं !

युगलकिशोर–कौन जायगा ?

शारदाचंद्र–जयंतीसहायको ही भेजुंगा !

यूगलकिशोर–कहोतो " धैर्यपाल " (अपने लड़के) को भी साथ भेज दूं ? आज तीन रोजसे उसका साहब पंजाब गया है इस लिये दफतर बंद है.

शारदाचंद्र–अच्छी बात है दोनों ही जावे तो !

युगलकिशोर—अच्छा मैं जाता हुं और उसे तयार करके भेजता हुं !

(गरज रातकी गाड़ीमें दोनों सवार होकर अगले रोज लश्कर पहुंच गये और पिटिन् साहवके पास जा कर उन्होंने " विश्वंभर " की कुल हकीकत सुनी. " जयंतीसहाय " ने साहवको वहुतसा धन्यवाद दिया और " विश्वंभर " को साथ लेकर घरको आगये आतेही " शारदाचंद्र " ने " मुकुटविहारी " आदी (अपने दूसरे पोतों) के साथ इसको भी स्कूलमें भरती करादिया. स्कूलमें एक मान्यवर प्रतिष्ठित रईसके पुत्र " ज्योतिश्चन्द्र " के साथ " विश्वंभर " की दोस्ती यहांतक होगई कि " ज्योतिश्चन्द्र " के पिता रायसाहव और माताभी " विश्वंभर " पर पुत्रवत् स्नेह करने लगे ! उनको " विश्वंभर " के माता पिता संवंधी कुल हकीकत माळुम होगई थी ! इधर जव दो तीन महीने गुजरे तो " विश्वंभर " की चाची और ताईके अंदर भी विश्वंभर पर अकस्मात् द्वेष वढने लगा ! हरएक तरहसे झाड़ पछाड़ पड़ने लगी ! इतना ही नहीं वलकि उसपर हाथभी उठने लगा ! और तरह तरहके ताने मिलने लगे ! लेकिन " विश्वंभर " ने अपने वावा शारदाचंद्रजी, या काकाजी, या तायाजी किसीके पास चुं तकभी नहीं की ! मगर " ज्योतिश्चचंद्र " रोजके रोज कुल कार्रवाई पुछ लेता था, और अपने मा वापको

जा सुनाता था. इतनेमें भावी प्रबल ! " शारदाचंद्र " जीका स्वर्गवास होगया ! बस ! अवतो "विश्वंभर" बिलकुल निराधार होगया ! सिवाय " शारदाचंद्रजी " के औरोंकी प्रीति उसपर लोक दिखावा मात्रही थी !

" शारदाचंद्र " के गुजरे बाद " ब्रह्मानंद " भी घरको आया, आपसमें दोनोंही भाई (वंश गोपाल और जयंतीसहाय) अपनी अपनी औरतोंके कहनेमें लगकर अलग अलग होनेका विचार करने लगे ! आखिर कार अपनी औरतोंके दबावमें आकर अपने भाविको विनाही विचारे दोनों भाई अलग २ हो गये ! "ब्रह्मानंद " भी अपना हिस्सा लेकर अलग हो गया ! फिर तो क्या था ? एक हवेलीमें तीन चुल्हे सिलगने लगे ! कुछ दिनके बाद छुट्टी पुरी होनेपर)

ब्रह्मानंद– (विश्वंभरसे) बता मेरे साथ चलेगा या यहां रहेगा ?

विश्वंभर–नहीं ! मैं यहां ही रहुंगा !

जयंतीसहाय–(ब्रह्मानन्दसे) इसको यहां छोडजाना अच्छा नहीं ! क्योंकि इसकी सार संभाल लेने वाला यहां नहीं जो इसका ख्याल रखे ! बाकी जो औरतें हैं उनसे तो इसकी जानको क्लेशही क्लेश रहेगा ! मेरा रहना यहां होताही कम है जो मैं ख्याल रखुं ! और तो सुबह ही दुकानो पर जा बैठते हैं ! अरे अपनेही लड़कोंका किसीको ख्याल नहीं है कि, कौन क्या पढ़ता है ? बस

इतना जानते है कि, १० वजे स्कूल जाते हैं और पांच वजे घर आते हैं ! भला वो इनकी क्या संभाल लेंगे ? आगे तुमारी मरजी !

ब्रह्मानंद–भाई ! आपका कहना ठीक है, मैं इसे ले जाताहूं ! मगर यहांसे ज्यादाही दुःख रहेगा ! और अव इसका मेरे पास ठहरना भी मुशकिल है ! वेहतर है कि आप अपने पास रखलो ! मैं दश रुपये मासिक भेजता रहूंगा ! मगर मैं इतना तो जरूरही कहुंगा कि, अगर इसको पढ़ाओगे तो दुःख पाओगे ! हां दुकानका काम काज सिखाओ तो वेशक ! आगे आपकी मरजी !

जयंतीसहाय–अच्छा तो तुमारी मरजी ! छोड़ जाओ ! मैं तो अपने लड़के और इसमें कुछभी फर्क नहीं समझता ! लेकिन घरमें औरतोका काम ऐसाही वैसा है ! जो व-नेगा सो देखा जायेगा, तुम तो अपनी नौकरी पर पहुंचो ! लेकिन " श्रीनाथ " को तो कुछ पढाना है या उसकोभी इसकी तरह रखनेका विचार है ?

ब्रह्मानंद–भाई साहव ! आपने पढनेमें क्या सार समझा है यह मुझे नहीं मालूम पड़ता ! आप ख्यालतो कीजीयेगा कि, अपने पिता " शारदाचंद्रजी " कुछ भी नहीं पढ़े थे तोभी सारी उमर सुखी और स्वतंत्र रहे ! हमारे तुमारेसे पैसाभी अच्छा पैदा किया ! आज उन्हींकी वदौलत इन तीनो दुकानोंका काम ऐसा दृढ जम गया है कि, उसका पाया हिले ऐसा नहीं मालूम देता !

अगरच आप दोनों भाई जुदे २ हो गये हो, तोभी आज दिन उनकी मेहरबानीसे सुखी हो ! वरना ये दुकानेभी न चलती ! अगर मेरी तरहसे नौकरी पर होते तो दिखा देता कि, जो इज्जत आपकी इस वक्त है फिर कितनी रहती ! मैं क्या करूं ? लाचार हूं कि, मैंने दुकानका काम कुछ नहीं सीखा ! वरना इस सुसरी नौकरीको कभीका तिलांजली देदेता ! अगर मैं आजही नौकरी छोड़ दुकान पर वैठुं तो मुझे कोई रोकतो नहीं सकता मगर पढ़ जानेसे मेरे अंदर जंटल मैनीकी टैसका ऐसा समावेश हो गया है कि, मुझे कोट पतलून पहन दुकान पर वैठ सलमा सीतारा ले " कारचोवी " का काम करते वड़ीभारी शरम आती है ! यह मैं अच्छी तरहसे समझता भी हूं कि, जो सुख दुकानदारीमें है वह नौकरीमें (चाहे कैसे वडे औहदेकी हो) नहीं है ! मैं यह सामने देखता हूं कि, जो लोग विलकुलही पढे लिखे नहीं, इस वक्त दुकानदारीके सववसे लक्षाधिपति और करोड़ाधिपति वने नजर आते हैं ! वीसीयोंही आदमी उनकी टहल करते हैं और गादी तकीया लगाय वैठे रहते हैं ! हर किसी पर हुकम चलाते हैं ! और ' हमारे सिरपर कोई अफसर है ' इस वातकी भी उनको चिन्ता नहीं कि, ' नौकरीका वक्त होगया जल्दी चलो ऐसा न हो कि, देर हो जाये ! ' ज्यादा तो क्या ! जो सातसौ सातसौ तनखाह पाते हैं और जजसाहव कहाते हैं उनकोभी यह चिन्ता वनी रहती है तो जो उनके

हाथके नीचे छोटी छोटी नौकरी वाले है उनकी फिकर और चिन्ताका तो कहना ही क्या ? और दुकानदार चाहे कैसाही हो मगर उसको हरवक्त यह कहनेका मौका रहता है कि–"चल बे ! मैं क्या किसीके बापका नौकर हूं" इस लिये बेहतर है कि इसको मत पढाओ ! अपनी दुकानके काम काज सिखानेकाही ध्यान रखो ! अगर यह आपके पास दो चार महीनेमें रहनेसे दुकानका काम सीख जायगा तो स्वयंहीं इसका ध्यान पढ़नेसे हट जायगा ! आप दो चार महीने पास रख कर देखें ! अगर आपकी मरजी मुताबिक चले तो पास रखना वरना मेरे पास भेज देना.

जयंतीसहाय–भाई ! क्या कहना है तेरी अक्लको ! मगर खैर मुझे क्या ? जैसे बनेगा वैसे मैं इसे निबाहुंगा ! लेकिन तेरी स्त्री "माया" इसकी दुर्दशा करे और नाहक दुःख देवे ऐसे कामसे तो इसका यहां ही रहना ठीक है !

ब्रह्मानन्द–(कुल तयारी कर बग्घीमें ट्रंक और बिस्तरा रख कर विश्वंभरसे) बब्बन ! देख तायाजीके कहनेमें चलना, दुकान परही बैठना और अपना काम सीखना (इतना कह कर सिरपर प्यार दे घरसे नीचे उतरा और पीछे ही पीछे "माया" भी "शंका" को गोदमें लिये हुए "श्रीनाथ" को हाथसे पकड़े हुए सबसे (ननंद, जिठानियां और पीतस आदिसे) प्रणाम क-

रती हुई नीचे उतरी और दरवाजे पर खडे हुए "वि-श्वंभर" को देख एक हाथसे अपनी तर्फ खींच, प्यार दे, हृदयसे लगाकर वडी मीठी आवाजसे बोली कि,) बाया ! अच्छी तरह रहना और अपनी राजी खुशीका समाचार देते रहना ! क्या करूं ? तुझे यहां छोड कर जानेमें मुझे बड़ाही दुःख होता है मगर लाचार हूं तेरे आपाजीकी आदतसे ! लेकिन खैर मैं तुझे बुला लूंगी किसी बातसे घबराना मत ! अगर किसी चीजकी जरूरत पड़े तो अपने मामुके अलावा किसीको मत कहना !

विश्वंभरनाथ-(अपनी मांके हाथको अपने सिरपरसे हटा कर) मां ! मुझे तेरे हाथमेंसे उस अचारी मिरचकी खशबु अभीतकभी आरही है ! जिसके तीन बीज काल-पीके डॉक्टरने मेरी आंखमेंसे साबित ही निकाले थे और जिसकी वजहसे पांच दिन तक मेरी आंख सूझी रही थी ! अगर यह झूठ है तो बता मेरी आंखमेंसे आंसूओंकी धार क्यों चल पड़ी ? बाकी रहा " राजी खुशीका समाचार देना" सो यह तो बता कि तूने या बावूने किसी दिन यह सिखायाथा ? कि मां बापको इस प्रकार पत्र लिखना ! क्या मुझे कोई भूत बस करके दे चली है ? कि जिसके द्वारा तुझे अपनी राजी खुशीका समाचार भेजता रहुं ! बेशक ! मुझे यहां छोड जानेमें तुझे बड़ाही दुःख हो रहा है ! जिसकी गवाही मेरी आंखोंमेंसे निकलती हुई पानीकी धारा दे रही है ! और तुने जो यह कहा कि " लाचार

हुं तेरे आपाजाकी आदतसे " तो इसमेंतो शक नहीं ! वेशक ! तुम मेरे आपाजीकी आदतसे लाचार हो और आगेको लाचार ही रहोगी ! ! " मगर खैर मैं तुझे बुला लुंगी " सो परमात्मा तुम्हें दुःखमें दुःख न दे ! क्यों कि, एक तो तुम मेरे वापकी आदतसे लाचार हो ! और फिर मेरीभी आदतसे लाचार होना पड़ेगा ! इस लिये परमात्मा वो दिन नाही दिखावे ! जिस दिन तुम को मुझे बुलानेका काम पड़े ! रहा " किसी वातसे घवडाना मत " सो अव घवडाहटको तो तुमही लेचली हो ! फिर घवडाऊंगा किससे ? और यह जो तूने कहा कि " अगर किसी चीजकी जरूरत पड़े तो अपने मामुंके अलावा और किसीको मत कहना " सो मरतो जाऊंगा मगर मामुसे तो एक दमड़ीभी मांगने न जाऊंगा ! भीख मांग खाऊंगा, लेकिन तुमसेभी एक पाई न मगाऊंगा ! वस मैंभी आजसे अव अपनी किसमत पर ही खेल खाऊंगा ! अव क्यों नाहक मेरे सिरपर हाथ फेर तकलीफ उठाती हो ? जाओ देर हो जायगी ट्रेनका वक्त आया, वग्घी वाला जलदी कर रहा है !

(" माया " विश्वंभर " के यह वचन सुन कर मन में वड़ी दुःखी हुई ! मगर जलदीके लिये कुछ वोल न सकी ! सव वग्घीमें वैठ स्टेशन पर पहुंचे और टिकट ले रेलमें वैठ विदा हो गये. इधर " ब्रह्मानन्द " के चले जाने पर "विश्वंभरनाथ " अपने मित्र " ज्योतिश्चंद्र "

के मकानपर पहुंचा और उससे कुल हकीकत कह सुनाई और " ज्योतिश्चंद्र " ने वह कुल हकीकत अपने मां वापसे कही.)

रायसाहव-(ज्योतिश्चंद्रका पिता विश्वंभरसे) देखो बेटा ! तुम किसी वातसेभी तकलीफ मत पाना, जैसा मन चाहे वैसा पहनो और खाओ, तुम " ज्योतिश्चंद्र " के साथ साथ पढो, अगर इससेभी आगे पढनेकी तुम्हारी मनशा होगी तो मैं तुमको पूरी मदद दूंगा ! वस ज्यादा क्या कहुं ? तुम मुझे और " ज्योतिश्चंद्र " की मांको अपने माता पितासे अधिक समझो. मेरे लिये जैसा " ज्योतिश्चंद्र वैसाही तूं, वस ! किसी वातसेभी फरक न समझना (इतना कहकर दरवाजे परसे एक चपड़ासी को बुलाकर कहा कि) तूं कोठी पर जा और " अलताफ़हुसैन " दरजीको साथ लेकर आ ! (यह सुन चपरासी दरजीको बुला लाया) दरजीके आनेपर " रायसाहव " ने जिन जिन कपड़ोंके शूट " ज्योतिश्चंद्र " के थे उन्हीं उन्हीं कपड़ोंके आठ शूट एक दम " विश्वंभरनाथ " के लिये बनानेको दे दिये, और दरजीसे कहा कि, सव काम छोडकर पहले यह तयार करदो. दरजी भी वहुत अच्छा ! कहकर चला गया.

विश्वंभरनाथ-(रायसाहवसे) यह आपने जो मुझपर मेहरवानी की सो तो ठीक, मगर इन कपड़ोंको पहन कर

जिस वक्त मैं घर गया उस वक्त मेरे तायाजी वगैरह क्या अपनी छाती माथा पीटकर हाय किये विना रहेंगे?

रायसाहव–वब्बन! अव तुझे उनसे डरे ठीक न होगा! अगर तेरेसे पूछे तो तूंने "ज्योतिश्चंद्र" का नाम ले देना और कहना कि मैं क्या करूं? मैं उसे वहुत हटाता हूं मगर वो कहता है कि, मैं अपने मित्रके लिये जो चाहे सो करूंगा! अगर आपको इसमें ठीक नहीं लगता तो आप जाकर "ज्योतिश्चंद्र" के वापको कहदीजिएगा. जिस वक्त वो मेरे पास आयेंगे तव मैं आपही समझ लूंगा! और मेरा तो विचार है कि इस आते ऐतवारके रोज जो वड़े वड़े रईस कमेटी घरमें इकट्ठे होते हैं उनके सागने ही तेरे संवंधमें "ब्रह्मानंद" की हालतका फोटो खैंच कर वतलाऊंगा; जोकि वह लोग जाने कि पढे हुओंकाभी यह हाल होता है!

विश्वंभरनाथ– ना साहव! ऐसा मत करना! क्यों कि उसमें तो पंडित सुन्दरसहाय जज्ज भी मेम्वर हैं और वो मेरे फूफाजी हैं अगर सुनेंगे तो मुझे ही वुरा भला कहें गे!

रायसाहव–हां! वस वस! अब कोई डर नहीं! मेरा और उनका रोजही अपने क्लवमें आना जाना होता है तूं ने देखा ही है कि वहां शामको रोज ही आकर वो टैनिस खेलते हैं. अब कुछ हरकत नहीं. वह तेरे फूफा-

जी है ? ओ ठीक ! (बस इतनी बातचीत होते ही दश बज गये, सबने रोटी खाई, स्कूलका वक्त हो जाने पर राय साहबने जान बूझके ही " ज्योतिश्चंद्र " से तो कहा कि विक्टोरिया बागमें होकर सीधा स्कूलको चला जा, और उसके (ज्योतिश्चंद्रके) लिये जो दो घोड़े की बागनेड गाड़ी स्कूल ले जानेको बाहर आकर खड़ी थी उसके लिये " विश्वंभर " से कहा कि) " बब्बन ! इस बग्घीमें बैठ कर दरीबेमें अपने तायाजीकी दुकानोंके सामनेसे होकर फव्वारेके रस्ते स्कूलको जाओ ! तेरी किताबें कहां हैं ? घर या दुकान पर ?

विश्वंभरनाथ–मैंने आज तक जोड़ीकी बाग (लगाम) हाथमें भी नहीं ली ! एक होता तो लेभी जाता ! और फिर दरीबेमे ! बाजार तंग है, आती जाती बग्घिओंसे संभालना बडा मुशकिल है ! ना साहब मैं तो पैदलही चला जाऊंगा. मेरी किताबें दुकान परही हैं.

रायसाहब–(पीठपर थापी देकर) अरे वाहरे डरू ! तूं जातो सही बैठ बग्घीमें ! मैं सहीसों को समझा देता हूं. तेरेसे छोटे छोटे भी लडके कैसी भीड़मेंसे अपनी असली चालमें बे धडक बग्घियां निकाल ले जाते हैं ! तो तूं धीरे धीरे सिर्फ बाग पकड़े हुए न ले जा सकेगा ? (ज्योतिश्चंद्र तो अपना बस्ता उसी बग्घीमें रखकर पैदल ही चलागया और राय साहबके इतना कहने पर " विश्वंभर " बग्घीमें बैठ गया और जोडीकी बागडोर

हाथमें लेली ! मगर कभी ऐसा काम न करनेसे हाथ धूजने लगे ! रायसाहबने सहीसोंको अच्छी तरह समझा दिया और कहदिया कि तुम घोडोंके बराबर रहना. "विश्वंभर" बग्घीको लेकर दरीबमें अपनी दुकानके सामने पहुंच कर बग्घी खडी करके नीचे उतरा और दुकानके अंदर जाकर अपने पढ़नेकी किताबें लेकर अपने ताया (जयंतीसहायसे) "मैं स्कूल जाता हूं" इतना कहकर फिर बग्घीमें आ बैठा और बाग पकड़कर चल दिया ! "विश्वंभरनाथ" की यह हालत देखकर, क्या ताया, और क्या काका, और क्या चचेरा भाई सबके सबही विचारमें पडगये कि "हैं ! यह विश्वंभर !" श्यामके वक्त फिर "विश्वंभर" स्कूलसे छुट्टी हुए बाद उसी जोडीमें "ज्योतिश्चंद्र" के साथ दरीबेमें पहुंचा और बग्घीसे उतर कर दुकानपर बैठ गया और "ज्योतिश्चंद्र" अपने घर चला गया.

जयंतीसहाय–(विश्वंभरसे) अरे बब्बन ! यह तेरे लिये अच्छा नहीं ! कि तूं एक दम इस तरह उन रईसोंके लड़कोंके साथ मिल, अपनी बुनियादसे बाहर होकर अपने भाई बिरादरोंको उंगली करनेका वक्त देवे ! आज तीसराही दिन "ब्रह्मानंद" को गये हुए हुआ है कि, तूं कुछ और का औरही नजर आता है ! अरे ! ख्याल तो कर कि, वो जातके खत्री और हम ब्राह्मण ! उनके साथ इस प्रकारका खान पान कैसा ?

मुझे " मदन " " दीप " और, " मुकुट " ने आकर सुनाया है कि " ज्योतिश्चंद्र " के लिये घरसे रोज दो बजे उनका मिस्सर टिपन (सेव संतरा वगैरह फ्रूट और दाल सेव व मिठाई वगैरह खानेको) लाता है तो " ज्योतिश्चंद्र " उस वक्त " विश्वंभर " को बुला ले जाता है और दोनों ही मिलकर खाते हैं. वच्चन ! जरा सोचनेकी बात है कि, वो यह वर्त्ताव तेरे साथ क्या सारी उमर कर सकेगा ? क्या वह अपने वापकी मिलकतमेंसे तेरेको हिस्सा वांट कर देदेवेगा ? आज तूंने कई दिनसे खरचनेको पैसेभी नहीं मांगे ! बेटा ! " ब्रह्मानंद " एक आना रोज देनेके लिये मुझे कह गया है, सो सुवह स्कूल जाते हुए (वह तो स्कूल भेजनेको मना कर गया है मगर खैर) ले जाया कर, और रोटीभी घर खाया कर ! मैंने सुना है कि तूं कलसे घर रोटी खानेभी नहीं गया सो ठीक नहीं ! मेरा इतना ही कहना काफी होगा ! (हाथमें एक दुअन्नी देकर) जा उठ और घर जा रोटी खा !

विश्वंभरनाथ—बस तायाजी साहब ! खतम है आपको मेरे लिये इस नसीहतसे ! मैं वहां ही रहूंगा जहां मेरा जी चाहेगा ! मैं वही करूंगा जो मेरे जीमें आयगा ! मुझे आपसे खर्च लेनेकी जिस दिन जरूर पड़ेगी तो मांग लूंगा ! मैं जिसके साथ रहता हूं या जिनके यहां रहता हूं शहरमें वह विरलाही होगा जो उन्हें न जानता हो !

आप क्या ? और आपके भाई क्या ? सबको ही उनकी खुशामत करते देखता हूं ! हां ! अगर मैंने किसी चोर या ज्वारीके साथ दोस्ती की हो तो कहो ! मुझे इस वातका रोना आता है कि, आज मुझे दशवां साल पूरा होने लगा मगर मैं कुछ नहीं पढ़ा ! सचतो यह है कि, थोडेही अरसेमें मुझे " मदन " के बरावर होते देख आपको इर्षा हो रही है ! तायाजी ! आप खामोश होकर वैठियेगा ! न मुझे आपकी परवाह है और नाही वापकी है ! यहभी सिर्फ आपका मुझपर प्रेम है इस लिये दुकानपर आता हूं कहो तो आगेको यहांभी न आया करूं !

(" विश्वंभर " की इस तरहकी वातोंको " जयंतीसहाय " नीची गर्दन डाले सुनते रहे, मगर मूंसे कुछ नहीं बोले ! बोल कर बनाते भी क्या ? खैर एक घंटेके वाद उधर " रायसाहव " ने उसी वागनेड गाडीमें घोडोंकी दूसरी जोडी जुडवाकर कोचवानसे कहा कि, जाओ " शारदाचंद्र " की दुकानपर वग्घी ले जाओ और यह लो चिठ्ठी वहां पर " विश्वंभरनाथ " होगा उसको देदेनी. " रायसाहव " के हुकमको सुनतेही साईसनेभी गाडी लेकर " शारदाचंद्र " की दुकान पर आके चिठ्ठी " विश्वंभरनाथ " को दी. " विश्वंभर " चिठ्ठीको वांचतेही दुकानसे उठकर वग्घीमें वैठ जोडीकी वाग मोड़ चल दिया ! थोडीही देरमें " रायसाहव " की

कोठी पर आ पहुंचा. कुल हकीकत उनसे कह सुनाई जिसको सुनकर)

रायसाहब–भाई ! एकदम उनसे तडाक फडाक करना ठीक नहीं ! मगर खैर जो हुआ सो हुआ ! रोटी खाई कि नहीं ?

विश्वंभर–नहीं ! मैं घर गया नहीं ! (पासमें खड़ी हुई ज्योतिश्चंद्रकी मां)

चंद्रप्रभा–(विश्वंभरसे) अच्छा तो चल अभी "ज्योतिश" खाही रहा है (यह सुन " विश्वंभर " उठा और हाथ पैर धो चौकेमें " ज्योतिश्चंद्र " के पास जा बैठा. मिसरानीने थालमें खानेको परोस कर दिया, दोनोंही आनंदसे खाने लगे. इतनेमें " मैन्युअलपाल " जो रोज " ज्योतिश्चंद्र " को पढ़ाने आया करते थे, आ पहुंचे. आप " क्रिश्चियन " थे, हाईस्कूलमें डेढसौ (१५०) रुपये महीने पर सैकिन मास्टर थे, इनको "रायसाहब" " ज्योतिश्चंद्र " को शामको सात वजेसे नव वजे तक प्राईवेट पढ़नेके लिये पैंतीस रुपये माहवारी देते थे. मास्टर साहबके भी दो लड़के " ज्वैनपाल " और " ईशपाल " साथही आया करते थे. क्यों कि, ये ज्योतिश्चंद्र " के हम जमाती थे.)

रायसाहब–(मास्टरसे) मॉस्टर साहब ! " विश्वंभरनाथ" इन तीनोके साथ पढ़ता तो है, मगर अब आप इसपर

जरा ज्यादाही ख्याल रखेंगे तो बेहतर होगा !

(इतना कहकर " विश्वंभर " की कुल हिस्टरी मास्टरजीसे कह सुनाई मास्टरजी भी एक वडे लायक और रहम दिल थे. "विश्वंभर" की हैरत भरी हालतको सुनकर " रायसाहव " से)

मॉस्टर–रायसाहव ! शावास है ! धन्य है ! आपको जो इस पर अपने लडकेसेभी वढकर आप महब्बत रखते हैं, मैं अपनी तरफसे किसीभी तरहकी कसर नहीं रखूंगा ! बस अगर यह इसी तरह महनत करता रहा तो मैं अ-वके इसको एकदम ' डवल परमोशन ' दिलाऊंगा.

(मास्टरका यह कहना सुनते ही " ज्योतिश्चंद्र " और " ज्वैनपाल " भी वोल उठे कि, हमभी डवल परमोशन देंगे !

(दो जमायतोंका एकदम इम्तिहान देनेका नाम डवल परमोशन है.) " ज्योतिश्चंद्र " की उमर दश वर्षकी और " ज्वैनपाल " की सात वर्षकी थी. गरज तीनों हीं पढ़ते रहे " विश्वंभर " ने घर जाना विलकुल छोड दिया, मगर ताया " जयंतिसहाय " से स्कूल जाता हुआ मिल जाया करता था. ! " विश्वंभर " को इस प्रकार सुखी देखकर घरके सवही जलने लगे ! इसी लिये स्कूलमें आये हुए चचेरेभाई किशोरी, मदन,मुकुट, दीप, चंद्रसेन आदिकोंने भी " विश्वंभर " के साथ

बोलना छोड दिया ! इसी तरह आठ महीने बीते बाद दिसंबरमें सालाना इम्तिहान शुरू हुआ, जिसमें " ज्योतिश्चंद्र " " ज्वैनपाल " और " विश्वंभर " यह तीनोंही डबल परमोशन देकर चौथी जमातमें चढ़गये ! यह बात जब " जयंतीसहाय " को मालूम हुई तो वे स्वयं आकर "रायसाहब" को मिले, और "विश्वंभर" संबंधि बहुत कुछ बात चीत करके कहा कि, आपकी इसपर बड़ीही मेहरबानी है ! मगर इसको इतना तो जरूरही समझाना चाहिये कि, रोटी घर जाकर खा आया करे ! फिर भले यहांपर सारा दिन. और रात रहे ! और तो कुछ नहीं, मगर बिरादरीके लोग तरह तरहकी बातें करते हैं ! आप दाना हैं ! आपकेही कहनेसे मानेगा, हमको तो यह कुछ नहीं समझता ! जिस किसीने एककी चार सुननी हों वो इसे समझावे !

रायसाहब-(जान बुझकर) हैं ! क्या यह घर नहीं जाता ? रोटी यहांही खाता है ? भाई ! मुझे तो मालुम नहीं ! " ज्योतिश्चंद्र " जाने ! यह इसका दोस्त है ! बच्चे हैं इनको क्या कहा जाय ? मुझे तो आपसमें हिल मिल कर पढ़ते नजर आते हैं ! मास्टर " मैन्युअल पाल " भी तारीफ ही करते हैं ! अबके जो इन्होंने डबल परमोशन दिया है यह औरभी खुशीकी बात है (विश्वंभरसे) अरे " विश्वंभर " ! ये तेरे तायाजी क्या कहते हैं ? तूं घर रोटी नहीं खाता ?

विश्वंभर–मैं घर रोटी नहीं खाता तो क्या जंगलमें खाता हूं ? मालूम होता है कि, इनको भी मेरे बाप वाली कसर है ! अथवा भांग पीकर आए होगें ! "बुलाकी" अचार वालेके यहांसे निंबू मंगाकर खिलाओ ! वरना अभी कुछ औरका औरही कह बैठें गे !

रायसाहब–(डपटकर) ओ यू डैम फूल ! क्या अपने तायाको ऐसे बोलना चाहिये ? इससे मालूम होता है कि, तूं बडा शैतान हो गया है !

(" जयंतीसहाय " " रायसाहबसे " प्रणाम कर घरको आये और " ब्रह्मानंद " को कुल समाचार लिखभेजा ! " ब्रह्मानंद " ने भी उनके लिखनेपर कुछ गौर न किया ! बलकि लिख भेजा कि जो उसकी मरजीमें आये सो करनें दो ! मैं आकर क्या बनाऊंगा ? कभी मैं आकर साथभी ले जाऊं तो अब वो मेरे पास नहीं ठहरेगा ! इत्यादि.

इधर " रायसाहब " की अपने ऊपर आगेसे भी ज्यादह मेहरबानी है यह समझ कर "विश्वंभर" बोल चालमें बहुत खुल गया, दिनपर दिन उसका यह स्वभाव बढने लगा और उसके मनमें बिलकुल किसीका डर न रहा ! सच है ! बचपन सो बचपन ही है ! उसमें विवेक और विचार कहां ? अब तो जानबुझकर अपने ताया और काका जात भाइयोंको चिढ़ाने लगा. पहले तो एकही दफा दुकानके सामने

से वग्घी में वैठ कर निकलता था अवतो स्कूल जाना जवभी जोडी (वग्घी) में वहांसे जाना और आना जवभी जोडीमें वहांसेही आना, शामके वक्त फिरनेको जाना जवभी जोडीमें वैठ दुकानके सामने होकर जाना! ये लोग " विश्वंभर " को इस तरहके मौज शौकमें देख कर आगेसेभी ज्यादा जलने लगे! और हरएक तरहके ताने और वोलियां मारने लगे ! इनकी इस प्रकारकी ईर्षाको देखकर " विश्वंभर " ने भी क्रोधमें आकर इनको कुछ वुरा भला वक मारा ! मगर यह वातें रायसाहवको मालूम नहीं हुई !

एक दिन " विश्वंभर " के काका "वंशगोपाल" को वड़ा क्रोध आया ! वो " विश्वंभर " के फसानेके इरादेसे आठ आनेके भुने हुए चने लेकर ठंडी सड़क पर आ खड़ा हुआ ! इतनेमें सामनेसे आगे आगे वाई-सीकल पर " ज्योतिश्चंद्र " और पीछे वग्घीमें घोडोंकी चालको तेज किये हुए " विश्वंभर " को आते देख, सड़कके किनारे खड़ा होकर, भीख मांगने वाले कंग-लोंको आवाज दी कि, लो रे चने ! उसकी आवाज सुनते ही एकदम इधर उधरसे २०–२५ कंगले इकठ्ठे होगये और अपना पल्ला फैला कर " लालाजी ! मुझे ! पंडितजी ! मुझे ! तेरे वच्चे जियें मुझे ! " इस प्रकार वोलते हुओंको " वंशगोपाल " एक एक मुठ्ठी चनोंकी वांटने लगा और वांटते वांटते सड़कके वीचमें आ गया,

इतनेमें " ज्योतिश्चंद्र " तो वाईसीकलको किनारेसे लेकर निकल गया और " विश्वंभर " जिस वक्त पासमें आया उस वक्त वग्घीके पीछे खडे हुए दोनो सहीसोंने " वचो, वचो ! " " हट जाओ, हट जाओ " वहुत पुकारा लेकिन " वंशगोपाल " चने वांटता हुआ आगे से न हटा, इस लिये वो कंगलेभी वीचसे न हटे. अपनी चालमें एक दम छुटे हुए घोड़ोंकी वागडोरीको " विश्वंभर " ने अपनी ताकतके मुताविक वहौत खींचा मगर वे न रुके, जव पीछे खडेहुए सहीसोंने देखा कि इनसे घोड़े नहीं रुकते तव दोनोंही जने कूदकर आगे आनेको दौडे, इतनेमें " वंशगोपाल " ने वहुतसे इकट्टे हुए कंगलोंको जान वुझकर एकदम ऐसा जोरसे धक्का मारा कि उनमेंसे दो आदमी और एक वुढ़िया उन घोड़ोंके पैरोंमें आ पड़े ! मगर सहीसोंने एक दम घोड़ोंको आगे होकर रोक लिया ! उन कंगलोंको वग्घीके नीचे आया जान " विश्वंभर " ने वाग खींचते हुए वड़े जोरसे चीख मारी, उसकी चीखको सुनकर " वंशगोपाल " के मुंसे एक दम यह आवाज निकली कि, " मर सुसरे ! ले और ले वग्घीमें वैठनेका स्वाद ! " इसवक्त " गुरु सुखसिंह " नामा एक आदमी एक दुकान पर वैठा हुआ इस कार्रवाईको देख रहा था, उसने उठकर " वंशगोपाल " को पकड़ पीठपर थप्पड़ ठोक कहा कि अवे ! क्या वोला ? फिर तो वोल ! यह भी जानता है कि, यह लड़का किसका है ? क्या रायसाहवको

नहीं जानता ? (यह यही जानता था कि, ये लड़का "रायसाहब" का ही है. क्यों कि, यह रोज उनकेही साथ और उन्हींकी बग्घियोंमें आता जाता था, उसे यह मालूम नहीं था कि, यह इसीके भाईका लड़का है.)

विश्वंभर- (अपने काकाको पिटा जाता देख उस थप्पड़ मारने वाले से) ए ! खबर दार ! अब हाथ उठाया सो उठाया, मगर अब संभालना !

गुरु सुखसिंह-वाह साहब वाह ! अच्छी कही ! मैं अच्छी तरह जानता हूं कि, इसकी जबानसे आपके लिये जो गाली निकली है वो अगर आप सुन पाते तो हरगिज भी मुझे न धमकाते ! आप इसे गरीबोंको चने बांटते देख धर्मी जान कर मुझे धमकाते हो ! यदि आप इसकी हिमायत न लो तो अभी इसको कोटवालीमें ले जाकर बता दूं कि, चने किस तरह बांटे जाते हैं !

("ज्योतिश्चंद्र" ने आते ही, बड़े ऊंचे ऊंचे "हाय मारडाला" "हाय मारडाला" इस प्रकार चिल्लाते हुए उन तीनों कंगलोंको चुप कराया, बहुतसे लोग इकट्ठे हो गये, उस जमातको देख सहीसोंने "विश्वंभर" से कहा कि, आपतो बैठ कर चलिये, ये आपही सुलट लेगें ! कौनसी किसीकी जान निकल गई है ! यह सुनतेही "विश्वंभर" तो बग्घीमें बैठ कर चल दिया. इतनेहीमें दो तीन सिपाही जो दूर दूर अपने पहरे पर

खडे थे आ गए उनको " गुरु मुखसिंह " ने चने बांटने वाले (वंशगोपाल) का हाथ पकड़ा दिया ! और कहा कि, यह सडकके वीचमें खड़े होकर चने बांटता था (वग्घीमें जाते हुए विश्वंभरकी तर्फ उंगली करके) इन्होंने वहुत पुकारा, सहीसोंने वडी आवाज दी, मगर यह न हटा, और इसने कंगलोंको जान बुझ कर घोड़ोंकी तर्फ धक्का दिया. गनीमत समझो कि वग्घी-का पहिया आगे नहीं वढ़ा वरना इन तीनोंही कंगलोंका काम हो लिया था ! उस वक्त वाजारके सव लोगोंनेभी इसी तरहसे कहा ! यह सुन " वंशगोपाल " का हाथ पकडकर सिपाहियोंने कहा कि—लालाजी चलो सीधे कोतवालीमें, उन तीनो कंगलोंको भी साथ ले लिया. सव कोतवाली को चल पड़े, उनमेंसे एक जो वुढ़िया थी, उसके पैरकी एडी पर घोडेकी टाप पडनेसे कुछ चोट आई थी, सो वह चलते हुये वहुतही चिल्लाती थी ! सामनेसे " डाक्टर हेमचन्द्र " आ रहे थे, उन्होंने पूछा कि, यह क्या मामला है ? एक सिपाईने कहा कि, ये तीनों " रायसाहवकी जोडी (वग्घी) के नीचे आगये ! यह सुन उन्होंने कोतवाली जानेसे रोका, कंगलोंको पांच पांच रुपये और उस वुढ़ियाको दश रुपये देकर लौटा दिया और अपने दवाखानेमें ले जाकर उस वुढ़ि-याके पैरको धोकर दवाई लगा दी, और सिपाईयोंके हाथसे पंडितजी (विश्वंभरके काका वंशगोपाल) कोभी छुडवा दिया ! यह लीला देख पंडितजी मनही मनमें

पछताते और हाथ मसलते अपनी दुकान पर आ बैठे ! सच कहते हैं कि, जो दूसरेका बुरा चाहता है वह अपनाही बुरा कर बैठता है " जो खाडा खोदे सोही पड़े ! "

यह कार्रवाई जब " रायसाहब " को मालूम हुई तो उन्होंने उसी वक्त एक आदमीके हाथ बीस रुपये डाक्टर हेमचन्द्रको भेज दिये ! और एक पत्र लिख भेजा कि " आपने बड़ी मेहरबानी की ! मैं आपका ऐसानमंद हूं ! " अगले रोज खुद मिलकर कुल कार्रवाई कह सुनाई कि यह " विश्वंभर " के लिये उसके काकाने जानकर की थी ! तब उन्होंने कहा कि, अब " विश्वं-भर " को होशियार कर देना ! क्यों-कि जिनका उस-के लिये ऐसा बुरा ख्याल हो रहा है वो कभी न कभी अपना दाव खेले विना न रहें गे !

इधर " विश्वंभर " के दिलमें उस वक्तसे कुछ ऐसा दहल बैठ गया कि, खुद बागडोर पकडकर बग्घीमें बैठनेका कभी इरादा नहीं होता था, लेकिन " रायसा-हब " ने उसके इस बुजदिल ख्यालको निकाल कर उसको इतना निडर बना दिया कि भरे बाजारमेंसेभी निडर बग्घी भगानेका उसमें हौंसला खुल गया ! घोड़ेपर चढ़नाभी अच्छी तरहसे जान गया, एक दिनका जिकर है कि " विश्वंभर " घोडे परसे गिर पडा,

हाथकी कुंहनी उतर गई और सारा बदन छिल गया ! "रायसाहब" ने उसी वक्त डाक्टर हेमचन्द्रको बुला कर दिखलाया, उन्होंने कहा कि, घबडानेकी बात नहीं है, यह दो हफतेमें ठीक हो जायगा, इस तरह कह कर हाथकी हड्डी चढ़ाकर बांध दी. इस दशामें "विश्वंभर" का स्कूल जाना कुछ दिन के लिये बंद हो गया ! पांच सात दिन तक "विश्वंभर" को "मदन, दीप, किशोरी" आदिने स्कूलमें न आते देखकर अपने बापको जाकर कहा कि, कई दिनसे "ज्योतिश्चन्द्र" तो स्कूलमें आता है, मगर "विश्वंभर" नहीं आता ! यह सुन "जयंतीसहाय" कहने लगे कि, मैंने भी कई दिनसे उसको दुकानके आगेसे निकलते नहीं देखा ! न मालूम क्या कारण ?

अगले रोज जयंतिसहाय" ने रायसाहब" के यहां जाके ड्योढी पर पूछा "विश्वंभर" कहां है ?

दरवाजे पर बैठे हुए एक चपडासीने कहा कि, अंद-रही हैं ! यह सुन "जयंतीसहाय" ऊपर आये कि, सामनेही कमरेमें पलंग पर "विश्वंभर" को लैटे हुए देख, पासही एक कुरसी पर बैठ गये ! इतनेहीमें "डाक्टर हेमचन्द्र" भी अपने आनेके नियमित समय पर आये, और हाथका पाटा खोलकर दवाई लगाई और "जयंतीसहाय" को उन्होंने सब हाल मालूम

कर दिया, मगर " विश्वंभर " कुछ नहीं बोला ! थोडी देर ठहर " जयंतिसहाय " उठकर चले गये !

इधर " विश्वंभर " के इम्तिहानमें सिर्फ दो महिने रह गये थे, अबकी वार भी इसने डवल परमोशन देनेका बिचार कर रखा था, यद्यपि पास होनेका यकीन तो नहीं था तोभी डवल परमोशन देनेका नाम लिखाही दिया, राजी हो जाने पर स्कूलमें जाने लगा, मेहनत करके " ज्वैनपाल " "ज्योतिश्चंद्र" के साथही इम्तिहानमें वैठ गया. आखिर तीनोंही पास हो गये ! (चौथी और पांचवीं क्लासमें पास होकर छठीमें दाखिल हुए.) इम्तिहानमें पास होनेके वाद " रायसाहव " ने "ज्योतिश्चन्द्र " और " बिश्वंभर " को कहा कि, तुम एक महीनेके लिये मेरठ जा आओ ! " रायसाहव " के इस हुकमको मंजूर करके, हवा फेर करनेके लिये " ज्योतिश्चंद्र " और " विश्वंभर " दोनोंही मेरठ को गये. वहांपर हाईस्कूलके हैड मास्टर, कालपीके रहने वाले वावू "चंद्रशेखर" थे. उन्होंने "विश्वंभर" को देखकर उसकी कुल पिछली स्थिति और मा बापका वर्ताव सवकुछ किसी दूसरे आदमीसे सुना और इन्द्रप्रस्थ जाकर "रायसाहव" से कुल वात चीत पूछी, मगर इस तहकीकातका सवव उन्होंने किसीसे नहीं कहा ! फिर जव मेरठ आये तो एक दिन " बिश्वंभर " फिरनेके लिये वाहर जाता था उसको रास्तेमें रोक कर.

चंद्रशेखर–क्या तुम्हारा नाम " विश्वंभर नाथ " है ?

विश्वंभर–जी हां !

चंद्रशेखर–मैंने सुना है कि, तुम ढाई सालमेंही छट्टी जमातमें आये हो !

विश्वंभर–मैं क्या ? चौदां लडकोंने डवल परमोशन दिया है ! इसमें क्या तअज्जुवकी वात हुई ?

चंद्रशेखर–क्या तुम एक दफा पांच मिनटके लिये मेरे मकान पर चल सकते हो ?

विश्वंभर–क्या काम है ?

चंद्रशेखर–चलने पर तुमको आपही मालूम हो जायेगा !

विश्वंभर–(सहीस से) ठहर तू यहां ! मैं आता हूं ! (मास्टरसे) चलिये साहव ! (चलते हुए) आपका इसमूशरीफ ?

चंद्रशेखर– (मुसकराकर) मेरा नाम " चंद्रशेखर " है. (दोनों जने मकानके दरवाजे पर पहुंचे, मास्टरने " विश्वंभर " को वाहर खडा कर दिया, आप अंदर जाकर अपनी मां और स्त्रीको साथ लेकर वाहर आये.

चंद्रशेखर– (अपनी मां–गंगासे " विश्वंभर " की तर्फ इसारा करके) मां ! यह वही है जिसके लिये मैंने तुझसे कहा था !

गंगा- (विश्वंभरसे) बेटा आओ आगे और इस कुरसी पर बैठो !

विश्वंभर- जी बहुत अच्छा ! (कहकर बैठ गया. दूसरी कुरसी पर मास्टरजी और उनके सामनेही नीचे उनकी मां और स्त्री भी बैठ गयीं.)

गंगा- बेटा ! तुम्हारा नाम क्या है ?

विश्वंभर- मेरा नाम " विश्वंभर " है !

गंगा- अगर तुम्हारा बाप तुमको छै सात वर्षकी उमरसे ही पढ़ना शुरू कराता तो अब तक कितना पढ़जाते ?

विश्वंभर- (यह सुन मनही मनमें हैं ! इनको मेरे घरका पता कैसे ?) प्रगट- इस पूछनेसे आपका क्या मतलब है ?

गंगा- तुमको अगर " रायसाहब " अपने यहांसे जवाब दे देवे तो तुम क्या करो ?

विश्वंभर-आपको, मुझसे इन बातोंके पूछनेका मतलब क्या है ? सो कहो !

गंगा- भला, तुम्हारा " दादा " (शारदाचंद्र) जो तुम्हारे नाम पर छ हजार रुपया बंकमें जमा करा गया है, अगर तुम्हारा " ताया " या " काका " न देवें तो तुम क्या करोगे ?

विश्वंभर- (झुझलाकर) आपको क्या ? (उठ कर चल पडा कि, मास्टरजीने हाथ पकड कर फिर विठा लिया.)

गंगा- अरे वाया ! हम तुम्हे मारते थोडेही हैं अच्छा यही कहो कि, तुम्हारा " वाप " तुम्हारे लिये जो दश रुपये महीना भेजता है वह तुमको तुम्हारा ताया देता है, या कि, नहीं ?

विश्वंभर- इससे आपको क्या ?

गंगा- वेटा ! तूं तो वांकाही वांका वोलता है ! (अपने लड़के चंद्रशेखरसे) लडका तो ठीक है वाकी रही इसकी स्थिति सो तूं जान !

चंद्रशेखर- अरि ! उस वातकी कोई चिंता नहीं, मैं कुल वंदोवस्त " ब्रह्मानंद " से मिल कर करलूंगा ! मुझे उम्मेद है कि " रायसाहव " अव इसको हाथसे नहीं छोडेंगे ! अगर छोडेंगेभी तो अव पूरा लिखा पढाकरही छोडेंगे ! मेरेको उम्मेद नही कि, " ज्योतिश्चंद्र " इसको अपनेसे जुदा होने देवे ! " रायसाहव " मुझसे साफ कहचुके हैं कि, मैं अपने जीते जी अपनी जवानसे इस को अपने घरसे चले जानेके लिये कभीभी नही कहूंगा ! और आठ नौ सालकी देर है कि, यह स्वयं ही वालिग हो जावेगा वरना हम वैठे ही हैं !

गंगा– अच्छा तो एक मिठाईकी टोकरी लाओ, खाली हाथ भेजना मुनासिब नहीं !

(यह सुन मास्टरने नौकरको भेजा वह थोडीही देरमें मिठाईकी टोकरी ले आया. मास्टरकी मां ने उठकर " विश्वंभर " के सिरपर प्यार दिया, हाथमें टोकरी और दो रुपये देकर बोली कि, लो बेटा ! अब जाओ.

विश्वंभर– (टोकरी और रुपये जमीन पर रखके) आप न मालूम कैसे हैं ? मैं आपसे पूछता हूं कि, आप मेरे कौन हो ? और मुझे कैसे जानते हो ? और यह टोकरी किस बातकी देते हो ? (इतना कहतेही एक दम हाथ छुडा कर चला, सडकपर पहुंच बग्घीमें बैठ कर "रायसाहब" की मीलमें जा पहूंचा और " ज्योतिश्चंद्र " को सब हकीकत कह सुनाई !

थोडी ही देरके बाद " चंद्रशेखर " का भेजा हुआ एक कहार टोकरी लिये हुए वहांही आ पहुंचा ! " ज्योतिश्चंद्र " के पूछनेसे उसने कहा कि मास्टर जीका विचार अभीतक क्या आपको मालुम नहीं हुआ ? अजी वाहजी वाह ! " मास्टरजी " तो इनके लिये इन्द्रप्रस्थभी जा आये ! इनका कुल हालभी पूछ आये हैं ! अबतो उन्होंने सिर्फ अपनी मां को और स्त्रीको, इन्हें दिखलाना था इस लिये इनको घर बुलाकर ले गये थे ! उनका इरादा है कि, अपनी लड़कीकी मंगनी

इनके साथ करदेवें ! ये घर आये खाली हाथ न जावें इस लिये यह टौकरी इनको देते थे, इन्होंने नहीं ली! अब दी हुई टोकरी घर रखनी ठीक न समझ कर मुझे यहां भेजा है! आपका जो हुकम हो सो जाकर कह दूं!

ज्योतिश्चंद्र- (अपने मीलके मेनेजर " पंडित गिरधारी लाल " से) पंडितजी ! हमतो जानते नहीं कि, वह " मास्टर " कौन हैं ? और हम इस बातसे पूरे वाकिफ भी नहीं है ! कभी ऐसा न हो कि, पीछेसे " रायसाहब " हमें खफा हों ! इस लिय कहो, क्या करना चाहिये ? हमतो आजके चौथे दिन " इंद्रप्रस्थ " जायें गे !

पं० गिरधारीलाल-ओ ! मै " चन्द्रशेखर " हैडमास्टरको अच्छी तरह जानता हूं, टोकरी लेलो! इसमें तुमको कुछ नुकसान नहीं !

ज्योतिश्चंद्र-तो अच्छा ! आपही ले लीजिये ! (यह सुन पंडित " गिरधारीलाल " ने कहारके हाथसे टौकरी ले ली और खडेही खडे सबको बांट दी ! चार रोजके बाद " ज्योतिश्चंद्र " और " विश्वंभर " इंद्रप्रस्थमें आये और फिर पढाई सुरू की ! मगर " विश्वंभर " की बद किस्मतोसे उनक पिता "ब्रह्मानंद" पूनेसे आगये ! उन्होंने " विश्वंभर " की सब कार्रवाईको अपनी आंखोंसे देखी, " विश्वंभर " को अपने पास मिलनेको भी न आते देख उनको बड़ा क्रोध आया !

एक दिनका जिकर है कि "विश्वंभर" बग्घीमें बैठ कर स्कूलको जा रहा था "ब्रह्मानंद" न जाते हुए देख कर आवाज दी, "विश्वंभर" ने आवाज सुनकर बग्घीको खड़ा किया ! "ब्रह्मानंद" ने आते ही बग्घीके पहियेपर पांव रखकर "विश्वंभर" को हाथसे पकड़ ऐसा झटका दिया कि, वह नीचे आ पडा ! यह देख दोनों सहीसोंमेंसे एकने "ब्रह्मानंद" के पैरोंमें हाथ डाल ऊपर उठाकर दन्नसे जमीनपर मारा और ऊपरसे दो लातें ठोकी ! (इसको क्या मालुम कि, यह "विश्वंभर" का बाप है !) इतनेहीमें बहुतसे आदमी इकठे हो गये "विश्वंभर" तो झट उठके बग्घीमें बैठ फिर "रायसाहब" की कोठीमेंही वापिस आया और "रायसाहब" को कुल हकीकत कह सुनाई. इधर "ब्रह्मानंद" ने भी "रायसाहब" के पास आकर कहा कि, "क्या आपको यह लाजिम है ?"

रायसाहब-भाई ! हमने कोई चोरी तो नहीं की ! यह तुम्हारा लड़का है तुम जानो ! अगर राजी खुशीसे जाता है तो ले जाओ ! वरना नाहक अपना फजीता क्यों कराते हो ? अफसोस है तुम्हारी अकल पर ! जो तुमने राह जाते इसतरह बच्चे पर हाथ उठाया ! वही तुम्हारे भाई हैं जो तुम्हारे दुश्मन हो रहे हैं ! क्या आज उन्हीके कहनेसे इस बिचारे लडकेकी दुर्दशा करना चाहतहो ? मैने तो दो सालमें इसको इतना पढा लिखाकर होशियार किया है,

जो तुम पांच सालमें भी न कर सकते ! और उम्मेद करता हूं कि, अगर तुम अपनी इस कार्रवाईसे वाज आजाओ और इसको मेरे पास छै सात सालके लिये और छोड़ दो, तो यह वड़ा लायक और दुनियांमें तुम्हारा नाम और जस फैलाने वाला हो जावे !

ब्रह्मानंद- (क्रोधमें) आप वडे हैं, जो चाहे सो कहें ! मगर इसको तो आपके पास अब एक घड़ी भी न रहने दूंगा ! वेहतर है कि, आप इसको मेरे साथ भेज देवे वरना मुझे दूसरी तजवीज करनी पड़ेगी !

रायसाहब-हां ! अच्छा तो वेहतर है कि, आप कोई दूसरी ही तजवीज करें (आवेशमें आकर और कुछ कहना चाहते थे कि, वीचमें ही " रायसावह " से)

विश्वंभर-आप ठहरिये ! मुझे इनके साथ जाने दीजिये देखूं तो यह मुझे क्या करते हैं? (इतना कहकर एक खत लिखा और नीचेसे चपडासीको वुलाकर कानमें) जलदीसे यह खत 'संधेखां' कोतवाल साहवको दे आ ! (अपने वापसे) चलिये आपाजी ! जो मरजी में आवे सो मेरा करना ! आपको अपनी सात पीढीकी कसम है जो कसर गुजारो ! (विश्वंभरके क्रोधभरे इन वचनोको सुनकर "ब्रह्मानंद" कुछ न बोले ! " विश्वंभर " को " ब्रह्मानंद " के साथ जाते देख " ज्योतिश्चंद्र " रोने लगा, उसको रोते देख)

रायसाहब-अरे मूर्ख ! रोता क्यों है ? ये क्या कहीं जाने लगा है ! (ब्रह्मानंदसे) ए बाबुजी ! जरा ठहरो ! (एक चपडासीको बुलाकर चपडासीसे) तूं "विश्वंभर" के साथमें जा, मगर घरके बाहरही ठहरना, अगर " विश्वंभर " कहे तो चला आना, वरना वहांही ठहरना मै चार बजे " गनेशा " को भेजूंगा !

ब्रह्मानंद- (रायसाहबसे) क्यों ?

रायसाहब- क्यों काहेकी ? मै कहता हूं कि ठहरो !(इतनेमें चपडासी तयार होकर " ब्रह्मानंद " से बोला-चलो साहब ! चले !)

ब्रह्मानंद-(चपडासीसे) क्यों तेरा साथमें क्या काम है ?

चपडासी-मालिकका हुकम ! यही काम है !

विश्वंभर- (अपने बापसे) अब क्या यह तुम्हे कुछ कहता है ? साथ चलता है तो चलने दो ! (" ब्रह्मानंद " "विश्वंभर" को अपने साथ घर ले आया "विश्वंभर" का आज यह दो सालके बाद घरमें आना हुआ है.)

ब्रह्मानंद- (विश्वंभरसे) क्यों भाई सच बतला अब तेरी क्या मनशा है ? में तुझे उनके यहां तो एक घडी भी नहीं रहने दूंगा !

विश्वंभर- (छातीपर हाथ रखकर) लो मै भी सच बतलाता हूं कि, अगर मुझे " रायसाहब " के यहां न

रहने दोगे तो आपके पासभी अब मै एक घडी न रहुं-
गा ! (जरा जोशमें) अरे रहना तो क्या आप लोगोंकी
शकल तक भी न देखूंगा ! पिताजी ! मैने पढा है कि,
मां बापका बड़ा अदब करना चाहिये ! और उनको हर
तरहसे टहल करनी चाहिये और जो वो कहें उनके
हुकमको सिर माथे पर लेना चाहिये ! इस लियेही मुझे
आज आपके साथ इस बे अदबी और बत्तमीजीसे पेश
आना पड़ा है ! में आपका ऐसान सारी उमरमें भी न
भूलूंगा कि, जो आपने मुझे सारी उमर मूर्ख रखनेके
लिये, न खुद पढ़ाया और नाही पढ़ने दिया ! मै पर-
मात्मासे प्रार्थना करता हुं कि, मेरे बापके जैसा जहांनमें
भूलकर भी किसीका बाप मत हो ! ! !

ब्रह्मानंद– (विश्वंभरकी बातोंको सुनकर अपने बड़े भाई
" जयंतिसहाय " से) देखा भाई ! और सुना !

जयंतिसहाय– तुमही देखो और सुनो ! अपने हाथ कांटे
बीज अब मुझे क्या पूछते हो ?

ब्रह्मानंद– (विश्वंभरसे) तुझे मेरे साथ पूने चलना होगा !

विश्वंभर– बेशक ! मुझे आपके साथ पूने चलना होगा !

ब्रह्मानंद–बस तो जा उस चपड़ासीको कह दे कि, चला
जावे !

विश्वंभर- वस तो जाता हुं उस चपड़ासीको कह देता हुं कि चला जावे ! (उठकर वाहर गया और चपड़ासीसे) भाई ! इस वक्त तो तूं चला जा और " ज्योतिश्चंद्र " को कहना कि, मै कल सुवह आऊंगा ! (उसको तो इतना कहकर रवाने किया और आप अंदर जाकर अपने वापके पास आ वैंठा !)

ब्रह्मानंद- (हंसकर) अच्छा अव यह वता कि, तूं क्या पढ़ा है ?

विश्वंभर-जो अपने साथ भला करे उसके साथ बुरा करना और जो वुरा करे उसके साथ भला करना ! और आप जैसे मांवापोंको सुवह उठकर प्रणाम करनेके वदले पांच जूते लगाना ! अगर हिम्मत न हो, तो मन मानी जितनी वने उतनी गालियां देना ! (ब्रह्मानन्दने यह सुन, हाथसे पकड एक तमाचा मारा, दूसरा मारनेके लिये हाथ उठाया ही था कि " विश्वंभर " ने कहा) अरे तमाचोंसे क्या वनेगा ? कोई लकडी हाथमें लो ! लकड़ी ! (इतनेमें वाहरसे आवाज आई) " ब्रह्मानंद " हैं क्या ? (वाहर जाकर एक आदमी को देखा)

ब्रह्मानंद- क्यों भाई ! क्या है ?

आदमी- आपको कोतवाल साहव बुलाते हैं !

ब्रह्मानंद- क्यों ?

आदमी- ये तो मुझे क्या मालूम कि क्यों ? (अंदर जा कपडे पहन चलपडे, " विश्वंभर " भी साथही चलने लगा तो.)

ब्रह्मानंद- नहीं तूं मत चल ! बैठ घरमें !

विश्वंभर- (रोताहुआ) बस अब चाहे जान ले डालो एक घडीभी तुमसे अलग न होऊंगा ! (बहुत समझाया मगर न माना, दोनोंही कोतवाल साहबके मकान पर पहुंचे)

ब्रह्मानंद- (कोतवाल साहबको सलाम करके आगे एक कुरसी पर बैठ गये " विश्वंभर " को आंखोंमें आंसू भरे हुए देखकर)

कोतवाल- (विश्वंभरसे) क्यों ! क्या बात है ? (कोतवाल साहबके पूछने पर " विश्वंभर " ऊंचे ऊंचे रोने लगा. " विश्वंभर " को इस प्रकार रोते देख, उठकर कोतवाल साहबने अपनी गोदमें बिठालिया और अपने रुमालसे " विश्वंभर " के) आंसू पौंछते हुए " ब्रह्मानंद " से

अफसोस है तुम्हारी समझपर ! भाई ! तुमने अपने बाप " शारदाचंद्र " की इज्जतको बहुतही बढ़ाई है ! वाह वाह ! क्या कहना है ? इस बाबु पने पर ! बस अब मैं तुमसे कुछभी नहीं पूछता और कहता, फक्त इतनाही

कहता हूं कि, इस बच्चेपर हाथ मत उठाना ! तुम्हारे दिलमें अगर यह घमंड हो कि, मेरा लड़का है मैं जो चाहे सो करूं ! तब तो कुछ हरकत नहीं जो होगा सो देख लिया जायेगा ! मुझे कुल हकीकत मालूम है, यह यही लड़का था जो आज इतना भी पढ़ा ! शाबाश है "रायसाहब" को जिन्होंकी मेहरबानीसे आज ये मेरी गोदमें नजर आता है ! क्या शहरमें औरभी तो लड़के हैं हीं ! इस लिये बेहतर है कि, इसको यहां पढ़ने दो ! अगर अपने साथही ले जाना है तो वह पढ़ाना ! मुझे सिर्फ इस बातकाही तरस आता है कि, अगर इसकी मां बचपनमें न मरी होती तो, इसपर जो तुम्हारी इस वक्त बेवकूफीकी नजर है हरगिज न होती !

ब्रह्मानन्द- (अपने मनही मनमें) हैं ! इसपर इनकीभी ऐसी नजर है ! बस अब मुझे इसको साथही ले जाना ठीक है, इसके इन्द्रप्रस्थमें रहनेसे किसी न किसी वक्त हमें जरूर मुश्किल हो पड़ेगी ! (प्रगट) अजी साहब ! यह मेरे सामने बुरी तौरपर बका, इस लिये मैंने हाथ उठाया, वरना मैं तो इससे हंस हंस कर प्यार पूर्वक पूछता था ! आप फरमाइयेगा कि, यही काम था या और कुछ ?

कोतवाल- कुछ औरभी खानगी बात है, चलिये अंदर चलकर सुनाऊं !(ब्रह्मानन्दके साथ अंदर जाकर बहुत

देर तक बातें की, मगर न मालुम कि क्या थी "विश्वंभर" को साथ ले " ब्रह्मानंद " घर आये. और रातकोही उसको साथ लेकर पूने चल दिये ! अब तो "विश्वंभर" हर वक्त उदास रहने लगा, लिखना पढ़ना छुट गया, इस तरहकी उदासी में ही " विश्वंभर " ने वहां पांच महीने गुजारे. संवत् १९५२ फाल्गुन शुक्ला दशमी का दिन है, श्यामके वक्त कितनेक मित्रों के साथ बैठे हुए " ब्रह्मानंद " हँसी मशकरीकी बाते कर रहे हैं, इतने में उनके किसी एक मित्रने कहा कि—भाई! सुना है कि, आप गाने में बड़े चतुर हैं, कुछ सुनाइये तो सही ! यह सुनकर " ब्रह्मानंद " ने एक ध्रुपद गानेके लिये ज्यों ही जोरसे स्वर निकाला त्योंही वह ऊपर का स्वर ऊपर और नीचेका नींचे ही रहा! यह देख सबके सब एकदम घबडा उठे ! बस क्या था ! सबके देखते ही देखते "ब्रह्मानंदजी" ब्रह्मानंद में मिल गये ! याने इस फानी दुनियां से चल बसे ! आपकी उमर इस वक्त अठाईस (२८) सालकी थी ! " विश्वंभर " थोडोसी दूर पर खेल रहा था उसे बुलाकर लोगोंने कहा कि, अरे ! तेरा बाप तो मर गया ! यह सुन " विश्वंभर " वहां पहुंचा और खड़ा खड़ा पिताकी लाशकी तर्फ देख अपने मन में विचार करता है कि, यह मेरे पिता थे ! मगर इनकी इस दशाको भी देखकर मुझे रोना नहीं आता ! यह बड़े आश्चर्य की बात है ! इधर लोकोंने " ब्रह्मानन्द " की लाशको उठाकर उनके रहने के मकान पर जा रखा !

पतिको अचानक मरे देख " विश्वंभर " की मां (मतरेई) छातीको पीट पीट कर रोने लगी ! " श्रीनाथ " और " शंका " भी ढाः मारकर रोने लगे ! " विश्वंभर " सबको रोते देख स्वयं भी कुछ रोने लगा, परंतु अंदरसे वह हंसताही था ! इसका कारण क्या होगा ? यह बुद्धिमान स्वयंही विचार लें !

आखिर घरको तार दिया और पूनेके स्टेशन पर जो और और बाबू रहते थे उन सबने मिलकर " ब्रह्मानंद " का अग्नि संस्कार किया ! घरसे दूसरे रोज " जयंतिसहाय " पहुंचे और दो रोज रहकर " माया " (ब्रह्मानंदकी स्त्री) "विश्वंभर" "श्रीनाथ" और लड़की " शंका " को अपने साथ लेकर घरको चलने लगे ! उस वक्त "विश्वंभर" ने "जयंतिसहाय" से कहा कि, अब मेरा घरमें रहना न होगा ! इस लिये बेहतर है कि, आप मुझे यहीं छोडदो ! अगर आप मुझे घर ले जाओगे तोभी मैं वहांसे भाग आऊंगा !

जयंतिसहाय– (दुःखी होकर) तेरी मरजी ! जहां तेरा जी चाहे वहां रह ! (उस वक्त कुछ रुपये "विश्वंभर" के पास थे और बीस रुपयेका नोट उसको "जयंतिसहाय " ने दिया. " विश्वंभर " तो वहांही रहा, और " जयंतिसहाय, " " माया " " श्रीनाथ " और " शंका " को लेकर घरको आये !

इधर कलकत्तेके पासका रहने वाला " कृष्णचंद्र " नामका जादूगर एक बंगाली बाबू यहांपर रहता था " विश्वंभर " के सब हालसे वह वाकिफ था. एक दिन वह)

बाबू- (विश्वंभरसे) अब तुम क्या करोंगे ?

विश्वंभर-जनाब ! मैं वही करूंगा जो मेरी तक़दीर मुझसे करायेगी !

बाबू-क्या मुझे जानते हो ?

विश्वंभर-आपको सिर्फ इतना जानता हूं कि, आपने कितनेक जादूके खेल एक दिन दिखलाये थे, और श्यामको रोज स्टेशन पर फिरनेके लिये आते और मेरे पिताजी के साथ बातचीत किया करते! बाकीतो मैं आपके बारेमें कुछ नहीं जानता !

बाबू-क्या तुम मुझसे यह हुन्नर लेना चाहते हो ?

विश्वंभर-यह तो मेरे मनकी ही कही ! अगर आप बतलाये तो इससे परे और मुझे क्या चाहिए ?

बाबू- (अपने साथ एक ब्राह्मण चपड़ासी था उससे) वसंतराम ! देखो आजसे यह मेरा पुत्र है ! और इसको जो कुछ मुझे आता है वह मैं सबही सिखादूंगा (विश्वंभरकी स्थितिको सुन " वसंतराम " को भी बड़ा तरस आया.)

वसंतराम (बाबूसे) आप मालिक हैं ! (मनमें) लड़के का नसीब उघडा !

(कुछ दिनके बाद बाबू, " विश्वंभर " को साथ लेकर पूनासे लश्कर आये, वहांसे तीन कोस पर मुरारकी छावनीमें कमान्डून् चीफ साहबके यहां जाकर उन्होंने अपना खेल दिखलाया, खेल देख कर वे बोले कि मैं आपको महाराजके सामने कराऊंगा ! अगलेही रोज "चीफ साहब" ने राजा साहबसे उनका जिकर किया. राजा साहबने भी हुकम दिया कि अच्छा आइतवारके दिन दो बजे इन्द्र-भुवनमें उनका खेल होना चाहिये ! सबको इस बातकी खबर करदी.

बस तीसरे रोज इन्द्रभुवनमें राजा साहब और बडे२ अहलकार व अमलदारोंसे दरबार भर गया था कितने-एक अंगरेज भी हाजिर हुए, बस ठीक समय पर बाबूने खेल दिखलाना शुरू किया. खेल एकसे एक चढ़ता था, लोक देखकर हैरान होते थे ! बाबूजी क्या कर रहे हैं ? इसमें किसीकी अकल काम नहीं करती थी ! आखिरमें बाबूजीने एक लड़केको एक मेज पर बिठला दिया ! और पासमें खड़े एक सिपाहीसे तलवार मांग कर उससे लड़केका सिर काट अपनी हथेली पर रख लिया ! और " विश्वंभर " को अपने पास बुलाकर कानमें कहा कि, क्या तुझे इसका सिर कटाहुआ मालूम देता है ?

विश्वंभर–नहीं !

बाबू–इस वक्त इन सबको इसका सिर कटाहुआ नजर आता है ! अब तूं ऐसा कर कि, इस मेज पर बैठे हुए इस लड़केको अपनी चादरसे ढांक दे ! (विश्वंभरने वैसाही किया, फिर बाबू राजा साहबसे) हजूर ! फरमाइयेगा कि, इस सिरको क्या करूं ? और इसकी लहाशको क्या करूं ?

(यह कार्रवाई देख सबही हैरान परेशान होगये ! एक अंगरेजने उठकर अच्छी तरहसे देखा, उसकी अकलमें भी यह बात न आई कि, ये क्या दिखा रहा है !)

राजासाहब– (बाबूको पास बुलाकर) यह सिर मेरी हथेलीमें दो !

बाबू–बेशक ! मैं यह सिर आपकी हथेली पर रखनेको तयार हूं, मगर हजुरको मेजके पास तक आनेकी तकलीफ उठानी पड़ेगी ! (राजा साहब झट उठकर मेजके पास गये और बाबुने वह सिर राजासाहबके हाथमें रखदिया !)

राजासाहब–इसमेंसे लहू क्यों नहीं टपकता ?

बाबू– क्या मुझे फांसी देनेका बिचार है ?

(मुशकरा कर– वो सिर झट अपनी हथेलीमें लेकर उससे बातेंभी करवाई ! फिर उसी लाशके साथ जोड़

थापी मार लड़केको राजा साहबके सामने खड़ाकर दिया! राजा साहब इस चमत्कारसे वहुत खुश हुए और उसी वक्त सातसौ (७००) रुपये और दो साल जोड़ी देकर कहा कि, अभी तुमने जाना नहीं.

इतना कहकर राजा साहब तो चलदिये.

चीफ साहब- (वावूसे) वावूजी! सरकारके कहनेका मतलव यह है कि, आपको यह खेल रनवासमें भी दिखाना होगा!

वावू- वहुत अच्छा! मगर जिस दिन खेल देखना हो उसके एक दिन पहले मुझे वक्तका पता मिलना चाहिये!

(यह कहकर वावूजी अपने मकान पर आये और "विश्वंभर" से) देखा भाई! मेरा तो यही काम है! मगर मेरे गुरुका हुकम है कि, जो कमाई हो उसका तीसरा हिस्सा अपने पास रखकर वाकीका कुल गरीब गुरवोंको वांट देना! इस लिये जब तूं वाजार या कहीं वाहर फिरने जावे तब दश-पंद्रा रुपयेकी रेजगारी पैसे जेवमें डाल जाया कर! जहां कहीं लूले, लंगडे अंधे, अपाहज गरीबको देखा उसको कुछ दे दिया!

विश्वंभर-ठीक!(वैसेही करता हुआ एक दिन अपने मनही मनमें) ओ! आज मुझे वह दिन आना था कि, मैं लोगोंके आगे हाथ पसार कर दर वदर फिरता नजर आता! लेकिन यह तो मेरी तकदीर कैसी जवरदस्त निकली

कि, आज मेरे हाथसे सैकडों गरीब भूखोंका पेट भरता है ! क्या यह हालत मुझसे कभी दूरतो न हो जायेगी ?

(इस तरह तीन महीने गुजरे ! कई वार वावूने कई जगह खेल किये ! आखर वहांसे जाते हुए सरकारसे पांच सौ रुपये और मिले ! वावूको सरकारने अपने यहां रहनेका हमेंशहके लिये डेढ़सौ (१५०) महीने पर वहुत कहा मगर वावूजीने " नौकरी करनेकी मुझे कसम है " यही उत्तर दिया.

वहांसे चलकर झांसी, दतिया, जालौन, समथर और चरखारी आदि कितनेक रजवाडोंमें फिरते हुए " विश्वंभर " को साथ लिए हुसंगावाद पहुचे ! वहां वावूजी एक महीने विमार रहे ! वादमें कांनपुर, कलकत्ता, वनारस, लखनऊ वगैरह शहरोंमें इनके साथ फिरते फिरते " विश्वंभर " को डेढ़ साल गुजर गया ! वावूजीने " विश्वंभर " को निर्भय वनानेके लिये कई एक उपाय किए (जिससे उनकी जादूगरी खीलनेमें उसे किसी प्रकारका भय न हो ! क्यों कि यह काम निर्भय छाती वालेका है !) और कई एक तरहका वास और वनस्पतियोंके प्रयोग वनाने वतलाये ! लेकिन " विश्वंभर " की किसमतने आकर ऐसा धक्का मारा कि वावूजी एक दम तीन दिनकी सखत विमारीसे इस दुनियांसे चल दिये ! उस वक्त " विश्वंभर " को अपने वापके मरनेसेभी इनके मरनेका ज्यादा दुःख

पैदा हुआ ! वहांपर बाबूका अग्नि संस्कार करके, जो चपडासी था वो तो अपने देशको चला गया और " विश्वंभर " चारसौ पचास रुपये (जो बाबूके, उसके पास थे) लेकर घरमें आया और आतेही वह रुपया अपनी मतेरई मांके आगे रख दिया ! उस वक्त तो मांने ऐसा प्यार और स्नेह दिखलाया कि, जो खास अपने बेटे " श्रीनाथ " का भी न कभी किया होगा ! सत्य है-" सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयंति " यह प्यार " विश्वंभर " का नहीं था ! किन्तु उन रुपयोंका था ! घर वालोंको यह कुल हाल मालुम था कि, " विश्वंभर " एक अच्छे आदमीके साथमें है. क्यों कि बाबूजीने स्वयं " जयंतिसहाय " को पत्र दिया था कि, आपका भतीजा मेरे साथ है " विश्वंभर " के घर आने पर " ज्योतिश्चंद्र " ने " विश्वंभर " से फिर पढनेके लिये बहुत आग्रह किया मगर " विश्वंभर " ने कहा कि, अब मेरा पढना न होगा. और नाहीं अब तुम्हारे यहां मैं रह सकता हूं !

आखर घरमें कुछ दिन तकतो "विश्वंभर" के साथ ठीक बरताव रहा, मगर एक दिन अपनी मां (माया) के मुखसे अपने लिये निकला हुआ शब्द सुन " विश्वंभर " चुपचाप घरसे चलदिया ! एक टिकट कलेक्टरकी सहायतासे मथुरामें आया ! वहां उसको न किसीके साथ जान पहचान थी और नाहीं पासमें एक पैसा !

भूखके मारे मुख करमा गया था, चलते हुए पगभी लड़थड़ाते थे, शहरमें फिरते २ थक कर शामके वक्त शेठ लक्ष्मीचंदजीके मंदिरके सामने यमुनाजीके घाटमें पानी पीनेकी इच्छासे किनारे बैठ कर दो चूलु पानी पिया, लेकिन कुछ चक्करसा आनेसे वहीं लेट गया! कुछ देरके बाद उठकर जमनाजीके किनारेही किनारे जाते हुए एक कीकर (बबूल) के वृक्षके नीचे उसी वृक्षके गूंदके चमकते हुए छोटे २ सफेद डले गिरे हुए देख कर "विश्वंभर" ने वे उठा लिये, और भूखके मारे एक मूंमें डाला! मगर कच्चा गूंद दांतोंमेंही चिपक गया! आखिर "विश्वंभर" ने इधर उधरसे और थोडासा गुंद चुग कर इकट्ठा करके एक पथ्थर पर रखा और कुछ सूकी हुई लकडियां बीन कर उस गुंदके ऊपर रखके दिवासलाईकी एक कांडी (तीली) लेनेके लिये सामने एक मंदिरके पुजारीके पास पहुंचा! मगर अपने मनमें विचारने लगा कि, "इससे क्या कहकर तीली मांगू? अगर देनेसे इन्कारही करदे तो?" इस तरह कई प्रकारके विचार करता हुआ वहां खड़ाही था कि, इतनेमें थोडी दूर बैठे हुए बाबाजीने अपनी चिलम तमाखूकी पीकर जमीन पर उंधादी "विश्वंभर" जाकर झट वह आगकी चिनगारियें एक बडके पत्ते पर ले आया और उनको लकड़ियोंमें रखकर आग जलाई उससे वह गूंद फूलकर मखाने बनगया, उसे ठंडा करके "विश्वंभर" ने अपनी भूख मिटानी चाही! लेकिन वह भी खाया

न गया! तव तो वह वड़ाही निराश हुआ! कभी अपनी पूर्व अवस्थाको याद करता! कभी घरसे भाग आनेकी अपनी भूलको धिक्कारता! आखर कार वहांसे उठा और शहरमें चलकर पापी पेटके लिये किसीके सामने हाथ पसारनेका निश्चय करके वाजारमें आया, लेकिन वाजारमें आतेही आते मनका चक्र फिर गया! (हाथकी उंगली दांतोंके वीच चवाकर मनही मनमें) है! मै हाथ पैरोंके होते हुए भीख मांगु? धिक! धिक!!

चलता २ एक सरांयके सामने वहूतसी घास वेचने वाली वैठी थीं, उनमें दो तीनके पास इमलीके पत्तोंका भारा भी रखा हुआ था. वहां खड़ा होकर विचारने लगा कि—" भला घासतो घोड़ोंके लिये है, लेकिन यह इमलीके पत्ते किस जानवरके लिये और कौन लेता होगा?" इतनेमें थोडी ही देरमें एक मुसलमानने आकर उस भारे वालीसे पूछा कि "अरी! इस भारेका क्या लेगी?" उसने उत्तर दिया कि "छै आने!" आखर होते हवाते मियांजी साढे चार आनेमें लेकर चले तो "विश्वंभर" ने पूछा कि, "जनाव! यह पत्ते किस काम आयेंगे?" मियांजी वोले "मेरे यहां दो तीन वकरीयें हैं उनको खिलाऊंगा!" यह सुनतेही "विश्वंभर" का हौसला वढ़ा और झटही अजमेरी दरवाजेसे निकलकर सडकके किनारेही किनारे आधा मील निकलगया! वहां एक कवरस्तानके नजदीकमें

कई इमलीके झाड थे उनमेंसे एक झाडपर चढ़ गया और इमलीकी छोटी २ टैहनियें तोड कर नीचे गेर उतर कर एक भारा बनालिया ! मगर बांधनेके लिये रस्सी न थी ! अपने कमरकी धोतीको खोल उसकी एक तरफ की किनारी फाडकर, उससे उस भारेको अच्छी तरह बांधकर मनमें यह चार रुपयेका बूट, शरीरपर यह कमीज; कमरमें यह बारीक कोर वाली धोती, और कहां यह सिरपर चारेका भारा ! यह सोचकर गलेसे कमीज उतार कर बगलमें दबाली और धोतीको कमरमें लंगोटेकी तरह बांध कर उसीमें बूटभी बांध लिया और जनेऊभी छिपा लिया ! भारेको मुशकिलसे उठाकर अपने सिरपर रखके, जहां उन घसियारोंको बैठे देख गया था वहांही आनेके इरादेसे चलता हुआ शहरके दरवाजेमें प्रवेश करके अभी २५-३० कदमही आगे गया होगा कि, एक दुकानदारने " विश्वंभर " को आवाज दी कि " ओ चरीवाले ! "

विश्वंभर- (पीछे फिरकर देखने लगा कि) किसने आवाज दी ? (इतनेमें फिर)

दुकानदार -अरे इधर आ इधर !

विश्वंभर- (बुलाने वालेको देखकर पासमें जाके आगे खड़ा होगया !)

दुकानदार- क्या लेगा ?

विश्वंभर–छै आने !

दुकानदार– (विश्वंभरके सिरसे भारेको नीचे उतारकर वजन करता हुआ) अरे सच बता क्या लेगा ? तीन आने लेने हों तो यहां रखदे ! नहीं तो जा लेजा !

विश्वंभर– नहीं ! (दुकानदारने भारेको उठवा विश्वंभरके सिरपर रखवा दिया ! " विश्वंभर " चार पांच कदम गया होगा कि—

दुकानदार– अरे साढ़े तीन आने लेगा ? ले ले आ !

विश्वंभर– (पहलेही तीन आनेमें हां करने लगा था, लेकिन अपने मनमें विचारने लगा कि एकदमही देदेना ठीक नहीं ! पीछे लौटकर दुकानदारके सामने भारेको गेर कर) लाइये पैसे !

दुकानदार– अरे तो यहां कहां डालता है ? घर ले चल !

विश्वंभर–घर कितनी दूर है ? (इस वक्त "विश्वंभर" का चेहरा गरमीके मारे लाल होगया था ! जी घबड़ा रहा था ! भूखके कारण अब भार लेकर चलना बड़ाही मुशकिल था ! आंखोंमें आंसू डब डबा रहे थे ! धीरज धर कर–) अच्छा चलिये !

दुकानदार– (विश्वंभरकी शकलको देख कर–) अरे तूं किसका लड़का है ?

विश्वंभर–जनाव ! अव आपको चोरेसे काम है ? या मैं किसका हूं इससे काम है ?

(दुकानदार विश्वंभरके सिरपर भारा उठवा घर ले गया. विश्वंभर वहांसे साढ़े तीन आनेके पैसे लेकर फिर जमना किनारे पहुंचा, वहां अच्छी तरह स्नानकर कपडे पहन एक हलवाईकी दुकानसे एक आनेका दूध पी और कुछ खा, अपने दैवको धन्यवाद देता हुआ. चंद्रमासे खिड़ी हुई उज्वल रात्रिमें घाटके किनारे चट्टानपर आनंदसे सोगया !

अगले रोज सुवह उठकर वाजारमें गया, वहां एक दरजीने अपनी दुकानको साफ कर जो कुछ कपडोंका कतरन था वह निकाल कर वाहर फैंक दिया. " विश्वंभर " ने उसे उठा एक धेलेकी पेचक मोल ले, उस कतरनकी रंग वेरंगी तीन सौ गोलियां वनाकर एक पैसेकी लोहेके तारकी गुच्छी लाकर उसके उतनेहीं टुकड़े कर डाले जितनी गोलियां थीं. पीछे एक गोलीको उस तारके साथ वांध कर ठीक वनालिया, स्टेशनसे उतरते हुए " विश्वंभर " ने सडकके किनारे किनारे लगेहुए मूजके जो सरकंडे–(वूजे) देखे थे वहां जाकर उनके वीचकी छडें निकाल लाया और उनके एक एक वालिस्तके सौ टुकडे करके वोह तारमें वांधी हुई गोलियां उस एक एकके साथ चढ़ाव उतारमें तीन तीन गोलियां वांध कर तयार करलीं दुपहरको वाजारसे दो पैसेका

कुछ खाकर जमना किनारे सारा दिन व्यतीत कर दिया ! श्यामके वक्त जब दीवे जल चुके तो "विश्वंभर" उस अपनी बनाई हुई चरखड़ियोंमेंसे एक चरखड़ी, एक जगह कूडेमें फूटी पडी हुई बोतलको ले उसके पेंदेमें धेलेका मिट्टीका तेल ले कर उसमें उसको डबो कर दीवेके साथ जलाकर हाथमें घुमाने लगा और आवाज देने लगा कि " ये आतशबाजीकी चरखी एक पैसेको! बारूदसे बनी हुई चरखी चार आनेकी पांच मिनट या सात मिनटमें भस्म हो जाती है, मगर यह मेरी चरखी एक बार तेलमें डुबाई हुई घंटों चलती है और महीनों तक ऐसीकी ऐसी रहती है ! "

" विश्वंभर " एक चरखी अपने हाथमें फिराता था जिसे देखकर बचेही नहीं बलकि, बड़े २ लोग भी अपने लड़कोंके लिये ले ले कर जाते थे ! सिर्फ उसमें खूबी यही थी कि, वह गोलियां लाल सफेद काली रंगकी होनेसे फिरती हुई आबेहूब आतशबाजीकी चकरीके माफकही मालूम देती थी ! गरज डेढ़ कलाकके अंदर " विश्वंभर " के पास सौ चरखीयोंमेंसे एकभी बाकी न रही. तब " विश्वंभर " जिस दरजीकी दुकानके सामनेसे कतरन उठालाया था उसीको दुकान पर पहुंच कर.)

विश्वंभर– (दरजीसे) भाई ! मैं तुम्हारे उपकारको न भूलूंगा !

दरजी- (आश्चर्य पूर्वक विचारता हुआ) मैंने क्या उपकार किया ? (पहचान कर) अच्छा तुम वो हो जो सुबह यहांसे कतरन-धज्जियां ले गये थे और मैं ने पूछा भी था कि, इनका क्या करोगे ?

विश्वंभर- हां ! (मुसकरा कर) मै वही हूं ! उन्हीं धज्जियोंसे यह एक रुपया आठ आने (उसके आगे निकाल कर रखता हुआ बैठ कर) कमाये हैं !

दरजी- यह कैसे ?

विश्वंभर- कैसे क्या ? ऐसे ! (कुल बात कह सुनाई, दरजी सुन कर बड़ा खुश हुआ.)

दरजी- तुम कहांके हो ? तुम्हारा क्या नाम है ? और यहां कैसे आये ? और कहां ठहरे हो ?

विश्वंभर- यह पूछ कर तुम क्या निकालोगे ? (उठकर) अच्छा ! जय जय ! फिर मिलूंगा (इतना कहता हुआ चल दिया और पेटभर बाजारसे दूध पी, एक सरांयमें आनंदसे सारी रात रहा ! अगले दिन बाजारमें जारहा था इतनेमें " बालमुकंद " किनारीवालेने "विश्वंभर" को पहचान कर झट पकड़ लिया और अपनी दुकानपर ले गया.)

यहां कहां ?

विश्वंभर- (आंखोंमें आंसू लाकर) मैं भागकर आया हूं ! (सब बात सच सच कह सुनाई. "बालमुकंद" इन्हीकी दुकानसे माल लाया करते थे इस लिये कुछ २ हाल " विश्वंभर " का इनको मालूम था)

बालमुकंद- (धीरज देकर) तुम किसी बातकी चिंता न करो ! यहां आनंदसे रहो ! दुकान तुम्हारी है ! घर तुम्हारा है ! तुम रोते क्यों हो ? चुप करो !

विश्वंभर-साहब ! मै किसी चिंतासे नहीं रोता ! मैं रोता हूं कि, आप मुझे कहांसे मिलगये अब मैं रोऊं न तो क्या हंसू ?

बालमुकंद- तुम यह क्या कहते हो ? मैं तुमको मिलगया यह अच्छा हुआ या बुरा ?

विश्वंभर- इससे बुरा और क्या होगा ?

बालमुकंद- क्यों ? तुम्हारे मनमें यह डर होगा कि, ये मेरी खबर घरवालोंको देदेवेंगे !

विश्वंभर- नहीं ! नहीं ! खबरतो कलकी देते आजही देदो ! मुझे इस बातका डर नहीं है ! मुझे सिर्फ डर है तो इसी बातका है कि, जब लोग आपसे पूछेंगे कि, यह कौन है ? तो आपने यही कहना है कि, यह पंडित शारदाचंद्र का पोता है ! हाय ! क्या यह थोडीसी बात है ? इन्ही बोलोंने तो मुझे घर छुडाया ! और यही सुननेका मौका

यहां मिले, इससे मैं बेहतर समझता हूं कि, अब यहां पानी भी न पीऊं !

बालमुकंद– (विश्वंभरके अभिप्रायको समझ गया, एकदम अपनी छातीसे लगाकर बडेप्यारके साथ) "विश्वंभर" बेटा ! शाबास तुझे ! अभीतक मैं तेरे कहनेको नहीं समझा था ! (पुचकार कर) चुपकर ! यह याद रखना कि "बालमुकंद" का सर्वस्व नष्ट क्यों न हो जावे लेकिन तुम्हारे दादाके निसबत इस "बालमुकंद" के मुखसे एक अक्षर भी न निकलेगा ! तुम यहां रहो और आनंदसे अपनी दुकान पर बैठो !

विश्वंभर–अगर हरामकी रोटियां खाकर ही दिन काटने होते और फिर लोगोंके ताने सुनने होते तो "रायसाहब" के पुत्र "ज्योतिश्चंद्र" के साथ एक आला दरजेकी अमीरी भोगते हुए छोड़कर मुझे इस प्रकार से भटकनेको क्या किसीने कहा था ? हां ! बेशक मैं दुकान पर बैठुं तो सही मगर जबतक अपने हाथसे आठ दश आनेके टके रोजके न पैदा करूं वहां तक दुकान पर बैठना भी मूर्खता है और रोटी खाना भी हराम !

बालमुकंद– (अपने दिलमें "विश्वंभर" के इरादेको अच्छी तरहसे समझ कर) अच्छा ! हाल तो तुम मेरे कहनेसे दो चार दिन दुकान पर बैठो पीछे देखा जाय-

गा ! (विश्वंभरको अव किसी वातकी चिंता न रही ! अपने घर जैसा मामला होगया ! " विश्वंभर " ने " वालमुकंद " से चोरी दो तीन घंटेकी फुरसत निकाल कर सौ सवासौ वही चरखीयें बनाकर एक भरतपुरके रहने वाले " अलीमहमद " मुसलमानसे कहा कि तूं रातके वक्त ये वेचाकर डेढ़ रुपयेका विकें तो आठ आने तेरे और रुपया मेरा ! उसने भी यह वात वड़ी खुशीसे मंजूर करली ! वह रोज युंही करने लगा. पांच सात दिनके वाद यह वात " विश्वंभर " ने " वालमुकंद " के आगे छै रुपये रख कर कह सुनाई और कहा कि, मैं स्वयं इस कामको नहीं करता मैं ने एक " अलीमहम्मद " नामके मुसलमानको यह धंधा सिखला दिया है, आपसे इस चोरी रखनेकी मैं माफी चाहता हुं ! " वालमुकंद " को "विश्वंभर " की इस वातसे वड़ाही आश्चर्यसा हुआ ! आखर " विश्वंभर " दुकान पर वैठने लगा और दिल लगाकर काम सीखने लगा ! अनुमान तीन महीनेके अंदरही उसने अच्छी तरह सलमें सितारेके भरत कामको अपने कावूमें कर लिया ! और " वालमुकंद " की गैर हाजरीमें दुकानका कामभी अच्छी तरहसे करने लगा ! यह वात " जयंतिसहाय " को मालूम हुई कि " विश्वंभर " मथुरामें है तो उन्हों ने " वालमुकंद " को लिखा कि, अगर " विश्वंभर " यहां आजावे तो अच्छी वात है क्यों कि, भाई "वंश-

गोपाल " बहुत बीमार हैं और मुझ एकलेसे तीनों दुकानोंका काम नहीं संभाला जाता ! मुनीमजी अपने लडकेकी शादी करने हापडको गये हुए हैं. यह समाचार सुन कर " बालमुकुंद " ने समझा कर " विश्वंभर " को घरको भेजा और " जयंतिसहाय " को लिखदिया कि, अगर इसके साथ किसी प्रकारकी कोई खट पट हुई तो याद रखना ! तुम इस लड़के से हाथ धो बैठों गे !

" विश्वंभर " घरको आकर अपनी दुकान पर बैठने लगा, तीन महीने तक अच्छी तरहसे अपना काम किया लेकिन अपनी मतरेइ मां के कारण फिर वहांसे इसका चित्त उखड़ा !

" तकदीरके लिखेको तदवीर क्या करे ? " घरसे बाहर रहकर जिन सुखोंको अनुभव करता था उससे हजार गुने दुःख " माया " के कारण इस घरमें अनुभव करने पडते थे ! एक दिन—

बंशगोपाल– (दिवालीकी रातको आठ बजे दुकान बंद कर किसी आढ़तीयेके बारासौ रुपये लेकर घर आये और चुप चाप " माया " की कोठडीमें जाकर क्या कर रही हो ?)

माया– (उठकर) युंही बैठी हूं ! कहो !

बंशगोपाल-ये लो रुपयोंकी थैली ! अंदर रखलो ! सुबह जाते हुए मुझे या बडे भाईको देना !

माया- (रु० की थैली हाथमें लेकर मुसकराती हुई) किस के हैं ?

बंशगोपाल-एक आढ़तियेके हैं !

माया-मैंतो कुछ औरही समझी थी !

बंशगोपाल-क्यों नहीं ? (इतना कहकर बैठ गये और थोड़ी देरके वाद कुछ खा पीकर अपनी बैठकमें चले गये. इधर " माया " वह रुपयोंकी थैली लिये हुए अपने पलंग पर बैठी हुई थी इतनेमें " विश्वंभरनाथ " अंदर आया और कपडे पहन कर विना बोले चाले वाहर चला गया ! उसवक्त " माया " ने माया जाल रचा ! वह रुपयोंकी थैली लेकर घरके पीछे जिस तबे-लेमें गउएं बांधी जाती थी वहां गई ! इतनेमें " बंश-गोपाल " की लड़की " लीला " ने देख लिया अपने मनमें सोचने लगी कि, इस वक्त चाची तबेलेमें क्यों गई है ? यह विचार कर " लीला " झट छतपर चढ़ गई वहांसे नीचेका सब कुछ दिखता था सो चुप करके देखने लगी ! " माया " ने वह रुपयोंकी थैली लेकर एक तर्फ घोडेके लिये खानेका घास भरा हुआ था उस के पीछे भींतके एक आलेमें रख कर, उस पर अच्छी तरहसे घास ढक कर झट अपने कमरेमें चली गई !

आध घंटेके वाद येका येक चिल्ला कर वोली कि–हाय हाय ! यहां पलंग पर अभी मैं रुपयोंकी थेली रखके गई हूं वह न जाने कौन ले गया ? घरकी तमाम औरतें इकठी होगईं !

माया– (सवसे) " विश्वंभर " के सिवाय अभी तक मेरी कोठडीमें कोई नहीं आया ! वस ! मुझे तो लगता है कि, ये उसीका काम है ? (अपने लड़के " श्रीनाथ " से) अरे जारे ! जलदी अपने तायाको वुलाला !

श्रीनाथ– (वैठकमें जाकर " वंशगोपाल " से) तायाजी ! अंदर चलो जलदी ! मेरी अम्मा वुलाती है !

वंशगोपाल– क्यों ऐसा घवराया हुआ क्यों वोलता है ?

श्रीनाथ–वव्वू भाई रुपये लेकर भाग गया !

वंशगोपाल–हैं ! (जलदी जलदी आकर औरतोंमें खड़ीहुई " माया " से) क्या हुआ ?

माया– (कुछ सिरका कपड़ा नीचा करके) हुआ ! करमका दलिया ! अभी जो वारां सौ रुपए तुम मुझे देकर गये थे वो " विश्वंभर " अंदर आकर वाहर गया है, रुपया है नहीं ! इस छोकरेने तो मेरा जी ले डाला !

जलदी तलाश करो नहीं तो जुएमें हार आवेगा, मुझेतो अब आशा नहीं कि, रुपया मिल जाय ! (यह

सुनतेही " वंशगोपाल " कपड़े पहन कर जलदी जलदी " विश्वंभर " की तलाशके लिये " युगलकिशोर " के घरकी तरफ गये ! " जयंतिसहाय " भी अपने दो लड़कोंको लेकर ढूढने निकले ! इधर घरमें " माया " ने रोना और फैल मचाना शुरु कर दिया ! यह कार्रवाई देख कर—

लीला—(अपने मनही मनमें) हाय ! हाय ! इसने यह जाल रचकर विचारे " विश्वंभर " को दुःखमें डालनेका साहस किया है ! मैं क्या करूं ? किससे कहूं ? निर्दोष भाईको कलंकसे कैसे बचाऊं ? अगर इसके छिपाये हुए रुपयोंका भेद मैं प्रगट करदूं तो यह मेरी वैरन बन जायगी ! अगर ऐसाभी करूं तो कहीं उलटा यहीं न हो जाय कि, यह " विश्वंभर " ही छिपागया है ! कोई ऐसा उपाय करूं जिससे भाई, निर्दोष हो जाय और इसको अपने कियेका फल मिले !

(इत्यादि विचार करके कुछ मनमें धीरज लाकर) अच्छा जो होना होगा सो होगा ! मगर अब इस रुपयोंको तो ठिकाने लगाऊं ! यहभी अपने मनमें क्या समझे गी कि, हां ! मेरा भी चोटला पकड़ने वाली दुनियांमें बहुत हैं !

यह विचार कर धीरेसे अपनी मांकी नजर बचाकर झट बाहर निकल गई और तबेलेमें जहां " माया "

ने रुपयोंकी थैली छिपाई थी धीरेसे निकाल कर आने लगी ! इतनेमें " लीला " के पैरोंका आहट होनेसे)

सहीस– (नींदमेंसे चौक कर) कौन ?

लीला–मैं हुं !

सहीस– (चार पाईसे उठकर) कौन, बाईजी ! क्यों तुम इस वक्त ?

लीला–श्यामको छतके बनेरं पर मैंने अपना पहरन सुकाया था, वह उड़कर यहां आपड़ा था सो लेने आई हूं ! क्यों शहरमें दिवाली देखने नहीं गया ?

सहीस–जी ! गया था, देख आया ! बाईजी ! अभी घरमेंसे मुझे किसीकी रोनेकी आवाज आइ थी ! क्या था ?

लीला–वो तो " माया " के रोनेकी आवाज होगी !

सहीस– क्यों ? आज बरस दिनके त्योहारको रोना ! सुख तो है ?

लीला–" विश्वंभर" बारां सौ रुपये लेकर कहीं भाग गया !

सहीस–अजी नहीं ! " विश्वंभर " एसा करे. यह मैं तो कभी न मानूं !

लीला– (सहीसके नजदीकमें जाकर धीरेसे) अगर " विश्वंभर " के लिये तेरा ऐसा विश्वास है तो तू मेरा एक कहना मानेगा ?

सहीस–वेशक मानूंगा, अगर उसमें कुछ नुकशान न मालूम होगा तो !

लीला–नहीं नुकशान जराभी नहीं ! बलकि तुझे फायदा होगा । मगर जो मैं कहुं उसे करनेका वचन दे ! तो !

सहीस– (अपने मनही मनमें) हैं ! यह लड़की क्या कहना चाहती है ? इस वक्त रातके दश बज चुके हैं, यह कभी दिनमें मुझसे वात नहीं करती थी तो इस वक्त कैसे ? अगर इस वक्त कोई मुझे इसके साथ वात करते देखले तो मेरातो ठिकानाही लगजावे ! खैर सुनूं तो सही कि क्या कहती है– (प्रगट) मैं आपका निमक खाता हुं, क्यों न आपका कहना करूंगा ? (यह सहीस इनके यहां " शारदाचंद्र " के मरनेसे भी १९ वर्ष पहलेका पुराना और विश्वासू नौकर था. और यह लड़की " लीला " अपने नाना जो गुड़गावके जिलेमें डिपटी थे उनके यहां रहनेसे अच्छी तरह शिक्षा मिलनेसे पढ़ी लिखी और वड़ी होशियार थी ! इसके नानाने इसकी मंगनी एक ऐसे सुशिक्षित लड़केके साथ की हुईथी जो अभी वीए. क्लासमें इलाहवाद पढ़ता था ! विवाह करनेके लिये मां वाप वहुतही चट पटाते थे कि चौदां वर्षकी लड़की अवतक घरमें कुमारी रहे यह वात अच्छी नहीं ! मगर डिपटी साहवके सामने किसीकी पेश न चल सकती थी ! और नांही लड़के वालोंको यह वात

मंजुर थी ! घरमें " लीला " का लोगों पर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ गया था कि, इसके सामने एकदम बोलने को किसीकी हिम्मत न पड़ती थी तो विचारे सहीसके मनमें ऐसा विचार आना सहजही था.)

लीला- (सहीससे बिलकुल नजदीकमें होकर तुं कसम खा कि, यह बात घरमें किसीसे न कहुंगा !

सहीस-मुझे क्या जरूरत है ?

लीला-देख ! विश्वास घात करनेके समान दुनियांमें दूसरा पाप नहीं ! याद रखना !

सहीस-मेरी जान जायगी मगर आपकी बात बाहर न जायगी ! जो कहना है कहिये !

लीला- (रुपयोंकी थैली देकर, कुल हाल " माया " का कह कर) तुं यह रुपया " रायसाहब " को जैसे बने वैसे अभी दे आ ! और मेरा नाम लेकर कहना कि, " लीला " ने कहा है कि, आपको जैसा ठीक लगे वैसा करें ! मगर भाईको " माया " के दिये हुये कलंकसे छुडावें ! बहेतर हो कि, अगर " ज्योतिश्चंद्र " भाई मुझे सुबह छ बजे जगन्नाथजीके मंदरमें मिल जावे तो मैं कुल हाल उससे कह दूं ! और आपने जो विचार किया हो वह " ज्योतिषभाई " द्वारा मुझे मालूम हो जावे !

सहीस- (यह कुल वारदात सुन कर) अच्छा मैं जाता हूं, मगर " विश्वंभर " की तलाशके लिये दौड धूममें कहीं मुझे रातको बग्घी जोड़नेके लिये किसीने आवाज दी तो ?

लीला-अब तुं इस बातकी चिंता मत कर और जल्दी जा ! (इतना कहकर " लीला " तो घरमें चली गई और सहीस वह रुपयोंकी थैली लिये हुए मनमें अनेक प्रकारके तरंगोंके घोड़े दौड़ाता हुआ " रायसाहव " की कोठी पर जा हाजर हुआ !)

सहीस- (ड्योढ़ी पर एक सिपाहीसे) मुझे "रायसाहव" से मिलना है !

सिपाही-(सामने घंडी देख कर) ग्यारां वज गये हैं अब तो मिलना मुशकिल है !

सहीस- मुझे वड़ा जरूरी काम है ! (रुपयोंकी थैली कंदे परसे उतार कर बगलमें लेता हुआ)

सिपाही- (रुपयोंकी आवाज सुनकर) क्या नाम है तेरा ?

सहीस-मेरे नामकी क्या जरूरत है ? तुम इतनी खवर कर दो कि " विश्वंभर " के यहांसे एक आदमी आया है.

सिपाही- (ऊपर जाकर "ज्योतिश्चंद्र" पढ़ रहाथा उससे) हजूर ! " विश्वंभर " के यहांसे एक आदमी आया है.

ज्योतिश्चंद्र– (एकदम दौड़ता हुआ नीचे आया और सहीसको देख कर) अरे क्यों ? क्या है ?

सहीस– मुझे " रायसाहब " से मिलना है !

ज्योतिश्चंद्र–चल आ ऊपर ! (जीनेमें चढ़ते चढ़ते) ख़ैर तो है ?

सहीस–खैर होती तो इस वक्त क्यों आता ?

ज्योतिश्चंद्र– (घबरा कर) हैं ! क्या बोलता हैं ? भाई कहां है ?

सहीस–बारां सौ रुपये लेकर भाग गये !

ज्योतिश्चंद्र–अबे ! सच सच कह न ! बात क्या है ?

सहीस–हजूर ऊपर तो चलो !

(दोनों जने बैठकमें गये, सहीसको वहांही खड़ा करके " ज्योतिश्चंद्र" ने अंदर जाकर अपने बापसे कहा कि " विश्वंभर " के यहांसे एक आदमी आया है. " रायसाहब " एक न्यूज पेपर (अखबार) बांच रहे थे उठकर कोठीमें आये और उसको देख कर)

रायसाहब–क्यों भाई ?

सहीस– (झुक कर दोनों हाथोंसे सलाम करके) हजूर ! यह बारां सौ रुपये ! (थैली आगे रखदी.)

रायसाहब–यह कैसे रुपये ?

सहीस–हजूर ! आप बैठ जाइयेगा तो मैं कहूं ! (रायसाहब एक कुरसी पर बैठ गये और सहीसने जो कुछ " लीला " ने कहा था वह सब कह सुनाया.)

रायसाहब–(दांत किट किटाकर) ये कैसे कमवख्त लोक हैं ? जो इसके पीछे हाथ धोकर पड़े हैं ! (सहीससे) अच्छा भाई ! तूतो जा ! जो बनेगा सो देखा जायगा (सहीस तो आकर अपने तबेलेमें सोगया ! और "राय साहब" ने उसी वक्त कोतवाल साहबको एक पत्र लिख कर वह रुपया अपने खास आदमी के हाथ दे भेजा और कहला दिया कि, सुबहमें " ज्योतिश्चंद्र " वाकीका कुल समाचार लेकर आपको मिलेगा ! कोतवाल साहब सेंधेखां, वडेही नेक और इन्साफ पसंद, लोक प्रिय आदमी थे ! " शारदाचंद्र " के साथ आपकी वडी गहरी दोस्ती थी ! और " रायसाहब " के साथ तो घर जैसा मामला था ! लेकिन कभी किसी काममें आपने किसीका लिहाज नहीं किया ! गरज आपकी लायकी जग जाहिर थी ! " विश्वंभर " पर " माया " के झुठा तौहमत लगानेका समाचार सुन कर उन्हे वड़ाही गुस्सा आया और समाचार लाने वाले उस आदमीसे वोले कि " रायसाहब " को कहना कि, मैं सुबह उनके मकान पर जाकर जो ठीक लगेगा वह करूंगा, मगर "विश्वंभर " का पता मिल जाव तो बहुतही अच्छी वात है !

इतना कह कर आप अंदर चले गये और आदमीने उनके कहनेको रायसाहबसे जा सुनाया.

इधर रातके दो बजे तक " वंशगोपाल " वगैरहने " विश्वंभर " को सारे ढूंढ मारा ! मगर कहीं पता न लगा ! पतातो जब लगता जो " विश्वंभर " घरके बाहर गया होता ! " विश्वंभर " तो अपनी मां के दिये हुए इलजाम की आवाज कांनमें पडते ही चुपचाप छतकी ममटी पर चढ़कर सारी कार्रवाई देखता और कांनोसे सुनता हुआ सो गया था. गरज सुबह होते ही एक पुलिसके सिपाहीने दरवाजेपर आवाज दी कि— पंडित वंशगोपालजी !

वंशगोपाल– (बाहर आकर) क्यों भाई ! क्या है ?

सिपाही–आपको कोतवाल साहब बुलाते हैं !

वंशगोपाल–क्यों ?

सिपाही–मुझे क्या खबर कि क्यों ?

वंशगोपाल– (उदास हुआ हुआ अंदर जाकर अपने बड़े भाइ " जयंतिसहाय " से) भाई ! मैं तो जाता हूं, तुम " युगलकिशोर " को लेकर जल्दी पहुंचो ! (इतना कहकर उस सिपाहीके साथ कोतवालीमें पहुंचे तो कोतवाल साहबने " वंशगोपाल " को अपने पास बिठाकर)

कोतवाल– (वंशगोपालको देखते हुए चुप चाप बैठे हैं)

वंशगोपाल–आपने मुझे याद किया, फरमाइये क्या हुक्म है ?

कोतवाल–मैं ने सुना है कि " विश्वंभर " बारां सौ रुपये लेकर कल रातको भाग गया है ! क्या यह बात सच है ?

वंशगोपाल–हजूर ! बारां सौ रुपया तो जरूर गया, मगर अभी यह नहीं मालुम कि " विश्वंभर " ही लेगया है या और कोई ! लेकिन अभी तक " विश्वंभर " का भी पता नहीं लगा !

कोतवाल–तुमने अपने घर चोरी हो जानेकी पुलिसमें इत्तला दी ?

वंशगोपाल–जी नहीं !

कोतवाल–क्यों ?

वंशगोपाल–जब तक कि " विश्वंभर " न मिल ले !

कोतवाल–अगर मिल जावे तो ऐसे चोरको तुम घरमें रखोंगे तो सरकारके गुन्हेगार न होगे ?

(वंशगोपाल कोतवाल साहबको बोलते हुए मुसकराते देख कर कुछ बिचारमें पड़ा. इतनेमें कोतवाल साहब फिर) पंडितजी ! आपके भतीजेको " रावसाहब " ने चोरी करना सिखा दिया ! मुझे अच्छी तरह

मालूम है कि, वह ऐसही आदमी हैं ! आपकी लायकी कातो कुछ पार नहीं ! उस " विश्वंभर " परतो आप लोगोंने बड़ी ही जिगर तोड़ मेहनत कीथी कि, यह पशुही वने ! मगर देखो " रायसाहव " की कैसी वे समझी कि उन्होंने उसे पशु वनानेके वदले मनुष्य वनानेका तन, मन और धनसे प्रयत्न किया ! यह उनकी कितनी वड़ी भूल ! खैर जो होना था सो हुआ ! मगर अव आप यह कहिये कि " विश्वंभर " को मिलने पर क्या किया जावे ? (कोतवाल साहवके) इस व्यंग भरे कथनको सुन कर पंडितजी वड़ेही तअज्जुवमें पड़गये !)

वंशगोपाल–हजूर ! आपकी वात सुन कर मेरा दिल कांपता है ! आप न जाने क्या फरमाते हैं ?

कोतवाल– (एक दम क्रोधमें आकर अपने दोनों हाथ मेज पर पछाड़ते हुए) अरे दिल क्या कांपता है अभी सव कुछ कांपेगा जरा ठहरो ! दिखाता हूं तमाशा !

(इधर " ज्योतिश्चंद्र " सुवह उठतेही जगन्नाथजीके मंदिरमें " लीला " से मिला और कुल कार्रवाई जो कुछ रातमें वनी थी सव सुनी, विशेषमें " लीला " ने यह भी कहा कि " विश्वंभर " घरमें ही है मगर मेरे सिवाय किसीको खवर नहीं है, क्यों कि मुझे भी अभी आते हुए इशारासे उसीने कहा कि, मैं घरमें हुं ! " लीला " तो अपने घर चली गई और "ज्योतिश्चंद्र"

कोतवाल साहबके यहां पहुंचा. "वंशगोपाल" पर कोतवाल साहब तेज हो रहे थे ! इतनेमें—

ज्योतिश्चंद्र— (आगे बढ़कर कोतवाल साहबसे) जनाब ! आदाब अरज !

कोतवाल—साहब ! आदाब ! आईये (कुरसी तरफ हाथ करके) बैठिये !

ज्योतिश्चंद्र— (बैठते बैठते वंशगोपालसे) पंडितजी ! आप सुबही सुबह यहां कैसे ?

कोतवाल— (ज्योतिश्चंद्रसे) वाह साहब क्या आपको नहीं मालूम कि, आपका मित्र (इनका भतीजा "विश्वंभर") रातको बारां सौ रुपये लेकर भाग गया ! ये उसकी रिपोर्ट लिखाने आये हैं !

ज्योतिश्चंद्र— (चमक कर, हैं ! ऐसा ? "विश्वंभर" बारां सौ रुपये लेकर भाग गया ? जबी वो सारी रात अपने घरसे बाहर नहीं निकला !

कोतवाल— (आश्चर्य पूर्वक) अच्छा ! वो अपने घरमें है ? यह तो कहते हैं सारेही ढूंढ मारा कहीं पता नहीं मिला !

ज्योतिश्चंद्र—हजूर ! इन्होंने घरके बाहर ही ढूंढा अगर अंदर ढूंढते पताभी लगता और रुपया भी मिलता ! अबतो वो जुएमें हार गया अब मिलेगा कैसे ?

(यह सुन करतो " वंशगोपाल " और भी ज्यादा चकराये, कि यह क्या ? इतनेमें " जयंतिसहाय " " युगलकिशोर " वकील (विश्वंभरके मामा) को लेकर आए, उनको देखते ही " ज्योतिश्चंद्र " झट आगे जाकर " युगलकिशोर " का हाथ पकड़ किनारे लेगया और " लीला " से जो वात सुनी थी वह सब कह सुनाई. यह सुनकर तो " युगलकिशोर " के क्रोधका पार न रहा, उसी वक्त कोतवाल साहबसे सलाम करके पीछे चल दिये, " युगलकिशोर " को जाते देख)

कोतवाल–क्यों ? क्यों ? वकील साहब ! आए और चले ! कुछ काम है ? जरा सुनो ता सही ! (युगलकिशोर लौट कर चुपचाप खां साहबके सामने एक कुरसी पर बैठ गये.) (कोतवाल साहब उठकर " जयंतिसहाय " से) पंडितजी ! मैं तुम्हारे मकान पर चलना चाहताहूं !

जयंतिसहाय–हजूरकी बड़ी मेहर बानी ! मगर एक अरज है कि आप हमारी इज्जतके तरफ ख्याल कीजिये ! मैं ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहता ! " ज्योतिश्चंद्र " को यहां आये देख कर मालूम होता है कि कुछ विशेष गरबड़ है (युगलकिशोरसे) क्यों भाई ! सच कहो " ज्योतिश्चंद्र " ने आपको क्या भराया ?

युगलकिशोर– (क्रोध पूर्वक) भराया तुम्हारा सिर ! बस ! मैं नहीं जानता, तुम जानो और कोतवाल साहब जाने !

मैं तो अपने घर जाता हूं ! (उठते हुएको हाथसे पकड़ कर)

कोतवाल–नहीं ! आपको मेरे साथ चलना होगा (एक सिपाहीसे) अरे सुन्दर सिंह ! लो यह रुपयोंकी थैली (मेज परसे थैली, जो " बंशगोपाल " के आनेसे रुमालके साथ ढ़ांक दी थी, उठा कर) और मेरे साथ चलो ! (जयंतिसहायसे) पंडितजी ! चलिये पहले आपके घरसे चोरको गिरफ्तार करूं ! (जयंतिसहाय वह रुपयोंकी थैली देख कर तो बहुतही घबड़ाये ! " बंशगोपाल " के कानके साथ मुं लगा कर पूछने लगे कि, अरे यह क्या बात है ? " बंशगोपाल " ने धीरसे कोतवालके कहे हुए वाक्य सुनादिये ! इतनेमें कोतवाल साहब अंदर जाकर सिरपर साफा रख कर बाहर आये और चलने लगे)

जयंतिसहाय–(कोतवाल साहबके आगे होकर बड़ी अधीनगीके साथ) हजूर ! हमारी इज्जतकी तरफ ख्याल कीजियेगा ! यह रुपयोंकी थैली आपके पास देख मैं हैरान हूं कि, यह क्या माजरा है ?

कोतवाल–(हाथसे हठाकर) आप चलिये तो सही अपने मकानपर सबही मालूम हो जायगा !

जयंतिसहाय–(हाथ जोडकर) नहीं हजूर !

कोतवाल–बस ! यहां ज्यादा चीं चीं पीं पीं मतकरो !

(सबके सब मकान पर आये उस वक्त कोतवाल साहबको आया देख गलीके सब लोग इकट्ठे होगये ! मगर कोतवाल साहब एकदम चुपचाप सीधे अंदर चले गये और " जयंतिसहाय " से बोले) पंडितजी ! आपका भतीजा " विश्वंभर " घरमें नहीं है ?

जयंतिसहाय-हजूर ! घरमें तो तलाश नहीं किया (घरमें कोतवालके आनेसे औरतें सब एक कमरेमें चली गईं और कोतवाल साहब एक कुरसी पर बैठ गये. इतनेमें उपरसे उतर कर " विश्वंभर " कोतवाल साहबको सलाम करके आगे आ खड़ा हुआ ! सिपाहीके हाथमें वही रुपयोंकी थैली देख कर " माया " की छाती धडकन लगी और " लीला " मुसकराई ! घरके सब लोग घबड़ा गये कि, अब क्या होगा ? " विश्वंभर " का हाथ पकड कर)

कोतवाल- (जयंतिसहायसे) लो ! कहिये ! चोरतो घरमें ही निकला ! तुम यूंही शहरमें ढुंढते फिरे ! खैर अब मैं तुमसे इतना ही पूछना चारता हूं कि, क्या मैं तुम्हारी भोजाई " विश्वंभर " की मांसे कुछ पूछ सकता हूं ?

जयंतिसहाय-खुशीसे !

कोतवाल-कहां है ?

जयंतिसहाय- (सामने दालानमें खड़ी हुई " माया " से) तुमसे कोतवाल साहब कुछ पूछना चाहते हैं सो जो पूछे उसका जवाब देना !

माया- (कांपती हुई) मेरेसे क्या पूछना है ?

जयंतिसहाय-तुम इतना घबड़ाती क्यों हो ? जो पूछे उसका जवाब देना !

माया- (मनमें) हाय ! हाय ! यह क्या आफत है ? ये रुपये इनको कैसे मिले ?

(जयंतिसहायके कहनेसे सब औरतें दूसरे दालानमें चली गईं और " माया " कांपती हुई एक तरफ बैठी तो आगे जाकर एक पीढी पर बैठते हुए)

कोतवाल- (मायासे) बहन ! देखो तुम सच सच कहदो कि, रुपया " विश्वंभर " को ले जाते तुमने देखा ?

माया-नहीं !

कोतवाल-तो तुमने उसका नाम कैसे लिया ? बहन ! देखो मैं कसम खाके कहता हूं कि जो तुम सच सच बात कहदो तो अच्छी बात है वरना मुझे सब मालूम है जो कुछभी तुमने कारस्तानी की है ! देखो ! इस वक्त तो सिर्फ मैंही जानता हूं वरना पीछे सब लोग जानेंगे तो उसमें तुम्हें कितना नीचा देखना पड़ेगा !

तुम्हे अपने बेटेकी कसम खानेकी नौबत न आवे तो अच्छी वात है ! कहो ! जिस वक्त तुम तवेलेमें रुपये छिपाने गई थीं उस वक्त तुमने किसी आदमीको नहीं देखा ?

माया- (यह सुनते ही आंखोंमें आंसू भरके घूंघटको जरा सा ऊंचा करके कोतवालकी तर्फ) यह आपने क्या कहा ?

कोतवाल-जो तुमने किया सो कहा ! क्यों क्या इसमें झूठ है ? याद रखो ! मेरे सामने फरेब न चलेगा !

माया- (साहस धरके) फिर जब आप जानते हैं तो मुझसे क्या पूछते हैं ?

कोतवाल-मैं पूछता हुं कि, रुपया तवेलेमें किसने छिपाया ?

माया- " माया " ने !

कोतवाल-क्यों ?

माया-हजम करनेको !

कोतवाल-फिर हजम हो गया ?

माया-हो कैसे ? विना नसीब !

कोतवाल- (खड़े होकर) देखो ! मैं सिर्फ तुम्हारे मूंसे यह वात कवूल कराना चाहता था सो जो सच बात थी वह निकल आई इस वक्त अगर मैं चाहुं तो तुम्हे सीधा

हवालातमें भेजवा सकता हुं मगर जब मुझे इस घरकी आवरूका ख्याल आता है तो मुझे तुमको इतनीही सजासे छुट्टी देनी पड़ती है कि, अब इस लड़केके लिये आगेको कभी ऐसी तौमत न लगाना !

(कोतवाल साहब तो " माया " के साथ बात कर रहे थे इतनेमें इधर " युगलकिशोर " की "वंशगोपाल" के साथ अबे तबे पर नौवत आगई, और "युगलकिशोर" ने एकदम हंड़ा फोड दिया ! " माया " की करतूत सबको मालूम होगई ! मगर इस बातको सुन कर कोतवाल साहब बड़ेही नाराज हुए ! आखर " जयंतिसहाय " को जो कुछ कहना था वो कह कर कोतवाल साहब चले गये और युगलकिशोर " " विश्वंभर " को साथ लेकर अपने यहां चले गये ! घरमें पीछे बडीही गडबड मची परंतु यह किसीको नहीं मालूम हुआ कि रुपया तबेलेमेंसे कोतवाल साहबके पास कैसे पहुंचा ! " माया " ने दो रोज तक इस दुःखसे कुछ खाया नहीं ! अंतमें जब " विश्वंभर " को यह खबर लगी तो वो फिर घर आया और अपनी मांको आकर मनाया और अपनी सौगंद दिलाकर खानेको खिलाया ! पांच सात दिनके बाद सबही इस बातको भूल गये मगर " माया " के अंदर " विश्वंभर " पर अधिकसे अधिक इर्षा बढ़ती गई जिसके कारण घरमें हमेशा क्लेश-कंकास रहने लगा.

" विश्वंभर " चाहता था कि मैं अपनी इस मतेरेई (मां) का जो मारग है वह निष्कंटक करदूं, मुझे अपने पिताकी संपत्तिके दो हिस्से करने बिलकुल मंजूर नहीं ! भले इस जायदातका मालिक " श्रीनाथ " ही क्यों न बने ! मैं लिख दूं कि मेरा कुछभी हक नहीं परंतु " माया " को शान्ति हो ! लेकिन " विश्वंभर " के इन निष्कपट सत्य विचारोंको " माया " के हृदयमें हजारहां मेहनत करने परभी कोई सीधा बिठाने वाला न था !

" माया " के मनमें तो हमेशां यही विचार रहताथा कि, अब यह " विश्वंभर " दो सालमें वालिग (अठारां सालका) हो खुद मुखत्यार वन जायगा मेरे पतिके स्टेटका मालिक ये होगा ! तव मेरा " श्रीनाथ " किस गिनतीमें ? ट्रस्टी लोगभी इसीका पक्ष और इसकी तारीफ करते हैं ! इस खोटे विचारोंने "माया" के मनको मलीन कर " माया " नाम सार्थक कर दिया !

" माया " ने " विश्वंभर " के लिये एक भीषण कांड रचा जिसमें " माया " को सकुटुंब बिरादरीसे वाहर होना पड़ा !

इस समय " विश्वंभर " की मनशा अपनी मां (माया) को सुखी करनेकी पूरी हुई ! " विश्वंभर " इतने दुःख सहते हुएभी घरमें क्यों रहा, वह कारण आज

नाश होगया ! "विश्वंभर" का कोमल हृदय "माया" के भीषणकांडसे चूरचूर हो जानेके बदले वज्र जैसा बन गया. इसका कारण " अब मैं मां (माया) के दुःख का अंत ला चुका " इस बातकी खुशी ! " पूर्ण स्वतंत्रता की प्राप्तिका आनंद ! इससे परे और क्या चाहिये ? " विश्वंभर " आज आखीरी घरसे विदा होता है, माघका महीना, कमरमें एक धोती, शरीर पर कमीज, बस इन तीन चीजोंके सिवाय पास कुछ नहीं,

कॅप अंबालेके स्टेशनके बाहर जाकर एक हलवाईकी भट्टीके सामने आग सेकने बैठ गया ! उस वक्त मारे शरदीके सारा शरीर थर थर कांपता था, रुमंटे खड़े हो रहे थे, होठ नीले पड़गये थे, सारी रातकी हवाने रेलमें परेशान कर दिया था ! बस दशबजे धूपकी तेजीने भी जोर पकड़ा कि " विश्वंभर " ने अंबाला छावनीका रास्ता लिया ! और बाजारमें पहुंचा कि, एक मकान बड़े बड़े झंडों और बंदरवालोंसे सजाया हुआ उसने देखा, दरवाजे पर बेंड बाजा बजरहा था, उपरके भागमें मोटे मोटे अक्षरोंमें " वैलकम् " लिखा हुआ था, वहां पर खड़े होकर " विश्वंभर " ने एक दुकानदारसे पूछा कि, क्यों भाई ! यहां क्या है ?

दुकानदार–यहां है ! दयानन्दियोंका स्यापा !

विश्वंभर-वह दयानन्दी कौन ? (विश्वंभरको किसीभी धर्मका पता नथा, मजहव किसे कहते हैं और इस वक्त कौन २ मजहव तेजी पर हैं और वह क्या किया करते हैं और क्या मानते हैं ? हां इतना जानता था कि, एक सनातन धर्म सभा है, रामलीला भी एक धर्म है, मथरामें जो रास वगैरह देखी थी इससे रासलीलाभी एक धर्म है, मुसलमान ताजिये निकालते हैं यह भी एक धर्म है, ईसाइयोंको घंटा घरके नीचे स्पीच देते देखा था इससे, यह ईसाइ हैं इतना ही जानता था ! दयानन्दका तो इसने कभी नाम भी नहीं सुना था, सुनना कहांसे था इसके जनमसे पहले ही स्वामीजी डेरा कूच कर गये थे ! उस आदमीके कहनेको " विश्वंभर " ने समझा कि, कोई दयानंदी बुड्ढा मरगया उसका स्यापा है ! इस लिये उस आदमीसे फिर पूछा) और कव निकलेगा ? क्या बहुत बूढ़ा था ?

दुकानदार- (यह दुकानदार शायद सनातन धर्मी हो) भाई ! तुम क्या समझे ?

विश्वंभर-तुमने यही कहा कि, यहां है दयानन्दियोंका स्यापा ! इसका मतलव मैं तो यह समझा कि कोई मरगया है उसका विमान विमून निकलने वाला है !

दुकानदार- (हँसकर) वाह भाई वाह ! जरा अंदर जा कर देखो ! किसीको अंदर जानेकी रुकावट नहीं है !

(धीरे धीरे अंदर जाकर देखा तो चौकमें एक अग्नि कुंड जलरहा है, कितनेक आदमी पत्रे हाथम लिये वहुतसी चीजोंको हिला मिला रहे हैं और एक जाजिम पर अच्छे अच्छे ३०-३५ सफेद पास जेन्टिल मैन बैठे हैं उनको देखकर खड़ा होगया ! इतनम उनमेंसे एक महाशयने " विश्वंभर " को किनारे खड़ा देखकर अपने पास बुला कर पूछा कि, क्यों क्या देखते हो ?)

विश्वंभर-जो कुछ कि आप करते हैं !

महाशय-तुम्हारा नाम ?

विश्वंभर-आपको क्या काम ?

महाशय-क्या नाम वतलानेमें भी डर है ?

विश्वंभर-विना किसी जरूरतके ?

महाशय-तुम यहांके तो मालूम नहीं देते ?

विश्वंभर-इससे आपको क्या ?

महाशय-अच्छा भाई ! वैठो ! यहां यज्ञ होता है देखो !

(विश्वंभर उन लोगोंके वीचमें वैठ गया कि, थोडी सी देरमें वहुतसे लोग इकठे होगये और हवन शुरू हुआ हवनकी समाप्तिमें एक जन्टिलमैनने खडे होकर, खूब ऊँचे नींचे हाथ मारते हुए आध घंटे तक लैक्चर दिया, वादमें उठकर सव चले गये ! यह हवन होनेका

कारण एक समाजीके लड़केके विवाहमें तीन दिन रह-
तेथे. जब सब लोग उठ २ कर चले गये तो एक कुरसी
पर अंगरेजी पोशाकमें वैठे हुए एक वाबूजीसे)

विश्वंभर–Please I do not ask anything from you
but I lete you this much "I am mungry."

वाबू–भाई ! मैं अंगरेजी नहीं जानता !

विश्वंभर–जनाव ! मैं आपसे कुछ मांगता नहीं हूं मगर
इतना ही कहता हूं कि, मुझे भूख लग रही है !

(वाबूने "विश्वंभर" को अपने पास विठा कर
सव वात पूछी, मगर "विश्वंभर" ने सिवाय घरसे
भाग आनेके एक भी वात सत्य न कही ! उसने अपने
लड़केसे कहा कि, इन्हे घर ले जाकर अच्छी तरह रोटी
खिला लाओ ! उसने "विश्वंभर" को घर ले जाकर
विवाहकी मिठाई लाकर खानेको दी और साथही वापस
ले आया ! उस रोज "विश्वंभर" ने वह रात वहांही
काटी और अगले दिन स्टेशन पर आ, फिर गाडीमें वैठ
जालंधर जा उतरा ! उस वक्त रातके दश वजे थे, मुसा-
फर खानेमें आकर सोना चाहा था मगर सिपाहीने
कहा कि, जाओ सरांयमें, यहांपर इस वक्त कोई मुसा-
फर दिखता है ? उस वक्त "विश्वंभर" सरदीके मारे
वडाही तंग हो रहा था ! मनमें विचारने लगा कि,
सरांय वाला तो विना पैसे सोने न देगा, और कहींका

ठिकाना नहीं मालुम ! क्या करूं ? ऐसा विचार कर सीधा पूछता पूछता कोतवालीके अंदर जाने लगा तो दरवाजे पर खड़ा हुआ)

सिपाही–ए ! कहां ?

विश्वंभर–भाई ! मैं अंदर कोतवाल या दरोगासे मिलना चाहता हुं ! (इतना कहता हुआ अंदर जाकर जहां कोतवाल साहब दो चार आदमियोंसे बैठे बातें कर रहे थे वहां जा खडा हुआ)

कोतवाल– (विश्वंभरको देख कर) क्यों भाई ! क्या है ?

विश्वंभर–है क्या देख लीजीये ! सरदीके मारे दांत बज रहे हैं ! आवाज नहीं निकलती ! इस लिये यहां कोई कोठडी हो तो रात सो जानेके लिये मेहरबानी कीजीये क्यों कि सरांयमें जाऊं तो एक पैसा चाहिये सो पास कौडीभी नहीं ! अगर बाजारमें किसीकी दुकानके आगे पड रहूं तो आपके सिपाही चोर समझ कर और भी मुसीबतमें डालें तो फिर क्या बने ?

कोतवाल– (विश्वंभरके कहनेको सुनकर बडे रहमके साथ) अच्छा वह सामने कोठडी है उसमें सो जाओ ! और सुबह तुमने अपना कुल नाम ठाम हमको बतलाना !

(एक सिपाहीसे) भाई ! इसको अंदरसे दो तीन वरान् कोट (कंवलके ओवर कोट) निकाल दे ! एक नीचे बिछा लेगा और दो ओढ लेगा ! (सिपाहीने उसी वक्त निकाल दिये और एक कोठड़ी खोल दी जिसमें घास बिछा हुआ था उसमें वडे आरामसे सारी रात सो रहा, जब सुबहके वक्त उठा तो कोतवाल साहबने अपने पास बुलाकर पूछा कि, क्या नाम है ? कहांसे आये और कहां जाना है ?

विश्वंभर– (साफ२) मैं भाग कर आया हूं और मेरे साथ यह यह वीतक वीता है, मगर मैं अपने गामका नाम और मां वापका नाम तो हरगिज भी न वताऊं गा ! आपकी मेहरवानीसे मैंने रात वड़े आरामसे निकाली, अव आपसे रजा लेता हूं !

कोतवाल–अरे भाई ! इस तरह तुम क्या करोगे ? कपड़ा तुम्हारे पास नहीं, सरदी कसरतसे पड़ रही है ! खाओगे क्या ? पैसा भी पासमे नहीं है ! परदेशका मामला किसीसे जान पहचान भी नहीं है !

विश्वंभर–आपसे तो जान पहचान हो चुकी है ! अव कुछ न कुछ ठिकाना लग जायगा !

कोतवाल–अगर मेरा कहा मानो तो अपने घर चले जाओ ! वरना दुःख पाओगे !

विश्वंभर–अगर दुःखसे डरता तो घरसे क्यों निकलता ?

कोतवाल–क्या कुछ पढ़े हो ?

विश्वंभर–नहीं जैसाही ! वो भी तीन सालसे किताब नहीं देखी !

कोतवाल–भला फिरभी ?

विश्वंभर–सिक्स क्लास तक इंगलिश, लेकिन लेङ्गवेज हिन्दी !

कोतवाल–अच्छा ! मेरे एक दोस्त फोरस्ट ओफिसर आये हुए हैं मैं उनसे जिकर करूंगा, लेकिन वो आर्यसमाजी हैं ! वो जरूर तुमको किसी न किसी जगह लगा देवेंगे ! आज तो तुमने मेरे घर रोटी खा लेनां, दुपहरको उनसे मिला दूंगा !

विश्वंभर–(हँसकर) क्यों साहब ? अभी तो आप मुझसे पूछते थे कि, पास पैसा नहीं खाओगे क्या ? सो मेहरबान मेरी तकदीरही आपके पास मुझे ले आई है जो खाना पीना देनेको एक दीनका तो क्या जिन्दगीका बन्दोबस्त करनेके लिये आप तरद्दत करते हैं !

(दश बजे " विश्वंभर " कोतवाल साहबके घर रोटी खा शहरमें फिरता हुआ एक " नयनानन्द " को अपने मकानके चबूतरे पर बैठे हुए देख कर)

भोलानाथ–(नयनानंदसे) नमस्ते साहब !

नयनानन्द–नमस्ते ! नमस्ते ! आईए ! बैठिए !

भोलानाथ- (ठंडा श्वास छोड़कर) अजी क्या वैठूं !

नयनानन्द-क्यों क्या हुआ ? कहो तो सही !

भोलानाथ- (वैठकर) अजी कुछभी मत पुछो ? मेरी तो जानको वन रही है ! वस जवसे अजमेर छोडा तवसे ही मुझे तो इस विमारीने हैरान कर दिया है ! शहरमें कोई हकीम नहीं छोड़ा, कोई वैद्य नहीं छोडा, कई डॉक्टरोंको भी दिखला चुका, जम्मूमें एक फकीर सुने थे उनके पासभी जा आया मगर हाथसे यह नींवकी टैनी न छुटी !

नयनानन्द-मैं भी आपको दिन पर दिन दुवले होते जाते देखता हुं ! ऐसी क्या वीमारी है ?

भोलानाथ-अजी विमारी क्या है ? वस मोतकी सहेली है ! गरमीसे वदन गलता है ! इसे हकीम लोग सुजाक़ व जिरियाने रिक्त वतलाते हैं ! घरवाली विचारी " नन्दकोर " का कुछ हालही न पूछो ! मेरे दुःखसे वोभी अति दुःखिनी वन रही है ! क्या करूं ? वड़ीही चिन्ता में पड़ रहा हूं !

नयनानन्द-भला आपतो विमारीसे दुःख पाही रहे हैं, मगर अपने घरवाली विचारी " नंदकोर " को क्यों दुःखी कर रहे हैं ?

भोलानाथ-वो आपही मेरे दुःखसे दुःखी होती है, मैं तो उनको जराभी तकलीफ देनी नहीं चाहता ! सच पूछो

तो मुझे अपनी विमारीका इतना दुःख नहीं है जितना कि उनका !

नयनानन्द-अरे भाई ! ऐसा काम करो जिससे " नंदकौर " का दुःखभी दूर हो और तुम्हारा काम भी वने !

भोलानाथ-मैं यही तो चाहता हूं !

नयनानन्द-वाह साहव वाह ! आपको " स्वामीजी " का लेख याद नहीं ? कहांसे रहे ! छे सात साल तो हो लिये !

(इतनेमें अंदरसे हाथमें लकडी थांबे हुए और भीतका सहारा पकड़ कर " नयनानन्द " की स्त्री दमेंकी बिमारीसे खौं-खौं करती हुई डयौंढीके वाहर जहां दोनों वातें करते थे आकर बैठ गई)

भोलानाथ-अरे मिस्टर ! नहीं नहीं मुझे अपने परम गुरु " स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी " का लेख (" सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ११७ में-ऋग्० मं० १०, सू० १०, मं० १० ॥)

" अन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत् " इस वेद मंत्रका अर्थ अच्छी तरहसे याद है !

नयनानन्द-तव तो अफसोस कि आप उसपर अमल नहीं करते ! भला तुम्हारा यह याद किया हुआ किस काम आया ? अगर ऐसे मौकेपर भी वह " स्वामीजी " का

लेख इस्तेहमालमें न लाया जावेगा तो फिर किस वक्त ?

भोलानाथ-माईडियर मिस्टर ! सच बात तो यह है कि, आज कलका जमाना कुछ ऐसा नाजुक आगया है कि, किसी पर विश्वास नहीं आता ! क्यों कि कई एक ऐसी वारदातें बन चुकी हैं कि, ईमानदार समझ कर अमानत रखो मगर आखीरमें अच्छी चीज देख, मोहित हो वेई-मान बन जवाब दे देते हैं ! इस लिये मेरा दिल आज्ञा देते हुए झिझकता है ! हां अगर आप किसी ईमानदार शखसको अपनी जमानत पर तलाश कर देवे तो बेहतर है ! मेरी तकदीरमें तो दुःख लिखा है मगर वो विचारी दुःखी क्यों होवे ?

नयनानन्द-की औरत- (अपने पतिसे) अ-रे प्रा-ण-ना-थ ! आपके इन मित्रको क्या बिमारी है ? (श्वास) हाय-हाय-हाय अरे राम अरे राम ! आह-आह (खौं खौं खुरर खुखुः) और इ-नकी स्त्री " नन्दकौर " को अभीतक इन्होंने किसीसे नियोग करनेकी आज्ञा दी है, या कि नहीं ? अ-ग-र ना-ना दी हो-हो-होवे तो मेरी तरफसे आपको इजाजत है, बेशक आप "नंदकौर" के साथ नियोग कर लीजियेगा ! हा-य-हाय-हाय मैं मैं तो मरली-मरली आह्य रे (छाती दबाकर) खौं खौं मरी मरी उः ऊ--ह.

भोलानाथ- (नयनानन्दसे) अजी साहब ! इनको तो बड़ीही तकलीफ हो रही है ! किसीका इलाज भी कर-

वाते हो या नहीं ? इनको कितना आरसा हुआ बीमार हुए ?

नयनानन्द-अजी कुछ मत पूछो इसकाभी बहुत कुछ इलाज करालिया मगर दिनपर दिन दमा बढताही जाता है ! तीन वर्ष होनेको आए, सूककर शरीरकी देखो हड्डियां हड्डियां निकल आई हैं ! बैठा जाता नहीं, न दिनमें चैन, न रातको नींद ! मुझे कई दफा कहचुकी कि, तुम किसी अन्य स्त्रीसे नियोग करलो ! मगर अभीतक ऐसी कोई औरत मिली नहीं, और नाहीं मैंने तलाश करनेकी कोशिस की !

भोलानाथ-भाई ! "स्वामीजी" के लिखे हुए वेद मंत्रमें यह अर्थ तो निकलता है कि-"पति अपनी स्त्रीको अन्य पुरुषके साथ नियोग करनेकी आज्ञा देवे" परंतु यह मेरे ध्यानमें नहीं है कि, स्त्रीभी अपने पतिको आज्ञा देवे या कि नहीं ? जरा अंदरसे "सत्यार्थप्रकाश" तो लाओ ! देखूं वहां क्या लिखा है ? अगर ये आपकी स्त्री आपको आज्ञा देवें तो बड़ी ही अच्छी बात है ! मुझे अपनी स्त्री "नंदकौर" के लिये किसी दूसरे आदमीकी तलाश करनी मिटी ! आप जैसा ईमानदार (और फिर मेरे जिगरी दोस्त) दूसरा कौन मिलेगा ! इससे परे और क्या चाहिये ?

नयनानन्द- (जलदीसे) उठकर अंदर गये और सन् ८७का

" सत्यार्थप्रकाश " उठा लाये और पृष्ट ११७ निकाल कर) लीजिये !

भोलानाथ– (पूर्वोक्त मंत्रका अर्थ जो " स्वामीजी " ने लिखा है वह पढने लगे) "जव पति सन्तानोत्पतिमें असमर्थ
" होवे तव अपनी स्त्रीको आज्ञा देवे कि, हे सुभगे
" सौभाग्यकी इच्छा करने हारी स्त्री तूं (मत्) मुझसे (अन्यम्) दूसरे पतिकी (इच्छस्व) इच्छा कर ! क्यों कि
" अब मुझसे संतानोत्पत्तिकी आशा मत कर परंतु उस
" विवाहित महाशय पतिकी सेवामें तत्पर रह.
" वैसेही स्त्री भी जब रोगादि दोषोंसे ग्रस्त होकर
" सन्तानोत्पत्तिमें असमर्थ होवे तव अपने पतिको
" आज्ञा देवे कि, हे स्वामी ! आप सन्तानोत्पत्तिकी
" इच्छा मुझसे छोड़के किसी दूसरी विधवा स्त्री से
" नियोग करके सन्तानोत्पति कीजिये ! "

(इत्यादि पढ़ कर नयनानन्दसे) भाई साहव ! ठीकही निकला ! यह मेरे ध्यानमें न था कि, स्त्री भी अपने पतिको रोगादि कारण अन्य स्त्रीसे नियोग करनेकी आज्ञा देवे !

नयनानंद–अच्छा तो अव आपकी क्या मनशा है ? मेरी घरवाली तो मुझे इजाजत देती है ! और मैं भी तयार हुं ! अब आप फरमाईयेगा कि, आपकी " नंदकौर " मेरे मकान पर आया करेगी ! या कि मैंही उनके पास पहुंचा करूं !

भोलानाथ- (कुछ विचार करके) भाई ! इसमें ऐसा लिखा है कि " किसी दूसरी विधवा स्त्री से " सो मेरी स्त्री विधवा तो है नहीं ! फिर आप उससे नियोग करके सन्तानोत्पत्ति कैसे कर सकते हो ?

नयनानंद- तुमतो बेसमझीकी बात करते हो ! जहां पर पति अपनी स्त्रीको दूसरेसे नियोग करनेकी इजाजत देता है वहां रंडवे पुरुषसे नियोग कर, ऐसा क्यों नहीं कहा ? वहां तो साफ इतनेही अक्षर लिखे है कि, जब पति संतानोत्पत्तिमें असमर्थ होवे तब अपनी स्त्रीको आज्ञा देवे कि " हे सुभगे ! सौभाग्यकी इच्छा करने हारी स्त्री तूं मुझसे दूसरे पतिकी इच्छा कर " देखो तो इसमें कहीं रंडवा शब्द आया ?

भोलानाथ- नहीं !

नयनानंद- तो फिर उनके लिये नियोगी पुरुष वैसाही हो ! चाहे रंडवा, चाहे व्याहा !

भोलानाथ-अच्छा तो मैं जाता हूं और अपनी " नंदकौर" को कहता हूं कि, आजसे तेरे पास " नयनानंदजी " आया करेंगे ! " स्वामीजी " की आज्ञानुसार उनसे नियोग करके संतानोत्पत्ति करलेना ! लेकिन उनके मुखसे यह वाक्य मैं कई वार सुन चुका हूं कि, आर्य महिलाओंको चाहिये कि, अग्निमें पडकर मरजाये ! मगर पर पुरुषकी मनसे भी इच्छा न करे ! जिस स्त्रीने

अपना पतिव्रत धर्म नष्ट कर शीलको मलीन किया उसके जीनेको धिक्कार है ! इस विषय पर उन्होंने एक निबंध भी लिखा है !

नयनानंद–अजी ! नहीं नहीं ! “ नंदकौरजी ” का क्या कहना है ? वो तो आर्य धर्म पर बड़ा प्रेम रखने वाली पूरी पतिव्रता और नेक चलन है ! असल पूछो तो आपने बड़ी गलती खाई जो छ वरससे आजतक उनको इजाजत नहीं दी ! वरना अबतक तो दो तीन लड़के हो जाते !

भोलानाथ–वेशक ! उनको आर्य धर्मही प्रीय है ! मगर पर पुरुषके साथ संभोग करके वर्णसंकर पैदा करना वो इसको आर्य धर्म थोड़ेही मानती है ?

नयनानंद–तो क्या मेरी आशा पूरी न होगी ?

भोलानाथ–मुशकिल ! (जोडा पहन कर चलते हुए) अच्छा नमस्ते !

नयनानंद– (उदास होकर) नमस्ते !

(भोलानाथ वहांसे चलकर थोडीही दूर गये थे कि, इतनेमें पीछेसे आवाज देकर)

विश्वंभर– (साथ साथ चलता हुआ) लालाजी साहब ! आपको यह बिमारी कबसे है ?

भोलानाथ- क्यों भाई ! तुम्हारे पुछनेका क्या मतलब ?

(उस वक्त लालाजीने " विश्वंभर " को बंगाली समझा था ! क्यों कि, उसका पहनवेश वैसाही था)

विश्वंभर-मुझे यही मकसद है कि, आप इस बिमारीसे राजी हो जायें तो अच्छी बात है !

भोलानाथ- अच्छा तुमको मुझे बिमार देखकर इतना रहम आया, क्या तुमने मेरी मर्जको पैछान लिया ?

विश्वंभर-हां ठीक ठीक !

भोलानाथ-अच्छा तुम मेरे साथ मकान पर चलो !

विश्वंभर-बेशक चलिये ! मगर आप जानते हैं कि, मैं परदेशी हूं, न आप मुझे जाने और न मैं आपको ! और फिर उमर भी मेरी आपको लडकपन की नजर आती है इस लिये मेरी बातपर आपको परतीत आना भी मुशकिल है, मगर इतना तो मैं दावेके साथ कहता हूं कि, आपने इस बिमारीके इलाजमें सैकड़ोंहीं रुपये खो दिये होंगे ! लेकिन मैंने तो आपसे न कुछ लेना है और नाही मुझे किसी चीजका लोभ है ! अगर मेरी बात पर यकीन हो तो बिना कौड़ी खरचके मैं एक वृक्षकी पांच चीजें बतलाता हूं उसका आप सेवन करें ! अगर न आराम होगा तो आपका कुछ बिगाड भी न होगा ! आराम होने पर जो आपकी मरजीमें आवे सो गरीब

गुरवोंको बांट देना ! इतने परभी कदाचित् आपको नुकशान हो तो मैं हाजिर हूं ! राज ब्रिटिश सरकारका है ! (यह कहकर लालाजी "विश्वंभर" का हाथ पकड़ कर अपने मकान पर लेगये और खातिर करने लगे ! "विश्वंभर" ने कहा कि—जबतक आपको मेरी दवाईसे आराम न हो वहांतक मैं आपके घरका पानी पीना भी पाप समझता हूं ! आखिर अगले रोज सुबह बाहर जाकर "विश्वंभर" ने एक वृक्षकी पांचोंही चीजें ले उनको पीस पासके लालाजीसे कहा कि, लो इस दवाईका एक भाग फलां चीजके साथ खा जाओ ! लालाजी भी बहुत अच्छा कह कर उसी तरह बेधड़क हो खा गये ! एक दिन, दो दिन, तीन दिन, चौथे दिन तो लालाजी लगे "विश्वंभरनाथ" की तलाशमें फिरने कि, यह दवाई क्या बतागया ? न जाने कोई बिजली ही रगड़कर दे गया !

इधर "विश्वंभरनाथ" को कोतवाल साहबने अपने मित्र सुप्रीन्टेन्डेन्टसे उसी दिनही मिला दिया और उन्होंने भी अपने साथ लेजानेके लिये मंजूर कर लिया मगर उन्होंने कहा कि, हम एक महीने के बाद यहांसे जायेंगे वहांतक तुम हमारे यहां रहो और आनंदसे रोटी खाओ ! लेकिन तनखाह वगैरह वहां चलकर मुकर्रर किये बाद (जब दफतरमें तुमको रख लेंगे तबसे) मिलेगी. तब कोतवालने उनसे कहा

कि, आपने कौनसी अपने घरसे तनख्वाह देनी है ? इस लिये जरा ख्याल रखना ! बाबू साहब बोले कि, आप जानते ही हो, महकमा जंगलातका है ! इसमें आमदनी ऊपरकी ज्यादा है, तोभी इसको आठ रुपये महीनेकी जगह दे दूंगा ! रहा रोटी कपड़ा सो मेरे यहां आगे छै आदमी हैं उनके साथ यह सातवांभी सही !

कोतवाल– (विश्वंभरसे) ले भाई ! तेरी तकदीर बड़ी जबरदस्त निकली जो आठ रुपये महीना और रोटी कपडा साथ ! इससे परे और क्या चाहिये ? देख पुलिसके सिपाही सुके छ सात रुपयेमें गुजारा करते हैं ! अब इनके पाससे कहीं मत जाना ! आप पांचसौ रुपये महीना पाते हैं ! आप बड़े नेक और साफदिल आदमी हैं ! आपका नाम बाबु बद्री नाथजी है !

बाबूबद्रीनाथ– (विश्वंभरसे) अगर तुम मेरे लड़कोंको हिन्दी लिखना पढ़ना सिखाया करोगे और घरमें अपने "स्वामीजी" के बनाये हुए बहुतसे पुस्तक हैं वो सुनाया करोगे और आर्य धर्म अंगीकार कर लोगे तो मैं तुमको बिलकुल ही दफतरके कामसे फुरसत दे दूंगा !

विश्वंभर– (अपने मनही मन) इससे परे और क्या चाहिये ? (प्रगट) आपकी मेहरबानी चाहिये ! (उस वक्तसे "विश्वंभर" बाबूजीके यहां रहने लगा, इतनेमें वह मरीज–लाला भोलानाथजी "विश्वंभर" को पूछते

पूछते बाबूजीके मकान पर आकर बैठकमें बैठे हुए बाबूजीसे)

भोलानाथ– बाबुजी साहब ! आपके यहां कोई परदेशी लडका आया है वो कहां है ?

बाबूबद्रीनाथ–क्यों तुमको उससे क्या काम है ?

भोलानाथ–अजी साहब ! काम क्या है ? वह तो मेरे लिये परमेश्वरका अवतार है ! जनाब ! मैं छै सात सालसे इस बिमारीसे लाचार था ! सैकड़ों रुपये खर्च कर-डाले, सैकड़ों दवायें कर डाली, मगर मुझे कुछभी फा-यदा न हुआ ! इसने बिना कौड़ी पैसेकी दवाई न जाने क्या कोई पत्तेसे पिस पास कर दिये कि, आज पांच रोजमें ही मुझे फायदा होगया ! लालाजीकी यह बात सुन बाबूजीने " विश्वंभर " को अंदरसे बुलाया.)

विश्वंभर– (लालाजीको देखकर) कहो लालाजी ! क्या हाल है ?

लालाजी– (एकदम उठ कर) साहब ! आपकी मेहर-बानी गरीबपर होगई ! आपने मुझपर जो उपकार किया है उसके बदलेमें अगर मैं आपको अपना सर्वस्व भी दे दूं तो थोड़ा है !

विश्वंभर–भाई ! इसमें मैंने कुछ क्या किया है, करने वाला तो गुरु है !

लालाजी-आप मेरे मकान पर चलो !

विश्वंभर-आपको दवाईसे काम है कि, मुझे अपने मकान पर ले चलनेसे ?

लालाजी- साहब ! दोनों ही से !

विश्वंभर-आप शामको दवाई ले जाना, मकान पर आनेका भी मौका मिल जायगा तो आ जाऊंगा ! (इतना कहकर " विश्वंभर " बाबूसे पूछकर पहलेकी तरह उसे दवाई लाकर जब वो शामको आये तो उन्हें देकर कहा कि, इसकी चौदां खुराक कर लेना बादमें देखना क्या बनता है ! बस ! लालाजीकी बिमारीका तो उन चौदां पुडियोंसे जड़ामूलसे नाश होगया !)

लालाजी- (आराम हो जानेपर ७५ रुपये लेकर "विश्वंभर" को देनेके लिये बाबूजीके मकान पर आये और " विश्वंभर " के आगे रुपया रखकर) मैं आपको कुछ देने लायक तो नहीं हूं तो भी मेरी यह अदना भेट मंजूर कीजियेगा !

विश्वंभर- लालाजी ! यह रुपया मेरे लिये हराम है. मैंने तो तुमसे पहलेही कह दिया था. सो लेजाओ और लूले लगड़े, अंधे, अपाहज गरीबोंको सबका अनाज और कपड़े लेकर बांट दो !

लालाजी-आपने मुझपर जो उपकार किया है उसका बदला मैं नहीं दे सकता !

विश्वंभर– भाई ! मैं किसी पर क्या उपकार करने लायक हूं ! यह तो मनुष्य मात्रका धर्म है कि, वह अपनी शक्तिके मुताविक प्राणी मात्रके दुःखको दूर करनेका यत्न करें ! इसमें मैंने कौनसी बहादुरी की ? यह मेरा फरज था सो मैंने अदा किया ! मैं यहांसे बाबूजीके साथ जाने वाला हूं, अगर हो सके तो कभी एक पैसेके कार्डसे मुझे याद कर लेना !

लालाजी–(उठकर) अजी यह क्या कहा ? क्या अब आप मुझे सारी उमर भूल सकते हैं ? आप जहां होंगे वहां आकर आपसे मिलूंगा.

(विश्वंभरके इन उदार विचारोंको देख कर बाबू " बद्रीनाथ " की " विश्वंभर " पर औरभी प्रीति बढ़ गई ! कुछ दिनोंके बादही वे " विश्वंभर " को अपने साथ काश्मीर ले गये, वहां पहुंचतेही " विश्वंभर " जंगल पहाड़ोंमे फिर कर मंगल मनाने लगा ! बहुतसे ठेकेदारोंसे जान पहचान होगई, लकडीके लीलाममें उन लोगोंसे " विश्वंभर " को अच्छा नफ्फा मिलने लगा ! यह forest का महकमा बड़ा जंगी था, इसमें हजारों आदमी नौकर थे, सरकारको १५–१६ लाख रुपए सालकी पैदाश होती थी, लकडेके अलावा शहत वगैरह औरभी चीजें बहुत होती थीं. नौकर लोगोंका ऊपरकी पैदाशके कारण थोडी तनख्वाहसेभी अच्छा गुजारा होता था ! रुपयेका बीस सेर पक्का दूध, दो सेर पक्का घी, अच्छेसे

अच्छा आस पासके गामोंमें मिलता था" विश्वंभर " को वहांकी आवोहवा और बावूजीकी मेहरवानीसे डेढ़ साल खवरभी न पड़ी ! बाबू " बद्रीनाथ " साहवने पहलेसे ही विचार लिया था कि, अगर मैं " विश्वंभर " को महीनेके महीने तनख्वाह दे दूंगा तो यह यूंही खा उड़ा डालेगा ! इस लिये हर महीनेकी तनख्वाह इसके नाम पर वंकमें जमा करा देते थे ! और इसको कह दियाथा कि, देख ! यह तेरा रुपया जमा है, तुझे रोटी कपड़ेका तो खर्च हैही नहीं ! ऊपरकी आमदनीके लिये मैं तुझे खाने खर्चनेकी रजा देता हूं, मगर फिजूल खरचीसे मुझे वड़ी चिढ़ है ! इस लिये ख्याल रखना एकदमभी आजाद मत हो जाना ! और वंक मास्टरकोभी मना कर दिया कि, यह रुपया जमा कराने आवे तो जमा तो कर लेना, मगर मेरी इजाजतके विना एक पाईभी मत देना ! ये कितनाही कहे, पासवुक पर दसकत करलावे तोभी मुझे पूछे विना न देना ! लेकिन होनहार एक दिन एक रसायनी (कपटी) वावाजी " विश्वंभर " को मिलगये ! किसीसे " विश्वंभर " का कुल हाल जानकर एक दिन—)

वावाजी– (विश्वंभरसे) वच्चा ! मैं तुझे ऐसी बुटी वताऊं कि, उससे सोना वनाना जानजायगा, मगर मुझे पचानवे (९५) रुपयेकी जरूरत है !

विश्वंभर– (वावाके विश्वासमें आकर वावू " वद्रीनाथ " से) साहव ! मुझे पास वुक देदीजिये !

बाबूजी–पास बुक नहीं मिलेगी ! तुझे खरचनेको दो चार रुपये चाहिये तो मुझसे लेजा !

विश्वंभर– (जिद करके) मुझे दो चारकी जरूरत नहीं है ९५ रुपये चाहिये !

बाबूजी– मैंने सुना है कि, तूं एक बाबाजीके पास आता जाता है ! सो किसीके सिखे सिखायेमें आकर नाहक क्यों रुपये खोना चाहता है ?

विश्वंभर–जनाव ! मुझे आप पासवुक दे दीजिये गा ! रुपया मेरा है, जी चाहे सो करूंगा (बाबूजीने बहुत समझाया मगर भावीको कौन टाल सकता है ? पास बुक लेकर बंकसे ९५ रुपये ले आया और बाबाजीके आगे आकर रख दिये ! बाबाजीने कितनी एक बातें हाथ चालाकीकी दिखलाई और बतलाई, मगर रसायनको बतलानेके लिये बोले कि, कलको मेरे साथ चलना ! "विश्वंभर" को विश्वास होगया था कि, यह ठीक कुछ जानते हैं और मुझे सिखा भी देंगे इस लिये शामको घर आया तो)

बाबूजी– क्यों ! सीख आया ? हमको तो बता !

विश्वंभर-सीखलूंगा ! तब आपकोभी बता दूंगा !

(अगले रोज जब "विश्वंभर" वहां गया और देखे तो बाबाजी पत्राही बांच गये ! बहुत कुछ तलाश

की, मगर पता न लगा ! बावाकी इस ठग वाजीको देखकर " विश्वंभर " ने विचारा कि, और तो कुछ नहीं, मगर लोग चिढ़ावेंगे कि, ले ! और सीख ले रसायन ! ! यह विचार कर दो दिन तक वाहर ही रहा ! तब वाबूजीको फिकर हुआ कि, कहां चलागया ? उन्होंने पुलिसके एक अपने मित्र से कुल वात कही, तब दो आदमीयोंने फिरकर " विश्वंभर " का पता निकाल उसे साथ लाकर वावूजीके सामने खड़ा कर दिया ! उस वक्त " विश्वंभर " नीची गर्दन करके रोने लगा ! तब धमकानेके वदले प्यार दे कर)

वाबूजी—अरे ! वाहरे वाह ! उदास क्यों होता है ? तुनेही कमाये थे तूंनेही देदिये ! चिन्ता क्यों करता है ? चुपकर ! जा अंदर ! आगेके लिये नसीहत समझना !

(मगर " विश्वंभर " को लोगोंने चिढ़ाना न छोड़ा दश पंदरां दिनके वाद सब वात भूल भुला गई ! पहलेकी तरह " विश्वंभर " आनंदमें रहने लगा ! वावूजीका ख्याल तो पक्का आर्य धर्म पर था, लेकिन उनकी स्त्री वैश्नव धर्म पालती थी ! यह दूसरे व्याहकी थी. इंगलिश और गुरमुखी पढ़ी हुई थी, इनका स्वभाव वड़ाही कतुहली और हँस मुखा था ! ये दान पुण्यभी अच्छा किया करती थी, मगर वावूजीसे छिपकर ! इनके दो लड़के थे "विश्वंभर" को भी अपना तीसरा पुत्रही समझती थी ! जब कभी वाबूजी फुरसतके वक्त " विश्वंभर " से

" स्वामीजी " के बनाये हुए " सत्यार्थ प्रकाश " आदि ग्रंथ सुना करते थे उस वक्त आपभी पासमें बैठ जाया करती थीं, मगर पीछेसे " स्वामीजी " को बड़ी गालियां निकाला करती थी कि, " स्वामीजी " ने सनातन धर्मसे जुदाही क्या यह विचित्र पंथ निकाला है ? हांसी हांसीमें बावूजीको भी ताने दिया करती थी कि, अगर आप पूरे पूरे " स्वामीजी " के भगत हो तो तुम्हारी फलानी फलानी जवान रांड होकर बैठी है उसको दूसरा खसम क्यों नहीं करा देते ?

" विश्वंभर " के अंदर बावूजीके कहनेका असर न होनेका कारण आपही थीं ! क्यों कि, बावूजीके पीछे " विश्वंभर " को यही कहा करतीं थीं. कि, आर्य धर्म (जो " स्वामीजी " ने निकाला है) बिलकुल वाहियात और नयाही है. सिर्फ जो जरा अंगरेजी पढ़े लिखे लोग हैं (और वहभी जिन्हें बचपनमें धर्मकी शिक्षा नहीं मिली) उनको मंदिरोंमें जाना, प्रभु परमात्माकी पूजा भक्ति, दान पुण्य करना अच्छा नहीं लगता, इस लिये सनातन धर्म छोड " स्वामीजी " को रोते फिरते हैं ! क्या करूं ? मुझे बड़ी चिढ़ आती है ! जिस वक्त तूं " सत्यार्थ प्रकाश " सुनाने बैठता है. तूं सिर्फ उन (बावूजी) की हां में हां मिलाए जाया कर और कुछ नहीं ! मैंने अपने भाईसे सुना है कि " स्वामीजी " पहले शैव धर्मको मानने वाले थे और " शिव भजन "

नाम था, सोलां वर्षकी उमर तक तो वे स्त्री का वेश पहन कर नाचते रहे, देखनेमें बडे खूबसूरत थे ! इस लिये एक चौवीस वर्षकी उमर वाला राजपूत इनपर मस्तथा ! अगर तुझे इस वातका निर्णय करना हो तो मेरे भाईको पत्र देकर " दयानन्द छल कपट दर्पण " मंगाकर देख ले, उससे मेरी कही ऊपरकी वात प्रगट हो जायगी ! और " दयानन्द सुमाने उमरी " से यहभी प्रगट होता है कि, उनके मा वाप तवला सारंगी वजाते थे ! और आर्य समाजमें न धोवीका परहेज ! न मुसलमानका, न तेलीका, न तंवोलीका, न कहारका, न कोलीका !

विश्वंभर–अजी जाने भी दो, कभी मुसलमानभी हिन्दु हो सकता है ? आपभी तो क्या वात करती हो ? यह तो आपका कहना झूठा है !

वहूजी–तुझे मेरे कहनेका इतवार नहीं आता तो अपने वावूजीको पूछ देखना ! मगर तरकीवसे पूछना, यूं कहना कि, साहव ! अपने आर्य समाजमें " धर्मपाल " जातका मुसलमान है, उसका पहले क्या नाम था ? तो झट वता देवेंगे !

अरे तुं तो भोला है ! मैं क्या कहूं ? " स्वामीजी " ने जैसा जैसा उपदेश दिया और पोथों थोथोंमें लिख गये हैं, वह तेरेको कहूं तो तूं झट वावूजीको कहदेगा ! जिस वक्त शामको तुं उनको सुनानेके लिये वैठता है, उस वक्त मेरे जिमें ऐसी आती है कि, इसके हाथसे यह

निकम्मी पोथी लेकर फेंक दूं ! अगर तूं मेरे भाईके पास एक महीना भी रह आवे तो तेरेको इन नये आर्य और इनके गुरुकी सब पोल अच्छी तरहसे मालूम हो जावे !

इनके स्वामी दयानन्दने हर एक मजहब (धर्म) वालोंकी निन्दाकी है " दयानन्द " कृत जितने ग्रंथ हैं उन सबमेंही जन्मसे जातिको नहीं मानी, बाबाजीने तो गुण कर्मोंसेही जातिकी नीव डाली है, जब घरमें थे तब तो घरोंसे आटा मांग मांग कर लाते और खाते थे, जब घरसे बाहर निकले तो वही दोष वैश्नव संमदाय वालोंपर लगाने लगे ! इतनाही नहीं ! बलकि, उनको कंजर, चंडाल, भंगी, मुसलमान कहनेसे भी जरा संकोच नहीं किया ! सच पूछे तो " बाबाजी " बिल-कुल लाल बुझक्कडही थे !

जैसे कि एक दिन गधीको देखकर चेलोंने सवाल किया कि, गुरुजी ! यह कौनसा जानवर है ? तो बुझक्-डजीने जवाब दिया कि—

" बूझे बुझे लाल बुझक्कड, और न बुझे कोय ।
निराकारकी है ये लड़की, अथवा जोरू होय ॥ "

यह सुनके चेलोंने धन्यवाद दिया ! यही हाल दया-नंदियोंका समझना—जो गुरुजीने कहा उसीको हांजी हां करते हैं, मगर यह नहीं बिचारते कि, इसमें हमको नफा होगा या नुकसान ?

इस तरह " विश्वंभर " के अंदर बाबूजीके बिठलाये हुए समाजी ख्यालको वे झट उखाड दिया करती थीं, वे अपने लड़कोंको भी इसी प्रकारका उपदेश दिया करतीथीं, जिससे आगेको उनपर " दयानन्द " के उपदेशका असर न हो ! इस प्रकार " विश्वंभर " को बाबूजीके यहां डेढ साल हुआ कि, उसकी एक "थिएटरलीकल कंपनी " के प्रोफेसर और चीफ ऍक्टरके साथ मित्रता होगई ! " तुखम तासीर सोवत असर " कईएक कारणोंके मिलनेसे बाबूजीके यहांसे "विश्वंभर" का चित्त उखड गया. बाबूजीके लड़कोंका "विश्वंभर" पर सगे भाईसेभी बढ़कर प्रेम होगया था, यहां तक कि, १५-१५-२०-२० दिन तक " विश्वंभर " के साथ लाहौर रहजाते, मगर इसके वगैर अपनी मांके पास रहना दो दिनभी भारे हो पड़ता था. जब "विश्वंभर" नौकरीसे इस्तीफा देने लगा, लड़के बहुत रोए. बलकि, फिकरके मारे छोटे लडकेको बुखार होगया. तबतो बाबूजीकी स्त्रीने " विश्वंभर " से कहा कि, तुं किसकी सिखावतमें आकर ऐसा करता है ? तुझे यहां क्या तकलिफ है ? तू ऐसा मत कर! क्या इन बच्चोंका तरस नहीं आता ? बहुत कुछ समझाया मगर " विश्वंभर " ने एक न मानी, तब फिर उन्होंने कहा कि, अगर तुंने जरूरही इस्तीफा देना है तो भले तेरी खुशी, हमारा कुछ जोर नहीं है, मगर जबतक इस छोटे लडकेकी

तबीयत अच्छी न होले तब तक तुं ठहर ! "विश्वंभर" का दिल अगरच बिलकुलही उखड गया था, ताहमभी इस बातको उसने मंजूर किया, और दो महींने औरभी वहांपर गुजारे, लेकिन कंपनीमें आना जाना ज्यादा हो गया, प्रोफेसरकी वजहसे वहांके दीवान साहबके पुत्र रत्नके साथ इसका मेल हो गया, आखिर नौकरीसे बिलकुल ला परवाह होकर एकदम सुचालको छोड कुचालकाही पकडना " विश्वंभर " की बुद्धिने मंजूर किया! बाबूजीका कुछ थोडा बहुत भय था वहभी निकलगया !

यहां पर वाचक वृन्दको ख्याल रखनेकी जरूरत है कि, जो नेक चलन, इज्जतदार आबरूवाले अमीर लोगोंकी लिखी पढी हुइभी संतान बद चलन होकर अपने मां बापकी इज्जतको धब्बा लगा देती है, उसके कारणोंमेंसे मुख्य कारण यह है कि,—

(१) अपनी संतानको बचपनसेही स्वच्छंदता देनी !

(२) जिस उस्ताद–मास्टरका दबाव लड़के पर न पड़े उसके पास पढ़ाना !

(३) नौवेल–नाटक या अन्य इश्किया किताबोंके पढ़नेसे न हटाना.

(४) नाटक या वाहियात तमाशोंमें जानेसे न रोकना.

(५) सबसे बडा सबब यह है कि, संतानके बालग होने पहले उसकी सोहबतका पूरा पूरा ख्याल न रखना। प्रायः

आजकल अमीर लोग अपने लड़कोंको नौकरोंके भरोसे छोड देते हैं, नौकर भी कैसे ? कोई कहार, कोई नाई, अनपढ़, मूर्ख, वे अकल, निर्दयी ! अब विचारना चाहिये कि, कोमल दिलके बच्चे, जैसा उस नौकरको करते देखेंगे वैसाही करनेको तयार हो जायेगें ! इस लिये जिनको अपनी संतान प्रिय होवे, वो अपने बच्चोंको हरगिजभी आजादी न देवे ! " विश्वंभर " दीवानसाहबके पुत्र रत्नके साथ लग कर एकदम अधर्मके मारगमें सवार होगया, लेकिन " विश्वंभरनाथ " का पूर्व संचित पुण्य आ सहाई हुआ, वरना उसे दुर्गतिके द्वारपर पहुंचनेमें कुछभी संदेह न था ! क्योंकि इस समय "विश्वंभर" को अपने घरसे निकलनेका कारण भूल गया था ! जिस हृदय भेदक घटनासे आघात पहुंचा था वह आज सर्वथा नष्ट प्राय हो गया ! मानों मुझे जन्मसे लेकर आजतक कोई दुःख पडाही नहीं ! जो " विश्वंभर " किसी आदमीको बंदूक लिये अनाथ जीवों पर हाथ उठाते देखता तो क्रोधमें आकर उन्हें गालियां देता और उनसे लडाई लेता था, वह, आज स्वयंही बंदूक ले विचारे अनाथ प्राणियोंके प्राण लेने लगा ! मानो इसमें कुछ पापही नहीं ! कुसंगतके कारण इस प्रकार हौसला खुलगया कि, न किसी का डर रहा, न भय ! पुलिसके कितनेही लोगोंके साथ मेलजोल होगया था, एकतो चढ़ती अवस्था, दूसरे अमीरोंके लडकोंका सिरपर हाथ, फिरतो कहना ही क्या ?

सबकी आंखाम रडकने लगा ! बाबू बद्रीनाथने देखा कि यह तो गया हाथसे ! उन्होंने पहले तो प्यारपूर्वक बहुत कुछ समझाया, लेकिन समझना तो क्या था ? उलटा बाबूजीसेही ऐंठने लगा ! तबतो बाबूजी भी सखती और हरएक तरहका करडापन दिखलाने लगे ! लेकिन इसकोभी ऐसी जिद चढ़गई कि, जान बूजकर हरएक काममें देरी करने लगा, और करना तोभी बिगाड़ कर रख देना ! कहां तो बाबूजीके घरका कुल प्राइवेट काम खुश होकर करता (क्यों कि बाबूजीने इसीके विश्वास पर कुल भार छोड दिया था, और ये भी महीनेके महीने घरका कुल खर्चेका हिसाब पाई पाई का ऐसा देता कि, जो इसके पहले नौकरोंकी अंधाधुंधी अच्छी तरह मालूम हो गई थी) कहां कहने परभी ध्यान न धरता ! इस तरह करते हुए भी बाबूजीने इसको अपने यहांसे (" विश्वंभर " के इस्तीफा मांगने परभी) जानेको इनकार किया !

एक दिन बाजारमें जाते हुए " विश्वंभर " ने एक दुकान पर दश बारां आदमीको इकठे हुए देखकर-

विश्वंभर- (एक आदमीसे) क्यों भाई ! यहां क्या जलसा (५) सबसे यह मकान क्यों सजाया जाता है ?

उसकी सेयोंके पजूसन आए हैं न !

विश्वंभर- (कुछ न समझ कर) भाई ! मैं पूछता हूं कि, यहां क्या जलसा है ?

आदमी-पजूसनोका जलसा, कहता तो हूं !

(" विश्वंभर " ने पजुसण शब्द ही कभी नहीं सुना था, समझता क्या ? आखर उन आदमियोंकी भीडमें मूं डालकर देखा तो एक कागजके गत्ते पर वे लोग हिन्दी अक्षरोंमें यह लिखा रहे है कि, " श्री आत्मा नन्द जैन सभा " " विश्वंभर " उस लिखने वालेके टेढे मेढे अक्षर वहुतही खराब राइटिङ्ग देखकर हंस कर वोला कि, क्या यह कीड़ मकौड़ेसे लिखे हैं ?

एक लालाजी- (खिजकर " विश्वंभर " से) ले तो, तूं ही इससे अच्छे लिख दिखा !

(यह लोग," विश्वंभर" को सुप्रीन्टेन्डेन्टके यहां नौकर है इतनाही जानते थे, यह किसीको खवर नथी कि, ये हिन्दी लिखा पढ़ा है. क्यों कि, पंजावमें हिन्दी पढ़ने लिखने वाले वहुत थोडे और उर्दू फारसीके पढ़ने लिखने वाले सैंकड़ों अगर हिन्दी पढे हुये मिलेंगेभी तो उनका राइटिङ्ग वस परमात्माकाही नाम ! " विश्वंभर " का राइटिङ्ग पर हाथ कावू था ! लालाजीसे एंठकर)

विश्वंभर-अच्छा ! यूं ! ठीक-तो तुम मुझे वतलावो कि, क्या लिखना है ? मैं शामको तुम्हे साइन वोर्ड वनाकर

लादूंगा ! फिर इसके साथ मिलाना ! (इतना कह कर जो बोर्डमें लिखना था वह समझ कर मकान पर आया और अपने पाससे ही बड़े मोटे ग्लेज कागजके गत्ते पर अपनी हाथ कारीगरीका नमुना बनाकर शामको लाला-जीके आगे रख दिया,)

लालाजी- (पट्टा देख कर) क्या यह तुमने बनाया है ?

विश्वंभर-मैंने बनाया, या किसीने बनाया, अब तुम यह बताओ कि, जिस पर तुमने कई आनेकी सुनेरी स्याही बिगाड़ कर रखदी, उस तखतेसे यह अच्छा है या बुरा ?

(लालाजी और उनके भाई " विश्वंभर " पर बड़े खुश हुए. फिरतो धीरे २ अच्छी जान पहचान होगई. लालाजीको " विश्वंभर " का बाबूजीके यहांसे नौकरी छोडनेका इरादा मालूम होगया. अब बाबूजीकी "विश्वं-भर " पर करड़ी नजर है तो भी बाबूजी एकदम अपने यहांसे जवाब नहीं देते ! इसका कारण यही था कि, बाबूजीको " विश्वंभर " का कोई कसूर-गुन्हा अबतक हाथमें न आया था,

बाबूजी अपने यहांसे ईसका जाना अच्छा न समझते थे, " विश्वंभर " का कंपनीके उस्तादसे अधिक परिचय हो गया था, क्यों कि, लालाजी उन्हीं उस्तादसे हार-मोनियम सीखा करते थे. " विश्वंभर " बाबूजीके यहां से किसी कामका बहाना निकाल जब दाव लगता तबी

कालाजीकी दुकान पर या उस्तादके मकान पर पहुंचता, आखर " विश्वंभर " की मनशा कंपनीमें नौकरी करनेकी हुई,, तब उस्तादने कंपनीके मालिक दीवान साहबके सामने करके कहा कि—हजूर ! इसकी मनशा कम्पनीमें नोकरी करनेकी है.

दीवान साहब— (उस्तादसे) भाई ! जिन बाबूजीके यहां यह रहता है, उनके यहांसे इसको यहां अधिक सुख न होगा ! मुझे अच्छी तरहसे मालूम है. (विश्वंभरसे) क्यों भाई ! उनके यहांसे तूं क्यों निकलता है ?

विश्वंभर—यह तो आप बाबूजीसेही पूछ देखियेगा !

दीवान साहब—तुं वही तो नहीं है.जो रसायनी बाबाकी हथफेरीमें आकर कितना सारा रुपया खो आया था ?

विश्वंभर—जी हां मैं वही हूं ! आपको कैसे मालूम हुआ ?

(पासमें बैठे हुए बहुतसे लोगोंमेंसे एक)

नाजिरजी—वाहरे वाह ! अखबारों तकमें तो छप चुकाथा ! सारे शहरमें यह बात फैल गईथी तो दीवान साहबको न मालूम हो ? यह कैसे तअज्जुबकी बात है !

दीवान साहब— (विश्वंभरसे) अच्छा अबभी कुछ पासमें है ? मैंने सुना है कि, तुं बड़ा उडाऊ है !

विश्वंभर— (हंसकर) हजूर ! अब है, सो, रसायन सीखनेके लिये नहीं है (उस वक्त बंकमें तो कुल २२ ही रह गये

थे, और चार महीनेकी तनख्वाह बाबूजीसे लेनी बाकी थी.)

दीवान साहब–अरे भाई ! तुं यहभी जानता है कि, कंपनीमें किन लोगोंका काम है ? कंपनीमें तो वही लोग रहते हैं जो शरम–हयाको उतार कर फैक देते हैं ! बस जिस दिन कंपनीमें भरती हुआ कि, उसी दिनसे यह समझ लेना कि, सिरपर तो इज्जत नदारद ! और मूं पर नाक नदारद ! अगर नकटा बननेका इरादा हो तो तेरी मरजी !

उस्ताद्– (दीवानजीसे हंस कर.) क्यों साहब क्या हम नकटे हैं ?

विश्वंभर– (उस्तादसे) अजी जनाब ! आपतो नकटे नहीं हो ! मगर कंपनी महाराजा साहबकी है और कंपनीके मालिक (दीवान साहबकी तरफ हाथ करके) आपही हैं ! (यह सुन मय दीवान साहबके जितने लोग बैठे थे सबही हंस पड़े)

दीवानजी– (विश्वंभरसे) धः × × × × × बेवकूफ ! क्या हम नकटे हैं ?

विश्वंभर– (हाथ जोड़ कर) किसकी कमबख्ती आई है जो आपको नकटा कहे !

दीवानजी– अच्छा तो तुं अब यह बोल कि तेरा आवाज कैसा है ?

विश्वंभर– जनाब मेरा आवाज तो गधे जैसा है !

(सब लोग हंस पड़े) अफसोस ! मुझे अपनी चिन्ता लगरही है, आप लोगोंको हंसना सुझता है !

उस्ताद– (दीवानजीके आगे विश्वंभरका लिखा हुआ एक निबंध रख कर) हजूर ! इसका राइटिङ्ग तो देखिये !

दीवानजी– (लेख देखकर) क्या यह इसीका राइटिङ्ग है ?

विश्वंभर–नहीं हजूर ! किसीसे लिखा कर लाया हूं ! क्यों कि, यह तो मैं अच्छी तहरसे जानता था कि, दीवान साहबके दरबारमें इतनी अकल किसीकोभी नहीं है जो यह कहेगा कि, ले भाई ! हमारे सामने बैठ कर तो लिखदिखा ! हां अब अगर मेरे याद दिलानेसे कोई कह बैठे तो, तअज्जुब नहीं !

एक मुन्शीजी–अच्छा भाई ! यह ले कलम, और दवात, दीवान साहबके सामने बैठ कर लिख !

विश्वंभर–(दीवान साहबसे) देखिये साहब निकली न वही बात ! (यह सुन सब हंस पडे ! दीवानजीने मुन्शीजी को बडा शरमिन्दा किया कि, मुन्शीजी ! आपकी अ-

कलको क्या हुआ ! जो उसके कहनेके विनाहीं समझे बोल उठे !)

दीवानजी– (एक पुस्तक विश्वंभरको दे कर) अच्छा ! इसको पढ़कर सुना ! देखें तेरा उच्चारण कैसा है ?

विश्वंभर– (पुस्तक खोल कर) हाय –हाय–हाय–हाय–नहीं विद्याको मिलता वर । फिरा घर घर । सभा बन कर । दया कर हे कृपा सागर । मैं हूं मुन्तजिर । हुआ अन्तर । हा० प्रतिज्ञा करके पछताया । बवज गम कुछ न हाथ आया। ये है ईश्वरको क्या भाया । जो संकट मुझपे है लाया ।

(एक दम आठ दश सफे उलट कर) मारलो । मारलो । (पुस्तक हाथसे कालीन पर फेंक कर) क्या वाहियात पुस्तक है जो हाय हाय और मार मारसे ही भरी है !

दीवानजी– (हंसकर लोगोंसे) तलफफुज तो बड़ाही अच्छा है ! (" विश्वंभर " से) क्या उर्दूभी जानता है ?

विश्वंभर–नहीं साहब ! मैं उर्दू तो नहीं जानता, मगर मेरी मादरी जवानही उर्दू है, मैं सिक्स क्लास तक इंगलिश पढ़ा था, आज करीबन आठ साल हुए छोड़ेको सो भूल गया !

दीवानजी–क्या सबही भूल गया ?

विश्वंभर–जनाबमन् ! अगर सब पढ़ गया होता तो सबही भूल जाता ! मगर न तो मैं सब पढ़ा और नाहीं सब भूला ! याने जितना पढ़ा था उसमेंसे उतनाहीं भूल गया कि जितना भूलना लाजिम था !

दीवानजी–अबे हरबातमें हंसी ! (सब लोग हंसपड़े)

विश्वंभर–Soft words are hard arGuments. (मीठा बोलनाही विनीतता है.)

दीवानजी–अच्छा तो तुम पांच सालकी गेरेन्टी लिख दो कि, अगर इससे पहले नौकरी छोडुं तो जो कंपनीका कानून है उसके मुताबिक दंडका भागी हुं !

उस्ताद–(दीवानजीसे) हजूर ! यह कंपनीमें रहकर ऍक्टर बनना नहीं चाहता, लेकिन हमें एक ऐसे आदमीकी जरूरत है कि, जो लडकोंको पार्ट याद करा दे, या जो पढ़ेहुए लडकोंको उनका पार्ट लिख कर दे दिया करे; और ऍक्टरी तो यह करही नहीं सकता. अगर अपनी खुशीसे नकल वगैरहमें स्टेज पर आवे तो इसका अखतियार है !

दीवानजी–अच्छा तो जाओ ! कल ठीक काम हो जायगा !

(वहांसे उठकर बाहर आनेकी देर थी कि, “विश्वंभरनाथ” के मनका चक्कर फिर गया !)

विश्वंभर– (उस्तादसे) वस साहव ! भरपाया आपकी कं-
पनीकी नौकरीसे !

(इन दिनों " स्यालकोट " में वडे जोरसे प्लेग चल रहा था " विश्वंभर " वावूजीको विनाही पूछे वहां चला गया और तीन दीनमें अड़तीस ३८ रुपये कमा लाया ! याने दो पैसेका कच्चा सूत लेकर उसके एक एक वालिस्तके टुकडे करके उनमें सात सात गांठे लगा कर गली गली और वजार वजारमें यह आवाज देता हुआ फिरने लगा कि " यह फकीरका दिया हुआ ताऊन (प्लेग) का धागा एक पैसेको " " इसको हाथमें वांधनेसे प्लेग नहीं होता " " जिसे प्लेग हुआ हो वह भी राजी होता है ! " यह सुन लगे लोग खरीदने ! एक पैसा क्या वड़ी चीज है ? राजी होना न होना तो अपनी जिन्दगीके हाथ है, लेकिन एककी देखा देखी उस वक्त लोगोंने हाथो हाथ लेना शुरू कर दिया "विश्वंभर " ने इस धतिंगसे भोले भाले लोगोंको खूवही लूटा !

सच पूछो तो आज कलका जमाना ही ऐसा है कि, छल फरेव कपटसे हजारोंही आदमी कंगालसे अमीर होगये ! और होते जाते हैं. और जो सत्यवक्ता साफ नियत ईमान्दार हैं उनकी कोई वातभी नहीं पूछता ! और सुनता ! लेकिन " अंत भलेका भला" इसमें जरा भी शक नहीं है. वेशक ! अपने दिलमें कोई यह क्यों

न समझ लेवे कि, मैं जिसके साथ नेकी करता हूं, वह मेरे साथ वदी करता है ! इस लिये वदी करनाही अच्छा है ! सो यह समझ विलकुल ठीक नहीं. क्यों कि, अंतमें वदीका नतीजा वद, और नेकीका फल नेक ही है. " विश्वंभर को वचपनसेही फिरनेका और आजाद रहनेका यह एक फल था कि, कभी हिम्मत न हारता और दुःख आने पर भी दुःखको सुख मान अपनी किसमत पर सवार रहता था ! यह उसे भय न था कि, मैं लोगोंको ठगता हूं ! अगर पकडा जाऊंगा तो क्या हाल होगा ? क्यों कि, जव इस जमानेके लोगही गप्प, सप्प छुं, छां को पसंद करते हैं तो डरना किससे ? " मियांवीवी राजी तो क्या करेगा काजी ? " देखलो ! लोग जान वूझकर ही ठगाये जाते हैं तो ठगने वाला धोखेमें डालकर ठगे उसमें वतलाईये किसका दोप ? " विश्वंभर " को " ब्रह्मानन्द " ने वचपनसेही " गुरु घंटाल " का उपदेश दिया था ! इसमें " विश्वंभर " के वशकी वात न थी !

वाचकवृन्द " गुरु घंटाल " का नाम सुन कर विचारमें पड़े होंगे कि, यह कोई आदमी है ? या दानव ? नहीं ! यह " गुरु घंटाल " पंडित जनार्दन जोपी वी. ए. डिपटी कलेक्टर साहवकी लेखनीसे लिखा हुआ एक ग्रंथ है. जिसके कुछ अध्याय यहां पर उद्धृत किये देते हैं.

" गुरु घंटाल– " अध्याय ३

" बृहन्महोदर–बेटा ! अब समय बडाही कठिन आगया है देख भाल कर चलना चाहिये, हमारे शत्रुओंका दल बढता जाता है,

पिताजी हमारे शत्रु कौन हैं ? पहले हमारे शत्रु कौन हैं ? सूर्य महाराज !

यदि सूरज न होता तो सब समय अंधेराही रहता ! जहां चाहते वहां हाथ मारते, भोजनका क्या घाटा था? इस सूर्यने बडाही नाश लगाया। दूसरा शत्रु कौन है ? तेल– यह न होता तो २४ घंटेमें १२ घंटे तो हमारा राज्य होता ! रातको उजियाला न होने पाता !

अब और नये २ शत्रु पैदा होते जा रहे हैं. (वह कौन ?)जगह २ पाठशालायें खुली हैं ! लोगोंकी बुद्धि तेज होती जा रही हैं ! अब ऐसा काम करो जिससे भूखे न मरने पावो ! हमारा कुटुंब बडा है, खाने वाले बहुत हैं, कमाने वाले थोडेही हैं ! अब ऐसी युक्ति करो और लोगोंको ऐसी पट्टी पढाओ जिसमें इनकी बुद्धि ज्योंकी त्यों रहे ! उन्नति न करसके, ये उन्नति करेंगे तो हमारे दिन खोटे आये ! बेटा शास्त्रमें लिखा है–" विदुषां जीवनं मूर्खः " पंडितोंके जीवन अर्थात् जीवन मूर्खही हैं। मूर्ख न हों तो पंडित भूखे मरें ! जैसे रोगी न हों तो डाक्टर भूखे मरें !

अजगर प्रसाद-पिताजी! ऐसी पट्टी पढ़ा ना तो असंभव है!

बृहन्महामहोदर-चल उल्लूके बच्चे!

अजगर प्रसाद-तो आप उल्लू सिद्ध हुए!

बृहन्महामहोदर- (बडे प्रसन्न होकर) बेटा! तूं बडा बुद्धिमान है। तर्क शास्त्रमें निपुण है! अब मेरा मनोरथ अवश्य सिद्ध होगा! सुन बेटे!

अजगर प्रसाद-हां पिताजी!

बृहन्महामहोदर-सुन मेरी बुद्धिको। आज कल लोग नाहक मिडिल पास करते हैं बी. ए. एम्. ए. पास होते हैं पर पैसा पास नहीं। "आंख फोड ऐनक लगावैं। पैसा पास न जाने।" बेटा मैं तुझे पैसा पास करता हूं। तूं इन सबसे मजेमें रहेगा! चैन करेगा! मौज उडायेगा तुं धर्म फरोश बनजा। धर्मकी दुकान करले ईश्वरने चाहा तो तूं सबसे अच्छा रहेगा।

अजगर-सो कैसे?

बृहन्महामहोदर-सुन मेरे लाल मेरे आखोंके उजियारे आज कल सबही रोजगार बिगड गये हैं.

कुतब फरोश शिर सुखाये बैठे हैं-

परचून वालोंके घरोंकी दीवाल तक चुहोंने खोदकर ढादी है जब प्लेग फैलता है तब परचूनकी मंडी ही से फैलता है !

जूता फरोश दाढीमें हाथ दिये बैठे हैं जूतोंमें दीमक लग गई है ! फिरभी इन्कम् टैक्स वाले वहीकी जांच कर रहे हैं.

डाक्टर मक्खी मार रहे हैं !

वकील मनसुबोंके घोडे दौडा रहे हैं.

जिससे पांच मिलनेकी आशा करते हैं वह उल्टे ५० और उधार मांगता है समाचार पत्रोंके संपादक तडके उठकर नादे हिंद ग्राहकोंके नामकी माला फेर रहे हैं अच्छे २ लेखक पंसारियोंकी दुकानमें अपनी पुस्तकोंको दो आने सेर तुलवा रहे हैं क्यों कि मोल लेकर पुस्तक पढ देने वालोंका पता नहीं ! मिडिलचियोंको तो कोई पूछता भी नहीं बी. ए. एम्. ए. पास करके आंख फूटती है मगज सुखता है. फिर कोट पटलुन पहन कर पिल पिली साहब बन जाते हैं तीस चालीस रु० की नौकरी करते हैं पचास साठका खर्च रखते हैं पांचसौ छ सौ कर्ज करते हैं अब नौकरीमें क्या धरा है ? तीस चालीसके बाबूओंकी तो कुगत ! कहीं भूल हुई तो जुरमाना और मुअत्तिली

और मौकूफी और जेहलखाना ! और कुछ सुननेमें नहीं आता; एडीटर अलग प्राण सुखाते हैं भाई हमसे तो ऐसा हजार रु० के लिये भी न हो सकेगा आज कल जो चैन धर्म फरोशीमें है सो कहींभी नहीं इसमें सदा आदर है गरमा गरम पूरी कचौडी खाओ; मूछों पर ताव दो; सिंहजीकी दुकानका तर व ताजा मसालेदार हलुवा गायका ओटा हुआ दूध मीश्री मिलाहुआ छिकल निकालेहुये सफेद बादाम मलाई लच्छेदार रवडी नित्य विना दाम मिलती है ! अरे भाई मेरे मुंहमे तो कहतेही पानी आ जा रहा है ! फिर भेट अलग, रेल खर्चा अलग; बडे बडे मनुष्य पांव पूजते हैं; बडाही आनन्द है, चिन्ताका लेश मात्रभी नहीं;

अजगर–पिताजी यह नया रोजगार कबसे चला है ?

वृहन्महामहोदर–बेटा ! पहिले तपस्वियोंकी नकल करके ठगनेकी चाल थी, इसमें ठगोंको बडा दुःख होता था; फिर दानके मिससे ठगने लगे, पर देनेवाले ठगोंकेभी गुरु निकले; एक पैसेमें दान करै सारे कुटुम्बके नामलें और सबके " रोगं शोकं दुःखं दारिद्रं " एकही पैसेमें ठगके हवाले करदें; वंचक मिश्रजीको यह वहुत बुरा लगा, उन्होंने नव ग्रहोंकी पूजा चलाई, अब अंग्रेजोंने जगह जगह स्कूल वना दिये हैं और इन मंगल शनैश्वर

आदिके अक्ष (फोट्ट) के चित्र दिखला कर इनकी कलई खोल दी है ! और इनमें पृथ्वीहीके समान समुद्र पहाड व नदियां दिखला दिये हैं; लोग यहभी समझने लगे हैं कि जो होनहार बातहोगी ज्योतिषीको चार पैसे दे देनेसे कैसे टल सकेगी ?

वंचक मिश्रके परपोतेके परपोते लोभ मिश्र वडे नामी होगये हैं ! इन्हींके सालेके मौसेरे भाई पाखंडजीने यह धर्म फरोश पंथ चलाया है; पहिले जो दान लेने जाते थे दो घंटे बाहर खडे रहते थे ! कहारसे भीतर कहदो, कहार तो ऐसा मुंह बनाता था जाने कागजी नींबु चुसा है, पाखंडजीने यह ऐसा सुघड पंथ निकाला है कि जिससे पुराने दिन याद आते हैं जब पडोसमें किसीका दुशाला मांगकर ससुराल जाते थे, पनवाडीकी दुकानसे धेलेका पानका बीडा लेनेके मिससे उस दूकानके बडे आयनेमें अपनी सुरत देखकर आपही खुश होकर मुश-कुराने लगते थे, वालोंको संवार कर कानोंके पीछे करते थे, और टोपी तिरछी करते थे फर्क इतनाही है कि ससु-रालकी पहिले दिनकी पूरीयां मुंहमें गल जाती थीं; दूसरे दिन दांतोंसे कुछ २ काम लेना पडता था; तीसरे दिनकी पूरीयोंको देख कर मुलतानी जूतीकी तली याद आती थी और दांत दुखने लगते थे; पहिले दिन जब नरम और गरम पूरीयां मिली तो शरमके मारे खाई नहीं गईं। जब भूखके जोरने शरमको भगाया तो दांत

दुःखने वाली पुरीयां मिली । भाग्यकी बात है ! पर धर्मफरोशीमें भाग्यके बापका कुछ नहीं चलता, सहस्र रजनी चरित्रके बादशाहकी तरह नित्य नये २ सुसराल हें और वही नरम पूरीयां बराबर मिलती हैं, स्त्रीसे कुछ दिनों वियोग तो होता है पर घर आनेके दिन जब वह देखती है कि गालोंमें लाली है; और सामने पीली २ असरफियोंकी थाली है तो दोडकर संदुककी ताली ढूढने लगती है और वियोगकी बात नहीं करती । जो खाली घर जाय वही गाली-खाय !

तूं यह मत समझना कि, धर्म फरोशीमें तरक्की नही होती । जैसे नायब तहसीलदार तहसीलदार होकर भाग्यसे इप्टी डिप्टी बनजाते हैं ! ऐसेही उदर अध्यापक महोदर महामहोदर और वृहन्महामहोदर हो जाते हैं ।

अध्याय चौथा–

यह संसार माया रूप है इस लिये विना माया-फैलाये हुए संसारमें सफलता नहीं । " दुनियां लूटना मकरसे घी खाना सकरसे " योंभी कहते हैं कि–"विना फरेब यश नहीं. विना लाल मिर्च रस नहीं " फरेब और मक्र विना कोई सिद्ध नहीं । शास्त्रका वचन है "प्रियञ्च वानृतम्ब्रूयात्" मीठी बात कहो चाहे झूठी हो ।

अध्याय पांचवां-

हे वेटे ! इमान और धर्म मूर्खोंको डरानेके लिये है, घरसे जब चलो तो इनको ताकमें रख जाया करो, एक छोटी नोट बुक बना लो; उसमें केवल उन्ही परम मित्रोंका नाम लिखो, जो गांठके पूरे पर बुद्धिके हीन हों ! और लोगोंसे कोई प्रयोजन मत रखो, क्यों कि ये वृथा वकवाद करके कष्ट देते हैं, हिंदुस्तानमें वडे २ संमदाय हैं वे लोग आपसमें खूब लडते हैं ! इसका पूरा लाभ उठाओ । एक कहता है कि स्वर्ग हमारे वापका है, दूसरा कहता है नहीं हमारे नानाने महसूल चुका दिया है (रिजर्व किया है !) स्वर्ग क्या होगया, रेलगाडी होगई !- फिर आगे जाकर-अव बुद्धि इसीमें है कि अपनी विद्या और योग्यताका नीलाम कराओ कौन संप्रदाय सवसे अधिक देगा किस संप्रदायमें सवसे अधिक धनी हैं और किसमें वडे २ दाता हैं और कहां २ गांठके पूरे बुद्धिहीन हैं यह विचार करके संप्रदायोंको वदलते रहो और इनको आपसमें कनकओंकी तरह खूब लडाया करो ! यदि लोगोंका पूरा विश्वास न हो तों पुराने गुरुके नाममें थूक दो ! हम सिद्ध करदेंगे कि, इसमें कुछभी पाप नहीं !

अजगर-सो कैसे ?

वृहन्महामहोदर-सुन मूर्ख !-पहले गुरुका समास किया 'गू' और 'रू' भया । 'गू' अक्षर कहते थूकतेही वनता है । 'रू'

धातुसे रौरव बनता है रौरवके नाम पर थू कहना पडता है बस 'थू' और 'थू' अर्थात् थू थू सिद्ध होगया।

फिर आगे चलकर—लोग अकालसे पीडित हों तोभी तु खूब चंदा इकट्ठा किया कर कहीं कह कि अयोध्या और मथुरामें मंदिर बनेंगे क्यों कि इन जगहोंमें इतने मंदिर हैं और बनते जाते हैं कि तेरे मंदिरोंका किसीको पता न लगेगा। कहीं कहदे कि हमने पाठशालाये खुलवाई हैं दवाखाने अनाथ आलय खोले हैं और कुये खुदवाये हैं इनमें हजारों मनुष्य सहायता पाते हैं धन्य हम लोगोंके उद्योगको है कि आज तक इनमेंसे एकभी भूखसे न मरने पाया। दक्षिणमें चंदा करे तो वे अनाथ आलय उत्तरमें बतलादे पूरब जाय तो पश्चिममें बतला दे। इस बातको शपथ खाकर कह कि वहां कोई भूखा न मरा। क्यों कि कोई होता तो मरता वा न मरता। कल्पना किये हुए लोग जो सचमुच है हीं नहीं भूखे नहीं मरते। कहीं हों तो मेरे। लूट कर सर्व स्वाहा कर जा सारे मुल्कको चूसजा। हम लोगोंका इमान डूबना क्या कोई खेल है? शूद्र और चंडालका छोटा इमान होता है उनका डरना ठीक है। हमारा इमान बडा भारी होता है कुयेसे दश घडे पानी निकालो कुआ नहीं सूखता पर मटकेसे चार लोटा पानी ले लो तो मटका खाली हो जाता है।

अध्याय छठा.

बेटा भागवतमें लिखा है कि दत्तात्रयजीके २४ गुरु थे। मेरे ४०० गुरु हैं पर उनका वर्णन इस समय कहां करूं।

पहिला गुरु मेरा वगुला है। तपस्वी मुनिके समान नदी वा सरोवरके किनारे शांत वृत्तिसे यह तपस्या करताहै और हिलता नहीं है ज्योंहीं कोई जीव जंतु आया इसने चोंचमें धर दवाया फिर वही भेष तपस्वीका धारण कर लिया। ये बुद्धि मैंने वक पक्षीसे सीखी

दूसरा गुरु पतंगिया अर्थात् तितली है।

तीसरा गुरु रवडकी गेंद है इत्यादि—

अध्याय नौवां.

हे पुत्र संसार जीतनेके दोही अस्त्र हैं " हठ धरमी और वेशरमी " शास्त्र कहता है कि " एकां लज्जां परित्यज्य त्रैलोक्यविजयी भवेत्— " शरम छोडदो तीन लोक जीतलो बी. ए. वा एम. ए. पास करोतो आंखों का तेज कम होता है, धरम फरोशी करो तो शरम कम होती है अर्थात् नाकका तेज घटता है, आंखके तेज घटनेसे नाकहीका तेज घटना अच्छा ! बृहन्महामहोदरी दरजा मिलनेतक शरमका लेश मात्रभी नहीं रहता

" भई रांडनारी गई लाज सारी " हे बेटा कौन क्या कहेगा इस बातका ध्यान न करौ समयके अनुकुल काम करो । प्रतिकुल न करो-

अध्याय ग्यारवां

बेटा तुझे औरभी उपाय बतलाते हैं सिद्ध बीसा यंत्र और सिद्ध साबर यंत्रके विज्ञापन छपा और कह कि इससे मारण, उच्चाटन, वशीकरण आठ सिद्धि नव निद्धि मिलती है । दाम १॥) घर बैठे पौने दो १॥।) में मिलेगा.

काली चुडैलोंको गोरी और खूबसूरत होनेकी दवा ४॥) घर बैठे मिलेगी । औरभी उपाय तुझे लखपति होनेका बतलाते हैं ऐसे विज्ञापन छपवा कि मुझे एक योगीने सोमरस बतलाया है,

अथवा यह विज्ञापन छपवा कि मुझे अमृत मिलगया है इसके पीनेसे मरा मुरदा जी उठता है ।

अजगर-पिताजी कहीं पकडा न जाऊं !

वृहन्०-अरे मूर्ख पकडा जाना कोई खेल है ?

वेदमें अमृतका वर्णन है मैं पुराणोंसे और शास्त्रार्थसे अमृतका होना सिद्ध करदूंगा.

अजगर-पर मुरदेको कैसे जिलाओगे-

बृहन्०–जैसे चार पैसे पाकर ज्योतिषी अपने साम्यके द्वारा लड़कीको सौभाग्यवती करा देते हैं !. लडकेको रंडवा होने नहीं देते !

अजगर–पर वे स्वीकार करते हैं कि साम्यसे करमकी रेखा नहीं टल सक्ती (अपने घर विधवा हैं तो तो स्वीकार न करके कहां जायें) जिसके भाग्यमें विधवा होना है वह अवश्यही विधवा होगी जिसके भाग्यमें विधवा होना न हो वह साम्य करनेसे विधवा नहीं होने पाती !

बृहन्महामहोदर– बस हमारा अमृतभी ठीक ऐसाही है कालको तो ईश्वरभी नहीं टाल सकता । परन्तु जिसके भाग्यमें मर कर फिर जी उठना हो उसे अवश्यही बचा देता है यदि यह झूठ निकले तो हम बीस हजार रुपये दंडदें । इस अमृतको पिलानेसे जो मुरदा न जी उठा तो जान लो कि उसके भाग्यमें मर कर फिर जी उठना न होगा । और तु कहने लग जाना कि "दवा खिलाऊं अमृत पिलाऊं फिरभी मरजाय तो मैं क्या करूं । तेरे भाग्यमें मरकर जीना न हो ! देखो लक्ष्मण मरगया था पर उसके भाग्यमें मरकर जी उठना था इसी अमृतसे वह बचगया । देखो तो सही इसी अमृतसे लक्ष्मणका फिर जी उठना इसी अमृतसे तेरा न बचना ! हे मुरदे ! यह तेरे भाग्यकी खोट है ! तुझे मरकर जी उठनेका तमीज नहीं । मेरे अमृतका क्या दोष है । वे तभीजी

कूढ मगजीकी दवा ढूंढते २ धन्वन्तरी वद्य मरगये। लुकमान हकीम कबरमें सडगये। हमारा अमृत सच्चा है पर इस मुरदेके तमीजमें पथ्थर पडगये हैं इस " गुरुघंटाल " की हवासे " विश्वंभरनाथ " का दिमाग अच्छी तरहसे भरा हुआ था ! हाथकी कारीगरी पर कुछ अभिमानभी था ! स्याल कोटसे वापस आये बाद कुछ दिन बाबूजीके यहां रह कर अंतमें इस्तीफा देदिया, और लालाजीके पास एक मुन्शीजीके संसर्गसे " विश्वंभरनाथ " की " सुमतिचंद्र " और " ज्ञानचंद्र " के साथ प्रीति हो गई ! धर्म, अधर्म, पुण्य, पापको समझने लगा ! प्रभु परमात्माकी भक्तिमें अपने समयको व्यतीत करने लगा !

अब हम अपने "विमल विनोद " के नायक "विश्वंभरनाथ " को कुछ समयके लिये यहांही छोड़ते हैं, और उसके मित्र " सुमतिचंद्र " और " ज्ञानचंद्र " की " स्वामी दयानन्द सरस्वतीके उपदेश " का झंडा फरकाने वाले " मनीराम " के साथ, हुई बात चीतका फोटु प्रिय पाठकोंके मोदके लिए दिखाते हैं. क्यों कि, आज कल विचारे भोले भाले लोग जैसा किसीने कह दिया, उसेही ठीक समझ, मान लेते हैं ! जैसे कि, " स्वामी दयानंदके उपदेश " से " मनीराम " को धोखा लगा !

आप लोगोंको यह तो अच्छी तरहसे मालूम है कि, " स्वामीजी " के उपदेश रूप " सत्यार्थप्रकाश "

आदि ग्रंथोंकी सत्यता कितनी है वह प्रगट करनेके लिये जितने ग्रंथ निकल चुके हैं उनमें कुछ कसर नहीं रही ! तोभी " मनीराम " को, भूले हुए रास्तेसे सीधी सड़क पर लानेके लिये " सुमतिचंद्र " और " ज्ञानचंद्र " की आजकी मुलाकात अन्य पाठकोंकी अपेक्षा जैनोंको अधिक लाभ प्रद होगी.

माघका महीना, सायंकालके चार वज चुके; रविवारका दिन, "लाला मनीरामजी" वगलमें पोथी दवाये हुए एक वगीचेमें " स्वामी दयानन्दजीके उपदेश " की तरंगोंसे तंग हुए हुए इधरसे उधर फिर रहे हैं, इतनेमें

सुमतिचंद्र- (अपने मित्रसे) ज्ञानचंद्र ! क्या तुमने "मनीरामजी " को देखा है ?

ज्ञानचंद्र- अच्छी तरहसे वलकि कई दफा वात चीत भी हुई है. कुछ दिनोसे उन्होंने " स्वामी दयानन्दजीका उपदेश" लोगोंको सुना सुना कर शहरमें वड़ीही गड़वड़ मचा रखी है !

सुमतिचंद्र-चलो आज उनसे कुछ वातचीत करे ! (हाथसे वताकर) वो देखो सामने टहल रहे हैं !

ज्ञानचंद्र-ओ हो ! (नजदीक जाकर) लाला मनीरामजी साहव !

मनीराम- (देखकर) आइये ! आइये ! नमस्ते !

ज्ञानचंद्र–यह बगलमें पुस्तक क्या है ?

मनीराम– (बगलसे हाथमें लेकर) जनाव ! ये "सत्यार्थ-प्रकाश " है.

सुमतिचंद्र– (दोनों जनोंसे) आओ इस बेंच पर बैठो !

(सामने छायामें तीनो जने बैठ गये)

मनीराम– (सुमतिचंद्रसे) तुम्हारे मतकी तो पोल हमारे " स्वामीजी " ने खूब खोली !

सुमतिचंद्र– (हंस कर) बेशक ! हमारे मतकी तो क्या ? बलकि प्रायः कोईभी ऐसा मत बाकी नहीं छोड़ा जिसकी पोल न खोली हो ! मगर औरोंकी पोल खोलते खोलते अपनी पोल खुला बैठे ! यह बड़े खेदकी बात है !

मनीराम– (चमक कर) हैं ! क्या कहा ? उनकी क्या पोल खुली तुमने देखी ?

सुमतिचंद्र–अजी मनीरामजी ! तुम्हारे बाबाजीकी पोल तो फूटे ढोलकी तरह खुल गई है ! लो मैं इस बातकी मुनसफी तुम्हारेही सिर डालता हूं न्याय करना !

भला ! कोई आदमी अगलेके मंतव्यको विनाही समझे, विनाही उस मतके शास्त्रोंको देखे, अपने मनघड बनावटी प्रश्न पैदा कर, उसका खंडन करे, और भोले भाले लो-

गोंको धोखेमें डाले तो, उसको दूसरेकी पोल खोलने वाला कहोगे या अपनी पोल खुलवाने वाला ?

मनीराम–क्या हमारे " स्वामीजी " ने ऐसा किया है ?

सुमतिचंद्र– अभी तक तुम्हें मालूम ही नहीं ? तब तो बड़े आश्चर्यकी बात है ! लेकिन मुझे मालूम होता है कि, तुमको केवल " स्वामीजी " की इस पोथीके सिवाय और किसी मतकी खबर नहीं ! खबर होवेभी कहांसे ? विना हरएक मतके पुस्तक देखे, या सुनें ! लालाजी ! तुम को चाहिये कि पहले जिनके ग्रंथोंका आशय लेकर बाबाजीने जो जो बाते लिखी हैं वह उनके ग्रंथोंमें हैं या नहीं ? यह देखिये, फिर इस पोथीके साथ मिलाइये !

मनीराम–वाह ! तुमको क्या मालूम कि; मुझे इस पुस्तकके सिवा और किसी मतकी खबर नहीं ! मुझे तो इस बातका बडाही शौक है, अभी थोड़ा समय हुआ कि तुम्हारे मतकी नामांकित साधनी " पार्वतीजी " आईथी, मैं हमेशां उनके व्याख्यान सुनने जाता था. उनसे मैंने जैन मत संबधी पुस्तकोंके लिये पूछा था कि, मुझे जैनके सिद्धान्त जाननेकी बड़ी इच्छा है; तब उन्होंने मुझे कुछ भी संतोष कारक उत्तर न देकर इतनाही कहा कि, हमारे ग्रंथ प्राकृतमें है, और उन ग्रंथोंका हमारे साधु साधवीयोंके सिवाय किसीको अधिकार नहीं है. बतलाइए अब क्या किया जाय ?

सुमतिचंद्र– वाह साहब ! अभीतक तो तुमको जैन साधु-ओंकीही खबर नहीं है ! जनाब ! जिनको तुम जैन समझ रहे हो वह जैन नहीं ! वह तो अनुमान अढाइसौ वर्षसे निकला हुआ ढुंढिया मत है ! उनका तो जैनोंके साथ दिन रात, और जमीन आसमान जितना फरक है ! अगर तुमको इस मतकी हिस्ट्री खुलासा जाननेकी इच्छा हो तो जैनाचार्य आत्मारामजी का बनाया " सम्यक्त्व शल्योद्धार " ग्रंथको देखिये ! और साथ ही जैन मतके सैंकड़ो ग्रंथ प्राकृत संस्कृत तथा हिन्दी गुजराती और इंगलिशमें छप चुके हैं, और छप रहे हैं ! जी चाहे सो उन्हें खरीद सकता है, और पढ़ सकता है. अफसोस ! कि तुमने यह भी नहीं सोचा कि हमारे " स्वामीजी" तो लिखते हैं कि, मूर्तिपूजा जैनियोंसे निकली और यह " पार्वतीजी " मूर्तिपूजाके विरुद्धही गाना गाती हैं तो यह जैन तो नहीं !

मनीराम– (कानको हाथ लगाकर) बेशक ! यह बात तो मेरे ध्यानमें अब तुम्हारे कहनेसे आई ! प्राकृत तो पढा ही नहीं हूं, अगर जैनके हिन्दी भाषामें छपे हुए ग्रंथोंके नाम बतलाओ तो मैं मंगालूं. क्यों कि, मुझे इस बातकी बड़ी इच्छा है.

सुमतिचंद्र–खुशीसे लिखलीजीये अगर फकत बांचनेके लिये ही चाहिये तो मेरे मकान पर बहुतसे ग्रंथ मौजूद हैं ! जैनतत्वादर्श, अज्ञान तिमिरभास्कर, तत्वनिर्णय प्रासाद,

चिकागो प्रश्नोत्तर, जैन प्रश्नोत्तरावलि, जैन मतका स्वरूप, जैन मत वृक्ष, के देखनेसेही तुमको जैन मतके मंतव्यका पता लगजावेगा ! फिर आपको मालूम होगा कि, हमारे " बाबाजी " तो इनके बारेमें क्या लिखते हैं ! और ये क्या मानते हैं.

मनीराम–बहुत अच्छा ! अब मैं आजसे ही पूर्वोक्त ग्रंथोंका अवलोकन करूंगा; मगर तुम मुझे पहले यह कहो कि, हमारे " स्वामीजी " के साथ किसी जैन विद्वानका कभी मुकाबला भी हुआ था या नहीं ?

सुमतिचंद्र–अगर किसी जैनके साथ मुकाबला हो जाता फिर बातही क्या थी ? बाबाजीका सच्चा पता सबही मालूम हो जाता ! देश पंजाब शहर गुजरांवालेका रहने वाला लाला ठाकुरदास जैनी बाबाजीके साथ शास्त्रार्थ करनेको बंबई तक पीछे पीछे फिरा मगर बाबाजीने शास्त्रार्थ करनेके डरसे ऊपर ऊपरकी चिट्ठी पत्रीसे ही अपनी जान बचाई ! अगर तुमको इस बातका निर्णय करना हो तो " दयानंद मुखचपेटिका " देखलो !

मनीराम–खैर देखा जायगा ! मगर मुझको तुम यह बतलाओ कि " स्वामीजी " ने " सत्यार्थप्रकाश " में जैनियोंके लिये क्या झूठ लिखा है ?

सुमतिचंद्र–भाई साहब ! " सत्यार्थप्रकाश " में झूठ कितना है, वह,वही लोग जानते हैं कि जिन्होंने बाबाजीकी इस

थोथी पोथीको शुरूसे आखीरतक पढ़ा है ! मुझे यहां दावेके साथ कहना पडता है कि,

" उन्तालीस सेर बूरा—डेढपाव मिट्टी ढाईपाव कूडा—शेष आटाही आटा " वैसेही बाबाजीके "सत्यार्थप्रकाश" में काले काले जितने अक्षर हैं उतने असत्य, और सब सत्यही सत्य ! अब लो जो बातें बाबाजीने जैनियोंकी लिखी हैं वे बातें जैनियोंके मंतव्यसे कहीं नहीं मिलती ! मिले कहांसे ? अगर बाबाजीको झूठ लिखनेका डर होता तो सत्य सत्य लिखते ! सो सत्यके साथ तो बाबाजी जनमसेही वैर बांध कर आए थे.

भाई साहब ! बाबाजीने जब अपनेही धर्मके वेदोंका अर्थ उलट पुलट कर अपना नयाही मन घडत अर्थ बना दिया तो, जैनियोंके लिए विना जैनागमोंको देखे और विना उनके रहस्यको समझे अपना मन माना गाना गाया तो इसमें तअज्जुबही क्या ?

बाबाजीने तो यह समझ रखा था कि किसी तरह से अगले मतका खंडन हो जाना चाहिए चाहे झूठ क्यों न बोलना पड़े !

मनीराम—अजी जानेभी दो ! कभी सच्चेको बुरा और बुरेको सच्चा भी कोई कहता है ?

सुमतिचंद्र— (हंस कर) भाई ! तुम्हारे बाबा दयानन्दजी और उनके चेलोंके यहां तो सच्चेको बुरा और बुरेको

सच्चा, झूठको सत्य और सत्यको झूठ कहाही जाता है ! वरना " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ २९० में " जो जीव " ब्रह्मकी एकता जगत् मिथ्या शंकराचार्यका निज मत " था तो वह अच्छा मत नहीं और जो जैनियोंके " खंडनके लिए उस मतका स्वीकार कीया हो तो कुछ " अच्छा है " इत्यादि लिखा है कभी न लिखते ! हम नहीं जान सकते कि, बाबाजीकी आंखोंके आगे किस विलायतका बना हुआ पक्षपातका चस्मा लग रहा था जो वे ऐसा मानते है कि, दूसरेको झूठा ठहरानेके लिये अपनेको महा पाप क्यों न करना पड़े, तोभी पाप कर लेना ! मगर दूसरेको झूठा ठहरा देना ! बाबाजीका तो यह हाल था कि, दूसरेको अपशुकन करदेना ! चाहे अपना नाक कट जावे तो भी कुछ परवा नहीं ! इन्हीं बातोंसे बाबाजीकी विद्वत्ता प्रगट हो रही है !

देखो, मैं तुमको बाबाजीकी सत्यता और विद्वत्ताका नमुना दिखलाऊं (मनीरामके पास जो सन् १८८४ का सत्यार्थप्रकाश मौजूद था उसीके पृष्ठ ४४७ में निकाल कर)

"भुंक्ते न केवलं न स्त्री मोक्षमेति दिगंबरः ।
"प्राहुरेषा मयं भेदो महान् श्वेतांबरैः सह ॥ "

यह श्लोक लिख कर बाबाजीने जो भाषा की है उस पर जरा ख्याल कीजिए कि, इस साधारणसे श्लो-

कके अर्थ करनेमें जिस गुरुसे व्याकरण पढ़ा था उस गुरुका भी भान करादिया कि, वह भी पूरा २ वैया करणाचार्य ही था ! और बावाजी तो थे ही वैयाकरण! वरना ऐसा अर्थ कैसे करते? बावाजी पूर्वोक्त श्लोकका अर्थ लिखते हैं कि—

" दिगंबरोंका श्वेतांबरोंके साथ इतनाही भेद है कि
" दिगंबर लोग स्त्रीका संसर्ग नहीं करते और श्वेतांबर
" करते हैं इत्यादि बातोंसे मोक्षको प्राप्त होते हैं यह
" इनके साधुओंका भेद है "— अब आपही विचारो कि, अगर बावाजी इसका परमार्थ किसीसे जान लेते, और परभवका डर करके यथार्थ ठीक ठीक अर्थ लिख देते तो भोले भाले जीव हरगिज भी बावाजीके जालमें न फंसते! मगर बावाजीका तो पेशाही यह था कि, जो मनमें आवे सो लिख दो, कौन देखता और तहकीकात करता है ! वह तो अपने दिलमें यही समझते थे कि, मेरे लिखेको तो लोग ईश्वरका वचन समझेंगे !

मनीराम— (वड़े शोचमें पडकर कुछ देर बाद) अच्छा तो पूर्वोक्त श्लोकका यथार्थ अर्थ क्या है ? जिसका यथार्थ अर्थ और परमार्थ " स्वामीजी " ने नहीं पाया ! आपही कहिए !

सुमतिचंद्र—इसका अर्थ तो मैं आपको बतला देता हूं मगर श्वेतांबर और दिगंबरोंमें कितना फरक है यह देखनेकी

यदि आपकी इच्छा हो तो जैनाचार्य श्रीमद् विजयानंद सूरि (आत्मारामजी) कृत "तत्वनिर्णय प्रासाद" के तेतीसवें (३३) स्तंभको देखना, वहां विस्तार पूर्वक खुलासा किया हुआ है.

लो अब श्लोकका असली अर्थ सुनिये !

"भुंक्ते न केवली न स्त्री, मोक्षमेति दिगंबराः ।
"प्राहुरेषामयं भेदो, महान् श्वेतांबरैः सह ॥"

अर्थात्-[केवली] केवलज्ञानी-ब्रह्मज्ञानी [न] नहीं [भुंक्ते] भोजन करते [स्त्री] स्त्री-औरत [न] नहीं [मोक्षं] मुक्तिको [एति] प्राप्त होती, ऐसे [दिगंबराः] दिगंबर [प्राहुः] कहते हैं [एषां] इन-दिगंबरोंका [अयं] यह [महान्] मोटा [भेदः] भेद [श्वेतांबरैः सह] श्वेतांबरोंके साथ है.

मतलब कि जैन मतकी दो शाखाएं कही जाती है, एक श्वेतांबर और दूसरी दिगंबर. जिनमें श्वेतांबरका मंतव्य है कि, यदि स्त्री मुक्तिका साधन करलेवे तो सर्व कर्मका क्षय कर मोक्षको प्राप्त होती है. और दिगंबरोंका मंतव्य है कि, स्त्री चाहे कितनाही साधन करे परंतु मोक्षको नहीं प्राप्त होती ! इस भेदको दिखलानेके बदले बाबाजीने अपना जुदाही तोलड राग गाया है ! सो आप

स्वयंही विचार करलेवें-'स्त्रीसंसर्ग' यह अर्थ बाबाजी कहांसे लाए ?

मनीराम-वेशक यह अर्थ तो " स्वामीजी " ने विलकुलही झूठा लिखा है !

सुमतिचंद्र-अभी क्या ? आप जरा ठहरिये तो सही, मैं आपको बाबाजीकी सैंकड़ों नहीं बलकि हजारों ऐसी बातें बतलाऊंगा ! देखिए, बाबाजीके बारेमें एक महाशयजो क्या कहते हैं वहभी सुनिए—

[जीवनतत्व] अखबार-देव समाजने लाहौर १० सितंबर १९०५ में लिखा है कि—

" सवाल-वेशक मालूम होता है कि आर्यसमाजके स्वा-
" मी दयानंद स्वामीभी इसी किसमके गत प्रचारक थे ?
" जबाब-इसमें क्या शक है वेदोंके ईश्वर रचित बनाने
" के बारेमें उनकी कुल मन घड़त गप्पे और उनके
" मंत्रोंके अर्थोंका उलट फेर साफ तौरसे जाहिर करता
" है कि स्वामी साहिब मौसूफभी ऐसेही " महर्षि " थे
" कि जिनके ख्यालमें किसी मजहबके फैलानेके लिए
" झूठ और रियाकारीका हस्ब मौका इस्तेमाल न सिर्फ
" दुरुस्त और मुनासिब है बलकि बहुत काबले तारीफ
" भी है मतलब देखिए यही दयानंद साहिब शंकराचा-
" र्यके वेदांत मतका खंडन और जैनियोंके साथ उनके
" शास्त्रार्थका बयान करके अपनी किताब सत्यार्थप्रकाश

" तवे दोयमके २८७ सफा पर क्या कुछ तहरीर फर-
" माते हैं–अब इनमें विचार करना चाहिए कि अगर
" जीव और ब्रह्मकी एकता और जगतका झूठ मठ
" होना शंकराचार्यजीका सचमुच अपना अकीदा था
" तो वह अच्छा अकीदा नहीं है और अगर जैनियोंके
" खंडनके लिए उन्होंने उस अकीदाको इखतियार
" किया है तो कुछ अच्छा है—

" अब देखिए यहां पर स्वामी दयानंद साहिब अपने
" आपको अपने असल रंगरूपमें जाहिर करते हैं यानी
" वह कहते है कि अगर शंकराचार्यजीका जो उनके
" कौलके बमुजिब वैदिक मजहबके कायम करने वाले
" थे. जीव ब्रह्मकी एकता और जगतका मिथ्या यानी
" झूठ मूठ होना सिदक दिलसे अपना यकीन या अ-
" कीदा हो तबतो वह अच्छा नहीं लेकिन अगर उन्हों-
" ने झूठ मूठ और मक्कारीके साथ उसे इस लिये मान
" रखा था कि उसके जरिए जैनियोंको जो वेदोंको
" नहीं मानते खंडन किया जाय–तो कुछ अच्छा है–
" यानी वेदोंके नामसे अगर किसी मतके प्रचार करनेमें
" झूठ और मक्कारीसे काम लिया जावे तो ऐसा करना
" बुरा नहीं है–अब यह जाहिर है कि ऐसा सखस
" जो वेदोंके नामसे जरूरत समझने पर सब किसमकी
" फरजी कहानियां और वेदमंत्रोंके झूठ मायने तैयार
" करेगा उसमें किसीको क्या शक हो सक्ता है यही

" वायस है कि उनके वेद भाष्यको आर्यसमाजियोंके
" सिवाय कोई संस्कृत पंडित चाहे वह इस मुलकका
" हो और चाहे किसी और मुलकका ठीक नहीं
" मानता "

मनीराम– भाई ! यह " जीवनतत्व " का लेख तो सचमुचही " स्वामीजी " के अनुयायियोंको निरुत्तर करने वाला है.

सुमतिचंद्र– क्या आप " स्वामीजी " के अनुयायी नहीं ?

मनीराम–बेशक ! मैं उन्हींका अनुयायी हूं, लेकिन ....

सुमतिचंद्र–हां ! हां लेकिन–लेकिन क्या आगे कहिए रुकते क्यों हो ?

मनीराम– (हंसकर) कुछ नहीं ! क्या कहूं ? "स्वामीजी" स्वयंतो इस बातको कर गये और जाते हुए अपने चेलोंकोभी यही नसीहत दे गये !

सुमतिचंद्र– हैं हैं ! आपतो इतनीसी देरमेंही " स्वामीजी " के लेखका अनादर करने लगे ! समाजी लोग आपका नाम समाज पार्टीसे खारिज कर देंगे ! बचके रहना !

मनीराम–कुछ परवाह नहीं ! मैं सत्यका ग्राहक हूं ! मुझे यह बात पसंद नहीं है कि " मेरा सो सच्चा " मुझे तो यह पसंद है कि " सच्चा सो मेरा "

सुमतिचंद्र-हां ! ओ हो ! तब तो आपको सत्यशोधक कहना चाहिए !

देखिए आपके बाबाजी सन् १८८४ के सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ २८२ में लिखते हैं कि-" जो मनुष्य झूठ " चलाना चाहता है वह सत्यकी निन्दा अवश्य करता " है " इससे यह सिद्ध होगया कि, बाबाजीने अपना झूठ चलानेके लिएही सत्यकी निन्दाकी है ! वरना क्यों करते ?

इसमें बिलकुल शक नहीं कि, बाबाजीने अपना झूठ प्रचलित करनेके लिएही सत्य धर्म वालोंकी निन्दाकी है ! वरना निन्दा करनेकी जरूरतही क्या थी ? क्यों कि, बाबाजीके लेखसे साफ प्रगट है कि " जो मनुष्य झूठ चलाना चाहता है वह सत्यकी निन्दा अवश्य करता है "

मनीराम-भला यह तो हुआ, मगर " स्वामीजी " की लेखनी बड़ी जबरदस्त चली है !

सुमतिचंद्र-मेरे ख्यालमें तो बाबाजी जिसवक्त लिखने बैठते थे उस वक्त अपनी अक्लको किसी खेतमें चरनेके लिए भेज दिया करते थे ! रही शरीरकी चेतना सोतो भंगकी तरंगमें ही तंग रहा करती थी ! इस लिए जबरदस्ती की तो फिर बातही क्या ?

मनीराम-भला आप ऐसा क्यों कहते हो ?

सुमतिचंद्र-भाई साहब ! ऐसा इस लिए कहता हूँ कि, "बावाजी" ८४ के "सत्यार्थप्रकाश" पृष्ठ ५४ में लिखते हैं कि-"बिना माता पिताके संतान पैदा हो नहीं सकती" और पृष्ठ २२३ में लिखते हैं कि-"आदिमें अनेक अर्थात् सैकडों सहस्रों मनुष्य" (जवानके जवान विना मां बापके) ईश्वरसे" अब हसो बावाजीकी बुद्धिपर ! क्यों कि, कहां तो "विना माता पिताके "लड़का उत्पन्न हुआ ऐसा कथन सृष्टि क्रमसे विरुद्ध "होनेसे सर्वथा असत्य है" बतलाना, और कहां यह लिखना कि-"सृष्टिकी आदिमें अनेक अर्थात् सैकड़ों "सहस्रो (विना मां बापकेही) मनुष्य उत्पन्न हुए"! शावाश ! बावाजीकी बुद्धिको ! जो कहीं परभी सीधे रास्ते न चली ! इसी बातपर 'देव समाज' अखबार "जीवनतत्व" जिल्द अव्वल नं० २७ × (२-७-५) में बावाजीको—

"अब बावाजीकी गप्प सुनो ,, यह चांद मिला है !

मनीराम-आप मुझे "जीवनतत्व" में यह लिखा निकाल कर बतलाओगे ? (सुमतिचन्द्रके उत्तर देनेसे पहलेही)

ज्ञानचंद्र- (जेबसे निकाल कर जीवनतत्वका परचा) लीजिए ! आपही पढिए !

मनीराम- (परचा लेकर पढ़ने लगे)-"अब पंडित दया-"नंदकी गप्प सुनो आप कहते हैं कि सृष्टिकी शुरूमें

" परमेश्वरने मां बापके बिनाहीं सैकडों आदमी पैदा
" कर दिए यह आदमी भी बच्चे पैदा नहीं किए गये
" बलके ईश्वरने एकदम बड़े बड़े जवान पैदाकर दिए "
(इतना पढ़कर परचा देदिया और बोले) भाई !
बेशक ! यह तो गप्पही है !

सुमतिचंद्र–अच्छा ! अब और सुनिए आपके बाबाजी
" सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ४३६ में–" जो कर्मसे मुक्त
होता है वही ईश्वर कहाता है " ऐसा जैनकी तर्फसे
प्रश्न बनाकर उत्तर देते हैं कि–" जब अनादि कालसे
जीवके साथ कर्म लगे हैं उनसे जीव मुक्त कभी नहीं
हो सकेंगे " सो यह क्या बात है ? जीव कर्मसे मुक्त
होगा कि, नहीं ? आपके ध्यानमें क्या आता है ?

मनीराम–मेरेतो ध्यानमें कुछभी नहीं आता ! आपही इसका
जवाब कहिए !

सुमतिचंद्र–जीव कर्मोंसे रहित होते आए हैं, होते है, और
आगेको होंगे ! (हंस कर) मगर आपके बाबाजी
महाराजके साथ उन कर्मोंकी ऐसी दोस्ती है कि, बाबा-
जी अगर संसारकी जन्म मरण रूप विटंबनासे दुःखी
होकर मुक्त होनाभी चाहे, तो भी वह कर्म–चंदजी !
बाबाजीको किसी कालमें भी न जाने देवेंगे !

अगर बाबाजी अपने माने मुताबिक मुक्तिमें चले भी जावे तो वे कर्म कुछ कालके बाद बाबाजीको फिर घसीट लावेंगे !

ज्ञानचंद्र- (हंस कर) यह तो बहुत ही अच्छी बात है कि, बाबाजीको कर्म महाराज मुक्तिसे छुड़ा लावे ! क्यों कि, मुक्तिको तो बाबाजीने कारागार (जेलखाने) की उपमा दी है !

मनीराम-यह कहां ?

ज्ञानचंद्र-आपतो जान बूझकर अनजान बनते हो ! देखिए " सत्यार्थ प्रकाश " पृष्ठ २४१- " क्या थोड़ेसे कारा-
" गारसे जन्म कारागार दंड़वाले प्राणी अथवा फांसीको
" कोई अच्छा मानता है जब वहांसे आनाही नहीं तो
" जन्म कारागारसे इतनाही अंतर है कि वहां मजूरी
" नहीं करनी पड़ती और ब्रह्ममें लय होना समुद्रमें डूब
" मरना है "- इससे पहले-"इस लिए यही व्यवस्था
" ठीक है कि मुक्तिमें जाना वहांसे पुनः आनाही अ-
" च्छा है । " क्यों ठीक है न !

सुमतिचंद्र- (मनीरामसे) इस बाबाजीके लेखको वह कौन आर्य समाजी है जो बेठीक कहे ! मेरी समझमें तो आर्य समाजियोंको मुनासिब है कि, मुक्त (कारागार) में जानेके कामहीं न करें तो अच्छी बात है, क्यों कि कैद

खानेमें जानेका दाग तो लगही जायगा ! और वह वापस आनेपर किसी न्यायालयमें नौकरी नहीं कर सकता, विकालतका चोगाभी नहीं पहन सकता ! क्यों कि वह डामिस हो चुका ! रहे बाबाजी, सो तो हरामकी रोटियां खानी पसंदही नहीं करते थे ! क्यों करे ? जिनकी टांगोंमें जोर हो वह हरामकी क्यों खायें ? बाबाजी जैसोंको मजूरी करके खाना मंजूर था, मगर हराम खोर बनना अच्छा न था ! हलालखोरही बनना अच्छा था ! और मुक्ति " जन्म कारागारसे इतनाही " अंतर है कि वहां मजूरी नहीं करनी पडती " तो जिसको मजूरी करकेही संसारमें अपने दिन काटनेकी हिम्मत हो उसको जिस मुक्ति स्थानमें मजूरी नहीं वहां जाकर " समुद्रमें डूब मरना है " क्यों जावे ?

मनीराम–भला " स्वामीजी " ने मुक्तिसे वापस आना क्यों माना ?

सुमतिचंद्र–भाई ! आपके " स्वामीजी " की बुद्धि दो प्रकारकी थी ! एकतो पहला–" सत्यार्थप्रकाश " वेद भाष्य भूमिका " आदि ग्रंथोंके बनानेके वक्त, और दूसरी कुछ थोडे साल बाद बदल गई ! जिस बुद्धिने एकदम दूसरी तीसरी बारके " सत्यार्थप्रकाश " में और ही रंग दिखलाया ! कहो किस बुद्धिके अनुसार उत्तर दूं ?

मनीराम–हमको तो उत्तरसे मतलब है !

सुमतिचंद्र–अच्छा तो लीजिए यही ८५ का "सत्यार्थप्रकाश" इसीके मुताबिक उत्तर लो ! पृष्ठ २४० पंक्ति २७ से–
" मुक्तिके स्थानमें वहुतसा भीड भडक्का हो जायगा
" क्यों कि वहां आगम अधिक और व्यय कुछ नहीं
" होनेसे वढतीका पारावार न रहेगा " इसी कारणसे वावाजीने मुक्तिसे वापस आना माना मालूम देता है ! और शायद यहभी मालूम देता है कि, इस प्रकारकी मुक्तिमें वावाजी कभी पहले किसीके सिखे सिखाए भूलमें चले गए होंगे और वहां वहुतसे इकठे हुए हुए कैदियोका भीड भडका देखकर भाग आए हो ! अथवा किसीके साथ दंगा फिसाद हो पड़ा होगा ! क्यों कि, आज कलभी कई एक जेलखानोंमें कैदी लोग आपसमें लडपडते हैं, और मियाद पूरी होने पर निकाल दिए जाते हैं, यही वात अगर वावाजीके साथ वनी हो तो कोई आश्चर्य नहीं ! और मुन्शी " इन्द्रमणिजी " साहव तो वावाजीका मुक्तिसे वापस आनेका मानना " अनंततत्वप्रकाश " के पृष्ठ ३८ में इस प्रकारसे लिखते हैं कि–

" जालंधर नगरमें स्वामीजीकी किसी इसाईके
" साथ मत विषयकी वातचीत हुई इसाईने कहा कि
" जव तुम जीवोंको अनादि मानते हो और उनकी उ-
" त्पत्तिका निषेध करते हो इस दशामें यदि एक एक
" जीव भी मुक्तिको प्राप्त करे तो किसी समय संपूर्ण

" जीव मुक्त हो जायगें और संसार प्रवाहका उच्छेद हो
" जायगा स्वामीजीने उत्तर दिया कि जीव अनन्त
" और असंख्य है अतएव जीवोंकी समाप्ति और सं-
" सारका उच्छेद कभी न होगा । इसाई बोला कि
" परमेश्वर संपूर्ण जीवोंको जानता है वा नहीं ? स्वामीजीने
" कहा कि परमात्मा सब जीवोंको जानताभी है और
" सबके कर्मोंका फलभी देता है इसाईने कहा कि जब
" यह बात है तब तो जीव अनंत नहीं हैं यदि अनंत
" होते तो परमेश्वरको सब जीवोंका ज्ञान किस प्रकार
" होता और वह प्रत्येकके कर्मोंका फल कैसे देता तब
" स्वामीजीने इसाईको तो जैसे तैसे चुप करादिया
" परंतु आप अज्ञानमें पडकर कहने लगे कि जीवोंका
" अनंत होना मिथ्या है हां मुक्ति सदाके लिए नहीं
" है किन्तु एक कल्पके पश्चात् मुक्त जीव फिर संसारमें
" आते हैं "

अब विचारना चाहिए कि, अगर बावा दयानन्द जीको मुक्तिसे लौट आना यह माननेका कारण मुन्शी-जीके कथनानुसार वह इसाईजीही हों तो, कोई तअज्जु-बकी बात नहीं है ! ऐसाही हुआ मालूम देता है, वरना पहले " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ १६१ में वे लिखते हैं
" कि-फिर कभी जन्म मरणमें वह पुरुष नहीं आता
" सदा आनंदमेंही परमेश्वरको प्राप्त होके रहता है "

पृष्ठ १६७-"पाप पुण्य रहित जब शुद्ध होता है तब

" सनातन परमोत्कृष्ट ब्रह्म उसको प्राप्त होता है फिर-
" कभी दुःख सागरमें नहीं आता "

ऋगवेद भाष्य भूमिका पृष्ट ११२ " मुक्तिका उत्तम
सुख मिलता है जिससे छुटके वे दुःखमें कभी नहीं गिरते"

" जन्म मरणको जीतके मोक्ष सुखको प्राप्त होजाते
हैं " इत्यादि जगह जगह पर उन्होंने ऐसाही लिखा,
मगर मुन्शीजीके लिखे मुताबिक मालूम देता है कि
इसाईजीने बाबाजीकी बुद्धिको ऐसा चक्करमें डाला कि
जो रही सही बुद्धिथी वहभी बाबाजीको छोड कर
भागी, जो फिर अंत तकभी बाबाजीके पास न आसकी !

बडे खेदकी बात है कि, न जाने हमारे आर्य समाजी
साहब क्यों नहीं बाबाजीकी बुद्धिको गौरसें विचारते कि,
उस इसाईके एक तुच्छ जैसे प्रश्नका उत्तर न दे सके
उससे निरुत्तर होकर मुक्तिसे लौट आना मान बैठे,
और एक दम मुक्तिको जेलखानेकी उपमा देदी ! बाबा-
जीने मुक्तिके विषयमें कोईभी शास्त्रीय प्रमाण या प्रबल
युक्ति नहीं दी. जब और बातोंके लिएही प्रबल युक्तियां
या शास्त्रीय प्रमाण नहीं दिए तो मुक्तिके लिए कहांसे
लाते ? जैसे और बातें झूठ मूठ इधर उधरसे इकट्ठी
करके दो चार थोथे पोथे बना दिये इसी तरह किसी
जेलखानेको देखकर मुक्ति बनादी ! और उसमें भीड
भडकेकी प्रबल युक्ति देकर मुक्तिसे वापस आनाभी

सिद्धकर दिया ! बाबाजीके पास तो ऐसीही ऐसी युक्तियां थीं कि-

" मुक्तिके स्थानमें भीड भडक्का हो जायगा क्यों कि
" वहां आगम अधिक और व्यय कुछ नहीं होनेसे बढ़-
" तीका पारावार न रहेगा " इस लेखसे मालूम होता है कि, बाबाजी मुक्तिके स्थानको देख आए हैं, और लंबाई चौडाईकाभी माप कर आए है, लेकिन मुझे यह जान लेना मुशकिल हो रहा है कि, बाबाजी जैसे लष्ट पुष्ट वहां कितने आदमी समा सकते हैं ?

ज्ञानचंद्र- (मनीरामकी तरफ हंस कर सुमतिचंद्रसे) भाई ! " मुक्तिके स्थानमें भीड भड़का होजायगा " बाबाजी के इस लेखसे मालूम होता है कि, बाबाजीको इसाई-जीसे निरुत्तर हो जानेके कारण मारे चिन्ताके सारी रात नींदमें पड़े हुए सुपनेमें भीड भडके वालाही मकान नजर आया होगा ! इस लिए उसीको बाबाजीने मुक्ति स्थान समझकर अपने पोथेमें लिख दिया होगा !

मनीराम-भला " वहां आगम अधिक और व्यय कुछ नहीं होनेसे बढतीका परावार न रहेगा " क्या यह हमारे स्वामीजीकी युक्ति मुक्तिके विषयमे कुछ कम है ?

सुमतिचंद्र- (हंस कर) क्या कहना है इस युक्तिका ! यह युक्ति बडी प्रबल है हमको इस बाबाजीकी युक्तिसे

अच्छी तरह पता लग गया कि, बाबाजीको आत्मा रूपी (मूर्त्त) पदार्थ है या अरूपी (अमूर्त्त) इसबातका बिलकुलभी पता नथा, और ईश्वरकाभी पता नहीं लगा कि, वह साकार है या निराकार ? वरना यह कुयुक्ति न पैदा होती, और नाहीं अपने पहले मंतव्योंको उलट पुलट करनेकी नौबत आती ! लेकिन इसमेंभी बाबाजीका कुछ दोष नहीं ! दोषतो उनके पूर्वोपार्जित कर्मोंकाही मानना चाहिए या उनके माने फलप्रदाता ईश्वरका कि, जिससे उनकी मति एक दम बदल गई ! मनीराम जी ! देखो बुरा न लगाना ! बाबाजीकी युक्तिने तो कमाल कर दिया—"वहां आगम अधिक और व्यय कुछ नहीं होनेसे बढतीका पारावार न रहेगा" तुम्हारे बाबा आदमकी बुद्धि पर मैं कुरबान जाऊं !

मनीराम—भाई ! अब आप मुझे बनाओ तो मत मगर सीधी तरह इस युक्तिका उत्तर दो !

सुमतिचंद्र—अच्छा ! अभीतक तुमको यह युक्तिही मालूम दे रही है ? भाई मेरे ! जरा गौरतो करो कि, अरूपी आत्माका अरूपी ब्रह्ममें लय होनेसे भी कभी भीड भडक्का हो सकता है ? अगर ऐसाही हो तो समुद्रके अंदर हजारोंही नदियोंके साथ जो रेता—वालू बह बह कर जाता है उससे तो समुद्रके अंदर बड़ेबड़े वालुरेतके टीबेके टीबे पहाड जैसे सैकडों और हजारों बलकि लाखों हो गए होंगे ! शायद आपने तो देखेभी होंगे ! और

बाबाजीनेभी कभी उन रेतके पहाडों पर चढकर समुद्रमें डूबी हुई अपनी बुद्धिको ढूंढा हो तोभी कोई तअज्जुब नहीं ! लेकिन समुद्रमें पडी हुई वस्तु किसी भाग्यशाली कोही प्राप्त होती है ! अगर बाबाजी मोटी दृष्टिसेभी विचार करते तो मुक्तिमें भीड भडक्का धक्का याद न आता और खोटा कक्का बनाकर संसाररूप मक्काका सक्का बनानेको जी न चाहता !

संसारमें छोटे छोटे आदमी भी इस बातको समझ सकते हैं कि दृष्टि (नजर) एक रूपी (मूर्त्त) पदार्थ है बोभी जगा नहीं रोकती है ! जब कभी कोई वेश्या नाटक करती है उस वक्त हजारों आदमियोंकी नजर उसके एक छोटेसे मुंहपर पडती है वहां किसीकोभी भीड भडक्केका धक्का न लगता है और न लगा सुना है और नाही उस नर्त्तकीका मुंह भरता या मोटा होजाना है लक्ष क्या करोडों आदमियोंकी नजर पडे तोभी मुंह उतनाहीका उतना और सबकी नजर उस मुंहमेंही समा जाती है तो सर्व व्यापक अनंत परमात्मामेंही मुक्तके अ-मूर्त अनंत जीव नहीं समा सकते ? या वे अमूर्त्त मुक्त-रूप जीवसे जगा भर जाती है और भीड भडक्का हो जाता है !

अगर अमूर्त्त वस्तु जगा रोकती है और उससे भीड भडक्का होजाता है तो बाबाजीका माना सर्व व्यापक परमेश्वरही सब जगाको रोक लेवेगा और भीड भडक्का

हो जानेसे अन्य किसी पदार्थको तो रहनेका एक तिल मात्रभी स्थान न मिलेगा क्यों कि बाबाजीके परमात्माने सबही जगा रोकली है अगर कोई जगा विना रोके बाकी रही है तो बाबाजीका परमेश्वर सर्व व्यापकभी न ठहरेगा तबतो बाबाजीको व्याज छोडते मूलसेभी हाथ धोने पडेंगे !

मनीराम– (एकदम) बस साहिब ! बस ! बहुत हुई स्वामीजीकी लीला अपरंपार है !

ज्ञानचंद्र–अजी साहिब ठहरिये अभी मत घबराइये जरा औरभी सुनिये बाबाजीके परमेश्वरमें अनंत ज्ञान बाबाजीने माना है वहभी नहीं समायेगा जरा गौरसे शोचना बाबाजीके परमात्माका ज्ञान बाबाजीके परमात्मासे अधिक है या न्यून ? यदि अधिक है तो छोटी चीजमें बडी चीजका समावेश कदापि नहीं हो सकता है और यदि न्यून है तो परमात्माका ज्ञान पूर्ण नहीं सिद्ध होगा ! अगर बराबर है तो परमेश्वर अनंत न होनेसे ज्ञानभी अनंत नहीं हो सकता है क्यों कि परमेश्वरको स्वामीजीने आकाशसे मोटा लिखा है (वेदभाष्य भूमिका पृष्ठ ११) जब आकाशसे मोटा परमेश्वर हुआ तो आकाश छोटा हुआ और परमेश्वर आकाशसे भी बाहिर पहुंचा सिद्ध हुआ ! परंतु बाबाजीने शोचा नहीं कि आकाश न होगा तो वहां निग्घर अवश्यही होगा और वह निग्घर भी आकाशके विना नहीं ठहर सकता

है तो आकाशसे बडा परमेश्वर इसका क्या परमार्थ निकल सकता है आकाश सूक्ष्म अमूर्त्त पदार्थ और परमेश्वर स्थूल और मूर्त्त पदार्थ सिद्ध होगा जब ऐसा हुआ तब तो परमात्माका अनंत ज्ञान क्या हुआ और वह कहां समायेगा सो स्वयंही विचार कर लेना—

और वेदोंका अनंत ज्ञान ऋषियोंके अंदर किस तरह समाया होगा? क्यों कि- वेदोंमें ईश्वरका ज्ञान माना है और ईश्वरका ज्ञान अनंता है जब अमूर्त्त पदार्थ जगा रोकता है तो अब विचारो उन आदित्यादि ऋषियोंके पेटमें वेदोंमें कहा, ईश्वरका अनंत ज्ञान कैसे समाया होगा ?

सुमतिचंद्र–देखिए मनीरामजी ! आपके बाबाजीके पास गालियांहीं गालियां थी सो कलम द्वारा लिखकर अपने मुखको पवित्र बना लिया ! सच बात है कि, जो चीज जिसके पास होती हैं वह वही दिया करता है ! लेकिन बाबाजीने जो गालियां दी हैं उन्हें हम कहां सभांलते फिरें ? इस लिए मेहरबानी करके तुम अपने बाबाजीकी इमानतको हमसे लेलो ! फिर तुम्हारी मरजी चाहे अपने पास रखना, या समाजके सिपुर्द करना हमारे सनातनी भाईयोंने तो मयसूदके भुगतान कर दिया, और कर रहे हैं ! हम यही सोचते थे कि, बाबाजी तो सिधार गये, मगर उनकी इमानत किसे दें ? सो ...गारी नेक नियती पर हमें विश्वास होनेसे तुम्हेंही संपरमे...ं हैं (मनीरामके हाथ पर हाथ मारके) लीजिए !

मनीराम-क्या कहना है ? इमानत बाबाजीकी और लूं मैं ! जाओ जाओ ! दो जाके उनकी पूंजी संभालने वालोंको !

सुमतिचंद्र-युं वचनेसे छुटका नहीं है, तुमको भी बाबाजीकी पूंजीका मान है ! खबरदार ! इनकार करनेसे काम न चलेगा ! सूद सहित लेना तो किनारे, मगर मूल लेनेसे भी इनकार करते हो ? मालुम होता है कि, कुछ दालमें काला जरूर है !

मनीराम-भाई ! आप दोनों जने मिलकर मुझे दिक, मत करो ! देखो " स्वामीजी " ने " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ४४० में लिखा है कि-" अब देखो जितना मूर्ति पूजाका झगड़ा है वह सब " जैनियोंके घरसे, और पाखंडोंका मुलभी जैन मत है "

सुमतिचंद्र-मनीरामजी ! आपके बाबाजीको न जानें यह कैसी आदत थी कि, किसीको पाखंडी, किसीको धूर्त्त निशाचर, भंगी कुलोत्पन्न, शठ, आंखके अंधे, कुम्हारके गधे, शैतान, अधर्मी, जंगली इत्यादि, किसीको कुछ, किसीको कुछ लिख लिख कर आनंदित होनेमें अपना परम धर्म मानते थे ! (बात काटकर बीचमें)

ज्ञानचंद्र-भाई ! बाबाजी स्वयं जैसे थे वे दूसरोंकोभी वैसा ही देखते थे ! क्यों कि, "सत्यार्थप्रकाश" के पृष्ठ ४४०

में बाबाजीने लिखा है कि–" जो जैसा होता है वह अपने सदृश्य दूसरेको समझता है " इससे जैसे आप थे, वैसे दूसरेको समझते थे. और यह बातभी थी कि–" आप आंखके अंधे और गांठके पूरे " की औलाद थे ! देखो मनीरामजी ! बुरा न मानना ! यह शब्द मैं नहीं कहता, ऐसा शब्द बाबाजी जैसे महात्मा को कहना बडा भारी पाप है ! " बाबाजी " ने स्वयंही मूर्त्तिपूजा करने वालोंको " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३०५ में लिखा है, और यह बात बाबाजीके जीवनचरीत्रसेभी साबित है कि, बाबाजीका बाप शिवलिंगकी पूजा करने वाला था. तो अब बतलाइए इसमें कौन ना कहसकता है ? कि, बाबाजी " आंखके अंधे और गांठके पूरे " की संतान न थे ? अवश्य थे ! अपने बापका असर अगर बेटेमें आजावे तो आश्चर्य नहीं !

मनीराम–तो क्या बाबाजी आंखके अंधे और गांठके पुरे थे?

ज्ञानचंद्र–यह तुम कहो ! हमतो किसीके लिए भी ऐसा न कहेंगे, बाबाजीकी तो बातही क्या है ? हमने तो तुमको यह बतलाया है कि, जो बाबाजीने लिखा है ! औरभी जो कुछ हम बताएंगे, वह बाबाजीका ही लिखा बताएंगें ! सुनो बाबाजीका बाप वेद विरोधी था ! क्यों कि, बाबाजी "सत्यार्थप्रकाश" के पृष्ठ ३१४ में लिखते हैं कि, " जो पाषण आदि मूर्त्ति पूजते है वे अतीव वेद विरोधी

हैं " बस इसी लेखसे बाबाजी और उनके बाप दोनोंहीं जने-" सत्यार्थप्रकाश " पृष्ठ ३१५ में लिखे मुताबिक याने-" पाषाण आदिकी मूर्त्ति बना उसके आगे नैवेद्य " धर घंटानाद टंटं पुं पुं और शंख बजा कोलाहल कर " अगुंठा दिखला अर्थात्-त्वमगुष्ठं गृहाण भोजनं पदार्थं " वाऽहं ग्रहिष्यामि, जैसे कोई किसीको छले वा चिढ़ावे " कि तूं घंटा ले " इत्यादि लेखानुसार पूर्वोक्त काम करने वाले थे ! तो आप और आपके बाप दोनोही वेद विरोधी, बलकि अतीव वेद विरोधी साबित हो चुके ! मगर हमको क्या ? वे जाने उनके करम ! जो जैसा करेगा सो पायेगा ! लेकिन इतनी बाततो कहे वगैर हमसे नहीं रहा जाता कि, बाबाजी लिखते हैं कि-"पाखंडोंका मूल भी जैन मत है " तो इस बाबासाहबके लेखसे साबित होता है कि दुनियांमें जितने मत हैं वे सबही जैन मतके पीछे हुए ! क्यों कि, पहले मुल होता है, बादमें शाखाएं फुटती हैं ! तो " मूल जैन मत है " इस बातको बाबाजी मानतेही हैं तो यह बात सिद्ध हो चुकी कि, जैन मत अनादि, सब मतोंसे पहलेका है ! रहा " मूर्त्तिपूजाका झगडा चला " सो मर्त्ति पूजा क्या चीज है, और किसे कहते हैं ? उसके विषयमें मैं तुमसे फिर बात करूंगा ! मगर पहले बाबाजीकी बुद्धिको देखिए ! आपकी बुद्धि जड़के संसर्गसे जड़ होगई ! जड़भी ऐसी हुई है कि शायदही वह कभी चेतन हो ! क्यों

कि, बाबाजी " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३१३ में लिखते हैं कि " जड़का ध्यान करने वालेका आत्मा भी " जड़ बुद्धि हो जाता है " तो अब विचारो कि, बाबाजी सारी उमर जड़ही जड़का ध्यान करते करते मरगए, मगर निःकेवल चेतनका दर्शन नहीं हुआ ! बाबाजीकी बुद्धिका जड़ होजाना बाबाजीके लेखानुसार लाजिमही था, सो उनकी बुद्धि जड़थी इस लिए जब तक वो दुनियांमें रहे तबतक केवल चेतनका भान न हुआ, और नाही शुद्ध चेतन होनेका उपाय किया ! उपाय क्या करते ? शुद्ध चेतन होनेका जो जरिया था, शुद्ध चेतन बननेका जो उपाय था, वह तो बाबाजीको पथ्थरही पथ्थर भान होता था ! और सच बाततो यह है कि, अन्य भावना बाबाजीको उसमें जब आती अगर बाबाजी इन्सान होते !

मनीराम–बस बस चुपकरो ! बाबाजी इन्सान नहीं तो क्या हैवान थे ?

सुमतिचंद्र–भाई ! तुम एकदम जामेंसे बाहर क्यों होते हो ? बाबाजीके लिय हैवान शब्द तुम भले अपने मुखसे निकालो, हमसे तो यह नहीं कहा जा सकता ! लेकिन बाबाजीने स्वयंही " सत्यार्थप्रकाश " ७५ के प्रष्ठ ३३५ में लिखा है कि–" पाषाण आदिके मूर्त्ति पूजन एकका " देखके दूसरेभी करने लगे ऐसे भेड़ोंकी प्रवाहकी नाई

" लोग गतानु गतिक होते हैं जैसे एक भेड़ आगे चले
" उसके पीछे सब भेड़ चलने लगती हैं और जैसे एक
" सियार वा कुत्ता भौंकने लगे उसका शब्द सुनके अन्य
" सियार वा कुत्ते वहुत वोलने वा भौंकने लगते हैं वैसेही वि-
" द्याहीन मनुष्योंकी अंध परंमपरा" इत्यादि–अब आपही
देखिए कि, बाबाजीका वह पुर्वोक्त लेख कि–" जो
जैसा होता है वह अपने सदृश दूसरोंको समझता है" इस
अपनेही लेखसे बाबाजी स्वयं स्याल (गीदड़) कुत्ते
विद्याहीन अंध सिद्ध हुए ! और लीजिए, आर्य समा-
जियोंके बाप मूर्त्ति पुजा करते हैं, किसीका बाप शैवधर्म
पालता नजर आता है तो, किसीका बेटा वैश्नव, किसी
का भाई कुछ औरही धर्म ! रही समाजियोंकी औरतें,
सो वे माता, मसाणी, अंबिका, भवानी पुजती फिरती
हैं ! कहो ! यह बात झूठ है ?

मनीराम–फिर इसमें क्या हुआ ? मेराही बाप शैव है ! तो
क्या आर्य समाज झूठा होगया ?

सुमतिचंद्र (हंस कर) इससे कुछभी न हुआ इससे हुआ यह
कि तुम बाबाजीके लेखानुसार सियाल, गिदड़, कुत्ते
और विद्या हीन अंधकी औलाद साबत हुए !

मनीराम–अगर युं कहोगे तो बाबाजी महारजका बापभी
शिवलिंगकी पूजा करता था तो, क्या बाबाजी भी—

सुमतिचंद्र– (मनीरामका हाथ पकड कर) बस बस ! रहने
दो ! रहने दो ! भाई मेरे ! अपने मुंसे तुमही अपने

बाबाजीको एसा कहने लगे तबतो दूसरे कहें इसमें आश्चर्यही क्या ? लीजिए मुझे एक बात याद आई, कितनेक विद्वानोंको बाबाजीके मनुष्य होनेमेंभी शंका है ! इसी कारण राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द के. सी. एस. आइ. बहादुर बाबाजीको अपने द्वितीय निवेदनमें लिखते हैं कि, " डॉक्टर टीबो साहब बहादुर स्वामी " दयानंद सरस्वतीजीके मनुष्य होनेमेंभी संदेह लिखते " हैं डाक्टर टीबो साहबको अपने सहीस आदि नौकर " के मनुष्य होनेमें कुछभी संदेह नहीं किंतु केवल स्वा- " मीजीको मनुष्य होनेमें संदेह करते हैं- "

मनीरामजी ! कहिए आपके बाबाजीने डॉक्टर टीबो साहबका क्या बिगाडा था जो बाबामें इन्सान होनेका शक गुजरा ? हां हो सकता है कि, अगर वह डॉक्टरथे उनको इस बातकी परीक्षा करनेकी कोई तदबीर याद हो ! उस जरिएसेही डॉक्टर साहबने बाबाजीको पशु लिखा हो तोभी मुमकिन हो सकता है ! अथवा कोई पशु जैसा काम करते देखा होगा. ! वरना ऐसा वहेम कभीः न करते और अपनी कलमसेभी ऐसा न लिखते !

मनीराम-अच्छा जाने दो इसबातको ! आप यह बतलाइए कि, दुनियांमें वह कौन कौन मत हैं जो मूर्त्ति नहीं मानते ?

सुमतिचंद्र–हमें तो दुनियामें कोई ऐसा मत नहीं नजर आता जो मूर्तिको न मानता हो ! जबतक जीवको अपना आत्म स्वरूप (केवल ज्ञान) अथवा मोक्ष प्राप्त नहीं होता तब तक मूर्त्ति माने बिना किसीकाभी गुजारा नहीं चलता !

मनीराम–पहले तो हमारे " स्वामीजी " के अनुयायी आर्य समाजी ही मूर्त्ति नहीं मानते औरकी तो पीछे बताएंगे !

सुमतिचंद्र–तुम्हारे बाबाजीके अनुयायी आर्यसमाजी मूर्त्ति नहीं मानते, यह कहना तो तुम्हारा हमें ऐसा मालुम होता है कि, जैसे कोई आदमी अपनी औरतसे आकर कहे कि, अरी मुझे क्या देखती है ? तूंतो रांड होगई ! और वहभी सामने अपने पतिको खडा हुआ देख कर रोने पीटने लग जावे !

मनीरामजी ! आपके बाबाजीको मूर्त्ति पूजापर जितना द्वेषथा उतनाही अपने पोथेमें लिखकर अपने अपने अनुयायियोंको हमेशा सबके इष्ट देवोंकी निन्दा करनाही सिखा गए ! मैंने सुना है कि, तुम्हारे यहां बाबाजीकी मूर्त्ति है, उसका तुम बडा अदब करते हो ! मुझे मालूम देता है कि, तुमको परभवमें सुखकी इच्छा नहीं देखो ! मूर्त्तिपूजा–भक्ति करने वालोंको तुम्हारे बाबाजी ने गालियां देकर जो गति प्राप्तकी है अगर तुम्हारीभी उन्होंके पास जानेकी मरजी हो तो फौरन अपने घरसे

बावाजीकी मूर्त्ति (जिसे तुम मुंबई से २५) रुपयेमें लाए हो) अभी जाकर फैंक दो ! अगर मूर्त्तिका अदव करोगे तो दुःख पाओगे तुमने वडी भारी गलती की जो आजतक तुम उस मूर्त्ति द्वारा बावाजीका ध्यान धरते रहे और उसका अदव करते रहे

मनीराम–वस वस ! रहने दो रहने दो ! खबरदार ! अगर हमारे स्वामीजीकी मूर्त्तिकी वेअदवी करने वालेको जो मैं कभी देख पाउं तो उसका सिर तोडदूं !

ज्ञानचंद्र–जो मेरे भगवान् प्रभू परमात्मा अवतारी पुरुषोंकी मूर्त्तिकी वेअदवी करनेवालेको जो मैं कभी देख पाऊं तो उसके नाक कान काटलूं !

सुमतिचंद्र–(ज्ञानचंद्रसे) चुप चुप । देखो ए अपने आप अपनेको मूर्त्ति पूजक सिद्ध कर रहे हैं !

ज्ञानचंद्र–(सुमतिचंद्रसे) अजी ये क्या ? इनके सबी समाजी बावाजी मूर्त्तिकी पूजा भक्ति और अदव करते हैं मैंने एक जगह देखा था कि, आर्य मंदिरमें सभा लगी तब एक मेजपर बावाजीकी मूर्त्तिको खूबही सजाकर रखा जब एक लेक्चरारजीने बावाकी मूर्त्तिको हाथ जोडकर यह कहा था कि–" महाशयो ! ये हमारे स्वामीजी महाराज इस कलिकालमें अवतार न लेते तो वेद धर्मका पोप पाखंडीयों द्वारा नाश हो जाता " कहो इस प्रका-

रका अदब करना पूजा नहीं तो और क्या है ? समाजी लोग अच्छी तरह जानते हैं कि, हमारा गुजारा मूर्त्तिके बिना एक मिनट भरभी नही चल सकता, मगर हठके मारे, बावाजीका कथन झूठ न हो जाय, इस ख्यालसे झूठी बातको भी सत्य करनेकी कोशिस करते हुए नहीं शरमाते ! अगर समाजी लोग मूर्त्ति पूजक नहीं है तो बावाजीकी मूर्त्ति देखकर उसमें यह कोई पाखंडी, भांड या धूर्त्त है ऐसी कल्पना-भावना किसीको हुई ? बलकि उस स्याही कागजकी चित्रामकी मूर्त्तिको " यह स्वामी दयानंदजी महाराज " वाहजी मनीरामजी ! अब तुमसे क्या कहूं ? कभी बावाजी इस वक्त मौजूद होते तो तुमको तमाशा दिखाता !

मनीराम-स्वामीजीने ८४ के " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ट ३०५ में लिखा है कि-" यह मूर्त्तिपूजा केवल पाखंडमत है जैनियोंने चलाई है " सो क्या बात है ?

सुमतिचंद्र-बेशक बावाजीका लिखना बिलकुल ठीक है. क्यों कि, " जो जैसा मनुष्य होता है वह प्रायः अपनेही स- " दृश दुसरोंको समझता है " बावाजी इस अपनेही लेखसे बावाजी दयानंदजीका आर्यमत " केवल पाखंड मत है " और बावाजीनेही चलाया है ! अबलो रही मूर्त्ति पूजासो अगर लोग मूर्त्तिकीही पूजा करते हैं तो बिलकुलही बावाजीका लिखना ठीक है, मगर जो लोग

मूर्त्ति द्वारा अगर अपने इष्टदेव ईश्वर परमात्मा वीतराग देवकी पूजा करते हैं तो बाबाजीका लेख बिलकुल झूठा! बाबाजीका मत बिलकुल झूठा ! ! और यह उनका केवल पाखंड मत है, जो कि बाबाजीने चलाया है!!!

मनीराम–हैं है ? यह क्या कहते हो ? मूर्त्तिं पूजा नहीं ?

सुमतिचंद्र–हां हां मूर्त्तिं पुजा नही !

मनीराम–तो क्या ?

सुमतिचंद्र–देव पूजा ! प्रभु पूजा ! मनीरामजी ? मै जबीतो आपसे कहता हूं कि, आप केवल बाबाजीकी लिखीहुई लकीरके फकीर मत बनो ! कुछ अपनी अकलसे भी विचार करो. जो लोग अनेक प्रकारसे सेवा–पूजा–करते हैं वह मूर्त्तिकी नहीं, किं तु जिसकी वह मर्त्ति है उस ईश्वर परमात्मा वीतराग देवकी सेवा भक्ति पूजा है. यही तो एक बडी भारी भूल है कि, लोग विना मतलब समझे मूर्त्ति पूजा कहने लग गए. लेकिन वह लोग जब मंदिरके अंदर जाते हैं और मूर्त्तिको देखते हैं. तब वह लोग जिसकी मूर्त्ति होती है उसकाही नाम लेकर स्तुति प्रार्थना नमस्कार करते हैं ! न कि–हे पथ्थरकी मूर्त्तिं तुझे नमस्कार हो ! तो अब कहिए कि, यह देव पूजा सिद्ध हुई या मूर्त्ति पूजा ? मगर जिस मूर्त्तिने अपने ईश्वर परमात्माका ज्ञान कराया वह मूर्त्तिं हमारे लिए साक्षात् ईश्वर परमात्माकेही तुल्य है. जिसका दिल प

थ्थरके समान होता है उसको तो वह मूर्त्ति पथ्थर दि-खाई देती है, और जिनके अंदर वह मूर्त्ति साक्षात् इष्टदेव ईश्वर परमात्माही मालम होता है उन लोगोंको तो उस मूर्त्तिको पथ्थर कहनेवालाही पथ्थर जैसा लगता है !

मनीराम–वाह जी वाह ! यहतो आपने खूब कही ! मुझे और मेरे बाबाजी दोनौंको पथ्थर बनादिया ! क्या बाबाजी और मै पथ्थर ?

सुमतिचंद्र–अगर तुम और तुम्हारे बाबाजी पथ्थर होते तो कहनाही क्या था ? दुनियामें लोगोंके काम तो आते ! तुम्हारे बाबाजी तो पथ्थरसेभी कठोर निकले कि, जि-न्होंने हरएक मत वालोंके कोमल हृदयको उनके धर्मकी निन्दा करके दुःखाया और सताया ! जबतक बाबाजीने अवतार नहीं लिया था, तबतक हिंदुस्तानमें लोग बडे अमन चैनमें थे ! बाबाजीके पहले किसीने ताऊन (प्लेग) का नामभी न सुना था ! न जाने बाबाजीने हीं अपने दयानंदी शरीरको छोडकर रहा सहा बदला लेनेको ताऊनका अवतार धारण किया हो तोभी कोई आश्चर्य नहीं ! इस बातमें बाबाजीकाही लेख साक्षी समझना देखो "सत्यार्थप्रकाश" पृष्ठ ३८९–"धर्मात्मा अधिक "होने और अधर्मी न्मून होनेसे संसारमें सुख बढता "है और जब अधर्मी अधिक होते हैं तब दुःख" सो दयानंदी दल जबसे बढा तबसें लाखों आदमी ताऊनका

ग्रास बनगए, दयानंदीयोंकी निन्दासे लाखों आदमीओं के हृदय विदीर्ण हो रहे हैं !

धर्मी लोगोंका दिल दुःख रहा है, दिनपर दिन कुसंप बढ़ रहा है, बस जबसे अधर्मी दल बढ़ा तबसेही लोग दिनपर दिन दुःखी होने लगे ! एक एक औरतको दश दश खसम करनेकी आज्ञा है ! यह दयानंदीयोंका उपदेश सुनकर लाखोंहीं पतिव्रता सती कुलीन स्त्रियोंका हृदय थरोता है ! कलेजा कांपता है ! शरीरके रूमटे खडे होते हैं ! विचारियां मारे दुःखके आंखोंसे आंसूओंकी धारा बहाकर बाबाजीके इस व्यभिचार वर्धक धर्मको धिक्कारती हैं ! हाय ! कैसा गजब ! ऐसा अधर्म शास्त्र विरुद्ध पशुओं जैसा खोटा आचार करना तो दरकिनार, लेकिन कानोसे सुनाभी नहीं जाता ! अरे इस दुःखको देख कर पथ्थरभी पसीज जाए ! मगर बाबा दयानन्दजीके हाथसे यह लेख लिखा कैसे गया ? हमें इसी बातसे मालूम होता है कि, बाबाजीका दिल पथ्थरसेभी कठोर था ! और तुमभी पथ्थरके भगत पथ्थरही हो !

मनीराम–आप जी चाहे सो कहें ! लेकिन देखिए आपलोगोंके लिए हमारे " स्वामीजी " महाराजने " सत्यार्थप्रकाश " पृष्ठ ४३१ में लिखा है कि–" सबसे वैर, " विरोध, निन्दा, ईर्षा आदि दुष्ट करम रूप सागरमें " डुबाने वाला जैन मार्ग है जैसे जैनी लोग सबके

" निन्दक हैं वैसा कोईभी दूसरा मत वाला महा निन्दक " और अधर्मी न होगा " सो कैसे ?

सुमतिचंद्र–देखो मनीरामजी ! तुम इन अपने बाबाजीके वाक्योंको सुनाकर अगर हमसे उत्तर चाहते हो तो अपनी आखोंसे पक्षपातका चशमा उतार कर शांतिसे देखो, और जो कहता हूं उसे सुनो ! अगर गौरसे विचारा जाय तो यह पुर्वोक्त अक्षर तुम्हारे बाबाजीमेंही थे, तभी उन्होंने लिखे ! क्यों कि, वह आप खुद वैर, विरोध, निन्दा ईर्षा आदि कामोको करते थे, सोई मरते हुए तुमको और अन्य अपने मतानुयायीयोंको सिखागए ! उनके चेले उनसेभी बढ़कर निकले ! बाबाजी अगर किसीको दशगालियां देगए होंगे तो, चेले बीस देनेको तैयार हैं ! बडे अफसोसकी बात है कि, अगर बाबाजी हरएक मत वालोंको इस प्रकारकी गालियां न लिखते तो क्या " सत्यार्थप्रकाश " को ' असत्यार्थप्रकाश ' या ' मिथ्यात्वप्रकाश ' कोई कहता, या लिखता ? किसीकी ताकत थी कि, बाबाजीको *कलयुगानंद, गपोडानंद आदि कहकर बुलाता, या कहता ? यदि गौरसे देखा जाए तो बाबाजीमें ' दयानंद ' इस निज नामकी भी शरम नहीं पाई जाती !

---

* इस पुस्तकके पृष्ट ११–१२ आदिमें मंत्र हैं वे " दयानंद स्तोत्र " के हैं.

मनीराम-कैसे ?

सुमतिचंद्र-कैसे क्या? क्या तुमने सन् ७५ के सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ३०३ में अपने बावाका लेख नहीं देखा ?

मनीराम-नहीं ! भला क्या लिखा है ?

सुमतिचंद्र-लिखा है कि-" और जो वंध्या गाय होती है " उसकोभी गौ मेधमें मारना लिखा है-स्थूल पृषती " माग्ने वारुणीमनड्वाहो मालभेत् यह ब्राह्मणकी " श्रुति है इसमें स्त्री लिंग और स्थूल पृषती विशेषणसे " बन्ध्या गाय ली जाती है क्यों कि बन्ध्यासे दुग्ध " और वत्सादिकोंकी उत्पत्ति होती नहीं और जो मांस " न खाय घृत दुग्ध आदिकोंसे निर्वाह करे क्यों कि " घृत दुग्ध आदिकोंसे भी बहुत पुष्टी होती है सो जो " मांस खाय अथवा घृतादिकोंसे निर्वाह करे वेभी सब " अग्निमें होमे विना न खांये क्यों कि जीवको मारनेके " समय पीडा होती है उससे कुछ पापभी होता है फिर " जब वे अग्निमें होम करेंगे तब परमाणुसे उक्त प्रकार " सब जीवोंको सुख पहुंचेगा एक जीवकी पीडासे भी " पाप भयाथा सो भी थोडासा गिना जायगा अन्य " था नहीं " तथा इसी " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३०२ में-" कोईभी मांस न खाय तो जानवर पक्षी " मत्स्य और जल जंतु इतने हैं उनसे शतसहस्र गुने " हो जाए "

मनीराम–हाय हाय ! अगर ऐसा लिखा है तबतो बहुत बुरा ! !

ज्ञानचंद्र–मनीरामजी ! यह क्या ? अपने " स्वामीजी " के लेखको बुरा बताते हो !

मनीराम–बस मुझे मालुम होता है कि, स्वामीजी इसी डरके मारे वेमौत मरकर भाग गए कि, कहीं ऐसा न हो कि, मेरे उपदेश पर लोगोंने गौरतो नहीं किया. सबके दिलमें दया बस रही है इस लिए पशु पक्षी बढ़ जायगे मुझे रहनेको कहीं तिल जितनी जगाभी न मिलेगी ! देखिए दयानन्द बाबाकी दया ! संवत् १९३२ की " संस्कार विधि " के पृष्ठ ११ में–" जो चाहे कि मेरा पुत्र पंडित " सद्विवेकी शत्रुओंको जीतने वाला, स्वयंजीतमें न आने " वाला, युद्धमें गमन, हर्ष और निर्भयता करने वाला " शिक्षित वाणीका बोलने वाला सब वेद वेदांग विद्या- " का पढ़ने वाला और पढ़ाने तथा सर्वायुका भोगने " वाला पुत्र होय वह मांस युक्त भातको पकाके पूर्वोक्त " घृत युक्त खांय तो वैसे पुत्र होनका संभव है " तथा औरभी देखो–" अजाके मांसका भोजन अन्नादिकी " इच्छा करने वाला तथा विद्या कामनाके लिए तित्त- " रका मांस भोजन करावे " इत्यादि लिख कर बा- वाजीने तो अपने नामकोभी व्यर्थ कर दिखलाया ! आज तक मुझे " स्वामीजी " के ग्रंथों पर बडाही प्रेम

था, मगर इसको सुनतेही आज प्रेम तो क्या परंतु क्रोध उत्पन्न होता है ! बस अब मैं आपसे कुछ नहीं सुनना चाहता, आप मुझे घर जाने दो !

सुमतिचंद्र- (हाथसे पकड़कर) अजी मनीरामजी ! यह क्या ? एकदमही तुमको यह क्या होगया ? जरा सबर करो ! अभी तो हमने आपसे बहुत कुछ बात चीत करनी है और बाबाजी महाराजकी सत्य प्रियताको दिखाना है. जैनीलोग सबके निन्दक हैं वैसा कोईभी " मत वाला महानिन्दक और अधर्मी न होगा " मनीरामजी ! अब जरा आपने अपने इस बाबाजीके लेखको देखकर जरा विचार करना कि, जैनियोंने अपने किस शास्त्रमें सबकी निन्दा की है ? और यह तो मैं तुमको दिखाता हूं कि, बाबाजीने " सत्यार्थप्रकाश " में सब मतोंकी पेटभर निन्दाकी है ! देखिए-बाबाजीकी महा निन्दाका नमूना मात्र सत्यार्थप्रकाश-पृष्ठ २१ "आंख-" के अंधे गांठके पूरे उन दुर्बुद्धि पापी स्वार्थी "

स० पृ० १२१ " क्यों भूसता है "
" " २३८ " वाहरे झूठे वेदांतिओ "
" " २८० " गडरिएके समान झुठे गुरु "
" " २९२ " जिसके हृदयकी आंखें फूटगई हों "
" " २९७ " उन निर्लज्जोंको तनिकभी लज्जा न आई "
" " २९९ " मुनिवाहन भंगी कुलोत्पन्न यावनाचार्य " यवन कुलोत्पन्न शठ कोप नाम कंजर "

स० पृ० ३०२ " मंदमति "

" " ३०९ " अंधे धूर्त्त "

" " ३१२ " भठियारेके टट्टू , कुम्हारके गधे "

" " ३१९ " ठगोंके तुल्य निर्बुद्धि अनाथोंका माल
" मारके मौज करते हैं "

" " ३२२ " पुजारी पंडे आंखके अंधे गांठके पुरोंको "

" " ३२६ " ऐसे गुरु और चेलोंके मुख-धूळ और "
" राख पड़े "

" " ३३० " भागवतके बनाने वाले लाल बुझकड "
" क्या कहना है तुझको ऐसी ऐसी मिथ्या"
" वात लिखनेमें तनिकभी लज्जा और शरम"
" न आई निपट अंधाही बनगया भला "
" इन झूठ वातोंको वे अंधे पोप और वाहर
" भीतरकी फुटी आंखों वाले उनके चेले
" सुनते और मानते हैं "

" इन भगवत आदिके बनाने हारे जन्मतेही
" क्यों नहीं गर्भहीमें नष्ट हो गए वा जनमते
" समय मर क्यों न गए "

" " ३३१ " तुम भाट और चारणोंसे भी
" वढ़कर गप्पी हो "

" " ४०२ " भांड धूर्त्त निशाचर वत महीधर आदि
" टीकाकार हुए हैं "

स० पृ० ४३१ " सबसे वैर विरोध निन्दा ईर्षा आदि दुष्ट
" कर्म रूप सागरमें डुबाने वाला जैन मार्ग
" है जैसे जैनी लोग सबके निन्दक है वैसा
" कोईभी दूसरा मत वाला महा निन्दक
" और अधर्मि न होगा "

" " ४४० " पाखंडोंका भूलही जैन मत है

" " ५०५ " में ईशूको शैतान–लिखा है

" " ५०९ " में योहन आदिकोंको जंगली–इत्यादि.

मैं कहांतक तुमको बतलाऊं सिर्फ इतनेही उदाहरणोंसे अपने बावाजीकी परीक्षा करलो कि, महानिन्दक और अधर्मी कौन ? " जैसे जैनी लोग सबके निन्दक है वैसा " कोईभी दूसरा मत वाला महानिन्दक और अधर्मी न " होगा " इस बावाजीके लेखको अगर तुम सच्चा करना चाहते हो तो, हम दावेके साथ कहते हैं कि, जैन धर्मके किसीभी शास्त्रमें अगर तुम कहींभी किसीकी निन्दा लिखी निकालकर बताओ ! वरना बावाजीके पूर्वोक्त लेखसेही बावाजीको महानिन्दक और अधर्मी होनेके कारण अपने मूं पर कपड़ा डाल कर रोओ !

मनीराम–मैं क्यों रोऊं ?

सुमतिचंद्र–तुम उनके सेवक हो ! इस लिए !

मनीराम–छिः ! बस खबरदार ! मुझे बाबाजीका सेवक कहाती !

ज्ञानचंद्र–मनीरामजी ! तुम बाबाजीके सेवक हो ! क्या ए झूठ है ? तुम समाजमें नहीं जाते ? तुम समाजी नहीं ? तुम्हारा समाजके रजिष्ठरमें नाम नहीं ? तुम समाजीहो ! समाजी हो ! हजार दफा बलकि लाख दफा समाजीहो !

मनीराम–देखिए आप ज्यादती करते हैं, अब मैं समाजी नहीं !

ज्ञानचंद्र–कबसे ?

मनीराम–जबसे आपलोगोंके साथ बात हुई तबसे ! बस मुझे मालूम होगया कि, यह "सत्यार्थप्रकाश" जिसको रात दिन बगलमें दबाए फिरता था वह धर्म ग्रंथ नहीं बलकि मेरी समझमें अधर्म ग्रंथ है !

ज्ञानचंद्र–अरे चुप चुप ! कोई सुनेगा तो ठोक बैठेगा !

मनीराम–क्यों ठोक बैठेगा ? मैं किसीकी निन्दा थोडेही करता हूं ! मैं साफ साफ कहूंगा कि, इस जमानेमें अगर सत्य बोलने वाले और लिखने वाले कोई हुए हैं तो एक बाबा दयानन्दजी ही हुए हैं ! क्यो कि, जिन्होंने अपने अंदर जो औगुण थे वे साफ साफ प्रगट करादिए ! वरना ऐसा कौन अकलका दुश्मन है जो अपने आपको पाखंडोंका मूल, शैतान, जंगली, कंजर,

भडवा, भंगी कुलोत्पन्न, निर्लज्ज, अंधा, फूटी आंखोंवाला गप्पी, समुद्रमें डुबने वाला, निन्दक, महानिन्दक, अधर्मी आदि लिखैं ! धन्य है बाबाजीको जो ऐसी उपाधियां धारण करते थे ! यह हिम्मत वालोंकाही काम है ! बाबाजी आपही स० प्र० के पृष्ठ ४४० में " जो जैसा " होता है वह अपने सदृश दूसरेको समझता है " इस अपने लेखसे जैसे आप थे वैसाही दूसरेको देखते थे ! देखो बाबाजी कैसे मर्द बहादुर थे कि " ऐश्वर्यकी इच्छाके लिए बैलसे भोग करे " है किसीकी ताकत जो आज न्यायवान् गवर्मेन्टके राज्यमें बैलके साथ भोगकरे ? देखो फिर लोहेके पीजरेमें जाना पडता है या नहीं ? यह हिम्मत वालोंका ही काम है ! अब किसीकी ताकत है ? हमे तो आज कल कोई ऐसा समाजी नजर नहीं आता जो बैलके साथ भोग करे ?

ऐश्वर्यकी इच्छाको तो बेशक चाहते हैं, पर वेभी, इस कामके करनेसे सारी उमर कंगाल और दरिद्री रहना मंजूर करेंगें, लेकिन ऐसा काम कभी भी न करेंगे ! मगर कुछ कहा भी नहीं जाता ! क्यों कि, बाबाजीके हुकमकी तामील करने वालेभी शायद कोई न कोई हों !

सुमतिचंद्र–भाई बाबाजी तुम्हारे, तुम जी चाहे सो कहो ! हमतो सिर्फ इतनाही कहेंगे कि, बाबाजी जिन्होंने सत्यार्थप्रकाशके पृष्ठ ४३१ में " जैसे जैनी लोग सबके निन्दक है वैसा कोई भी दूसरा मत वाला महानिन्दक

" और अधर्मी न होगा क्या एक ओरसे सबकी निन्दा
" और अपनी प्रशंसा करना शठ मनुष्योंकी बातें नहीं"
इत्यादि लिखकर अपनी जबान और हाथोंकी खाज मिटाइ है, और अपनी पंडिताई दिखाई है ! सज्जन जन पक्षपात और हठ दुराग्रहसे दूर रहने वाले धर्मप्रिय आपही कहते हैं कि, सब मतवालोंकी निन्दा करने वाले जैनी हैं या बाबा दयानन्दजी ? हमें तो बाबाजी जैसी निन्दा जैनियोंने किसीकी की हो नहीं मालूम होता ! बाबाजीने तो "सत्यार्थप्रकाश " में ज्यों शुरूसे आखीर तक कलम चलाई है सिवाय निन्दाके दूसरी बात ही नहीं, और किसीभी मत वालेको बुराभला कहनेसे नहीं चूके ! शैव, शाक्त, वैश्नव, कबीर, नानक, दादू, गोकल स्वामी, स्वामीनारायण, जैन, बौद्ध, शंकर, पौराणी, ईसाई, मुसलमान, आदि सबकी निन्दा खूबही पेट भर की है. जैनियोंने इस प्रकार खोटी निन्दा कहीं भी की हो या लिखी हो तो बताओ ! हमारी समझमें पूर्वोक्त बाबाजीके लेखमें जहां जैन पद डाला है वहां बाबा दयानन्दका नाम डालकर पढ़ लेना चाहिए ! याने-" जैसे
" दयानन्द और दयानन्दी लोग सबके निन्दक हैं वैसा
" कोईभी दूसरा मत वाला महानिन्दक और अधर्मी न
" होगा क्या एक ओरसे सबकी निन्दा और अपनी
" अति प्रशंसा करना शठ मनुष्योंकी बात नहीं ? "बस
यह बाबाका लेख मैं बाबाजीको ही वापस देना योग्य समझता हूं !

मनीराम—बाबाजी तो मरगये !

सुमतिचंद्र—तो तुमही लेलो !

मनीराम—मुझे क्या जरूरत पडी है, जाइए ! उनके अनुयायीयोंको ही दे दीजीए ! आपने तो यह औरही बातें कहडाली ! इसमें मुझे फायदाही हुआ है, लेकिन मूर्त्ति पूजाके विषयमें जो मैं पूछ रहा था, उसका तो कुछभी खुलासा नहीं हुआ !

सुमतिचंद्र—हां बेशक ! लीजिए मूर्त्ति पूजाके विषयमें मैं दावेके साथ कहता हूं कि, मूर्त्तिके बगैर कोईभी ऐसा नहीं जिसका गुजारा चला हो या चले ! अपना झूठा हठ ताने जाना हो तो कोई उपाय नहीं ! मगर गौरसे देखा जायतो, क्या हिन्दु, क्या मुसलमान, और क्या ईसाई, सबही मूर्त्तिको मानते हैं. लेकिन बिना विचारे एक दूसरेको बुतपरस्त २ कह कर अथवा ऐसे वैसे कठोर शब्दोंको इस्तेमाल करके सिवाय चिढानेके उनके हाथ पल्ले कुछ नहीं आता !

मनीराम—क्या ईसाई और मुसलमानभी मूर्त्ति मानते और उसकी सेवा भक्ति करते हैं ?

सुमतिचंद्र—हां अव्वलदरजेकी सेवा भक्ति और अदब करते हैं !

मनीराम—मूर्त्तिकी सेवा भक्ति ?

सुमतिचंद्र-हां हां मूर्त्तिकी ! मूर्त्तिकी !

मनीराम-आपको भांग चढ़रही मालूम देती है !

सुमतिचंद्र-तुमको ऐसा मालूम होता है तो इसका कारण यही है कि, तुमको बाबाजीके वचनोपर पूरीतौर पर अमल करना आता है " जो जैसा होता है वह दूसरोंको अपने सदृश समझता है " बेशक ! इसी कलमके मुताबिक तुमको मैं भंगेड़ी नजर आता हूं !

मनीराम-मैंने तो कहीं भी उनको मूर्त्तिकी सेवा भक्ति करते नहीं देखा !

सुमतिचंद्र-तुम बाबाजीकी कंपनीके चसमेंको अपनी आंखोंके आगेसे हटाकर अगर देखो तो अच्छी तरह दिखाई देने लगजावे !

देखिए मनीरामजी ! मेरी बात पर ध्यान रखना ! अपने हिन्दुस्तानके मुसलमान भाई, जहां उनका अपना " मक्काशरीफ " है, वहां यात्रा (हज) करनेको जाते हैं. यह तो तुमको मालूम है ?

मनीराम-हां यह तो मालूम है ! अभी मेरे एक दोस्त " इस्माइलखां " हज़ करके आए हैं.

सुमतिचंद्र-अच्छा ! ओहो ! अब तो कुछ कुछ दिखाई देने लगा, यह सब न दिखनेका कारण आपकी आंखोंके

आगे जड़ चसमाही था, भला हज किसकी करके आया ? वहां मूर्त्ति है ? अथवा कोई आदमी बैठा है ?

मनीराम—आदमी काहेका ? वहां है उनके "पैगम्बर साहब" की दरगाह !

सुमतिचंद्र—क्यों भाई ! यह क्या ? जड़की सेवा भक्ति ! अदब तालीम ! उसके सामने अपने पापोंकी माफी मांगना ! अपने गुनाहोंको वखसाना ! उस दरगाह सरीफके चूंबे-वोसे लेना ! फूल चढाना ! कितना अदब ! कितनी मान्यता ! क्या अवभी मूर्त्ति पूजामें फरक है ? लीजीए मैं तुमें औरभी सुनाऊं ! (जहां आपके वावाजीके प्राण निकले) अजमेर शहरमें ख्वाजा मोइनुद्दीन चीशती साहबकी दरगाहका किस प्रकार पूजन होता है ! क्या है किसी बंदेकी मजाल जो उसकी वे अदवी कर सके ? यह मूर्त्तिं पूजा नहीं तो और क्या ईंट चूनाकी पूजा है ? वस मनीरामजी ! मैं ज्यादा क्या कहुं ? मेरी आंखों देखी वात है कि, अजमेर सरीफकी दरगाहकी भक्ति केवल मुसलमानही नहीं ! वलकि, हजारोंकी संख्यामें हिन्दु (ब्राह्मण-क्षत्री-वैश्य) भी करते हैं. खास चंद्रशेखर पंडितकी स्त्री अपने पुत्र पुत्रीयों सहित खूब गाजे वाजेके साथ वहां गई थी !

मनीराम—आपभी साथ गए थे ?

[सुमतिचं]द्र—हां मैं उनके साथ सिर्फ इसलिएही गया था कि, उन्हें रेलमें तकलीफ न हो और वहां उतर कर जगह

वगैरह और बाजे आदिका इंतजाम करना था. इस लिए पंडितजीने मुझे साथ भेजा था. उनके लिहाजसे जाना पड़ाथा.

मनीराम–तो आप दरगाह सरीफ शायदही गए होंगे !

सुमतिचंद्र–नहीं नहीं मैं साथमें अंदर जहां दरगाह सरीफ है वहां गया था !

मनीराम–क्यों तुम क्यों गए ?

सुमतिचंद्र–यही देखनेको कि, ये वहां पर क्या क्या कार्रवाई करते हैं !

मनीराम–अच्छा फिर क्या देखा ?

सुमतिचंद्र–देखा क्या ? देखी मूर्त्तिपूजा !

मनीराम–कैसे ?

सुमतिचंद्र–जब पंडितानीजी वहां गाजे बाजेके साथ बहुत सी मिठाई, फूल, अतर और धूप (अगर बत्तीयां) आदि लेकर गई तब उन्होंने उस नामांकित प्रसिद्ध दरगाह (कबर) को गुलाब जलकी पांच बोतलोंसे अच्छी तरह धोया ! फिर अपने माथेके बालोंसे सारी दरगाहको लूंछ कर उसके इर्द गिर्दकी धूलभी अपने बालोंसे साफ की, पीछे अतर लगाया और एक हरे रंगकी चद्दर

जो कि बड़ी बढ़िया रेशमी साथ ले गई थी वह चढ़ाकर उसपर फूल गेरे और मिठाई और रेवड़ियां आगे रख कर धूप वगैरह किया। वहांके रहने वाले एक पीरजी, कि जिन्होंने वह सब कार्रवाई कराईथी उन्हें पांच रुपए दिए और हाथ जोड़कर बोली कि–" पीरजी ! मैंने मानता कीथी वह मेरी पूरी होनेसे मैं ख्वाजा साहबकी दरगाह पर हाजर हो अपना फर्ज अदा कर चली हूं " पीरजीने लोबान सिलगानेके कसोरेमेंसे थोड़ीसी भभूत लेकर पंडितानीजीके हाथमें देते हुए कुछ आशीर्वाद सा दिया, और जो मिठाई और रेवड़ियां चढ़ाईथी उनमेंसे थोड़ी थोड़ी रखकर बाकी अपने हाथसे पीरजीने वापस देदी ! इत्यादि–ऐसी कार्रवाई मैंने आंखों देखी है. दिल्लीमें जुमामसजिदके सामने " हरेभरे साहब " की दरगाह पर भी यही हाल देखा, एक दिन एक हिन्दु स्त्री और दो मुसलमाननोंने शामके वक्त जाकर चद्दर चढ़ाई और उस दरगाहको जैसे किसीके पैर चांपते हैं वैसे चांपती रहीं और पंखा करती रहीं, बाद एक घंटेके दरगाहजीके पैरोंके भागको चूंमा और चली गई. ऐसी ऐसी कार्रवाईयां आगरा, लखनऊ, मेरठ, गवालियर, दिल्ली दरवाजेके बाहर कोटला है वहां, और लाहोर, आदि सैकड़ों जगह यह मूर्त्ति पूजाकी रौनक मैं खुद देख चुका हूं और तुम देखना चाहो तो मैं दिखानेको तैयार हूं ! क्या यह मूर्त्ति पूजा नहीं ? हरसाल मोहरम्मोंमें ताजीए निकालते हैं, क्या यह पूजा नहीं ?

कुरानसरीफ क्या चीज है ? यहभी एक मूर्त्ति है, खुदाका कलाम धर्मशास्त्र मानकर ही उस कागज स्याहीका कितना अदब ? कितनी भक्ति ? किसी बातकी सहादत देनी होती है तो कुरानसरीफकी कसम खाते हैं। कहिए उसमें सिवाय जड़ वस्तु–स्याही कागजके अन्य कोई वस्तु दिखाई देती है ? नहीं ! सिर्फ उसमें खुदाके कलामकी स्थापना (मूर्त्ति) मान करही इतना अदब और भक्ति की जाती है.

इसी प्रकार ईसाई लोगोंके वारेमें समझ लीजिए, वह इंजिलका बडाही मान करते हैं और ईशु क्राइष्टकी मूर्त्तिको मानते हैं उसकी बे अदबी करने वालेको मारने मरनेको तैयार हो जाते हैं, क्या उस जड़ स्याही कागज या पाषाणमें ईशु आगया ? नहीं वह ईशु नहीं है, लेकिन ईशुकी असलियत प्रगट करने वाली वह नकल (मूर्त्ति) है, जिसको देखने मात्रसे ईसाई मात्रको अपना ईशा प्रभु याद आता है ! कहो अब कौन रहे जो मूर्त्ति न मानते हो ? बाबादयानन्दजी मरगए हैं मगर उनकी असलियत याद कराने वाली मूर्त्तियां समाजी महाशयोंके घर घर प्राय दो चार शहरोंमें मैंने देखी हैं ! बलकि, मैंने उनसे पूछा भी कि–महाशयजी ! यह मूर्त्ति किसकी है ? तो बोले कि– " स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज " की. मुझे बडा अफसोस होता है कि, सरासर मूर्त्ति मानना और

दूसरोंको कहना कि हम मूर्त्ति नहीं मानते ! छिः कैसी बे समझीका पड़दा तुम्हारी आंखों पर पडा है ? जो देखते हुएभी इनकार करते हो ! वाहजी मनीरामजी !

मनीराम–भाई ! मूर्त्ति जिसकी हो उसकी न कहें तो क्या झूठ बोलें ?

सुमतिचंद्र–शावास ! मैं यही कहलाना चाहता था कि, मूर्त्ति जिसकी हो उसीकी कहो और जिसकी वह मूर्त्ति है उसीकीही हमलोग पूजा करते हैं. कागज और रंग-स्याहीकी मूर्त्तिमें तुम्हारे परम हंस परिव्राजकाचार्य श्रीमद्‌यानंद सरस्वती बाबा अपने इस लंबक लंबे उपाधीके पूंछडे सहित आ घुसते हैं तो अफसोस है कि सत्य व्रत धारी समाजीदलका यह कहना कि, पथ्थरमें क्या परमेश्वर आ घुसा ?

अगर उस मुसलमानके हाथकी चितरी हुई रंग बेरंगी मूर्त्तिमें तुम्हारे बाबाजी जिनकी गतिकाभी ठिकाना नहीं कि, मरकर किस गतिमें गए हैं ? वह आ घुसे; तो साक्षात् परमात्मा अवतारी पुरुष जो निश्चय परब्रह्म मोक्षपदको प्राप्त हुए हैं उनकी मूर्तिमें उनका होना सर्वथा संभव है, यथार्थ है ! वह पथ्थर नहीं, हमारेलिए साक्षात् परमेश्वर परमात्मा है. प्रभु परमात्माकी मूर्तिको पथ्थर बतलाना याने बाबाजीको मूर्ति पूजा न माननेका कारण मुझे अच्छी तरह मालूम है.

मनीराम-भला क्या ?

सुमतिचंद्र-इसका कारण यही है कि बाबाजी जानते थे कि, मैं अगर मूर्त्ति पूजाका मंडन करूंगा और मूर्त्ति मानूंगा तो लोग मेरी मूर्त्तिकीभी पूजा करेंगे, लेकिन मैंने किसी के साथ सिवाय बदीके नेकी तो कीही नहीं, हर किसी को बुरा भला कहा है, सब धर्म, धर्मवालोंके नेताओंको गालियां दी हैं, ऐसा न हो कि लोग जहां कहीं मेरी मूर्त्तिको देखें वहांही अदब भक्ति पूजाके बदले दूसरेही प्रकारकी पूजा करने लग जावे ! यह लाजमी है कि, अगर मेरी मूर्त्तिकी बे अदबी हुई तो मेरी तो होही चुकी ! किसीकी मूर्त्ति पर जूता मारा जाय तो वह मूर्त्ति वालेकीही तौहिनी गिनी जाती है. हमने सुना है कि बंबईमें किसी बदमाशने महाराणी विक्टोरिआकी मूर्त्तिके गलेमें जूतियोंका हार पहना, काले लुकसे चेहरा काला कर दिया था. इस वारदातके अगले दिन, उस वक्त जो बंबईके गवरनर साहिब थे उन्होंने सुना और हुकम दिया कि जो उस बदमाशको पकड़े तो उसे सरकार अमुक इनाम देगी. बस साबित हुआ कि मूर्त्ति एक ऐसी चीज है जो माने बिना कोई बच नहीं सका. जो ऐसा कहने वाले हैं कि " मूर्त्ति कुछभी नहीं कर सकती " उनको यहां लाकर खड़ा करदेना चाहिए कि मूर्त्ति कुछ कर सकती है या नहीं ? अगर उस वक्त उस बदमाशका पता लग जाता तो क्या वह सारी जि-

न्दगीके लिए वडे घरमें पहुंचे वगैर रहता ? नहीं हरगिज नहीं ! ! देखिए पाषाणकी मूर्त्तिके गलेमें जूतोंका हार डालनेसे महाराणी विक्टोरियाके गलेमें वह नहीं पडगया था ! मूर्त्तिका चेहरा काला करनेसे महाराणीका चेहरा काला नहीं होगया था ! फिर किस लिए सरकारको बुरा लगा, जो उस वदमाशकी तलाश करने वालेके लिए इनाम देनेको तैयार हुई ? इसी बातसे साबित होता है कि हमारी ब्रिटिस सरकार मूर्त्तिका मान करती है! मूर्त्तिको मानती है। हम इस बातके लिए सरकारको धन्यवाद देते हैं कि, जो मूर्त्तिकी वे अदवी करने वालेके लिए योग्य न्याय पूर्वक दंड देती है, अगर ऐसा न होता तो न जाने यह वावाजीका नया दल क्या करता ? जयहो हमारे ब्रिटिश शासनकी जयहो ! !

मनीरामजी ! मूर्त्ति सवकुछ करसकती है, देखो मूर्त्तिमें इतनी ताकत है कि, नहीं मानने वालोंके अंदर मूर्त्तिको देखकर द्वेष उत्पन्न होता है और जो मानने वाले हैं उनके अंदर शुभ अध्यवसाय—अच्छे प्रणाम आते हैं ! मगर नहीं मानने वालोंके दिलमें इतना तो जरूरही आता है कि, यह अमुक महात्मा या अमुक शखसकी मूर्त्ति है ! जब वह मूर्त्ति असलियतकी याद दिलाती है तो उसका आदर सत्कार पूजा भक्ति करने वालेको अच्छा फल क्यों न होगा ? अवश्यही होगा ! वस वह झूठोंके सरदार है जो कहते हैं कि, मूर्त्तिका मानना पा-

खंड है ! सरासर खुद उस कामको करना और दूसरोंको देखकर पाखंडी वताना ! वाहरी वावाजीकी कचहरी ! ! !

ज्ञानचंद्र– (सुमतिचंद्रसे) साहब ! आपको मालूम नहीं ! वावा दयानंदजीकी वुद्धि वहुत दूर तक पहुंची हुई थी, वावाजीको जैसे " मुक्ति " जेलखानासी मालूम होती थी इसी प्रकार अपने आपको मूर्त्तिमें माननाभी वे मानिन्द कैदके समझते थे ! उन्होंने यह सोचा कि मेरा इतना वडा लंवा चौड़ा शरीर एक छोटेसे कागजके या पाषाण आदिके थोडेसे टुकडेमें लोग लाएंगे तो मुझे तंग होना पडेगा ! क्यों कि–" जो मूर्त्तिके पूजने वाले " हैं उन सवनेही अपने अपने अवतारी पुरुषोंके जो " वडे २ शरीरभी थे उन्हें एक छोटीसी मूर्त्तिमें कैद " कर लिया है और उनका अनादर करते हैं देखो " क्या कभी किसीने दरीया समुद्रको भी कूजे (कुलडी) " में वंद होते देखा है ? नहीं कदापि नहीं ! " तो वस इसी अपने विचारसे वावाजीने मूर्त्तिका मानना अस्वीकार किया हो तो कोई तअज्जुवकी वात नहीं ! और वावाजीका विचारभी ठीक है कि, उनके वड़े वड़े शरीरको एक जरासी वस्तुमें कैद करना क्या अच्छी वात है ?

सुमतिचंद्र–मनीरामजी ! देखो मेरे भाईने तुम्हारा पक्ष लेकर क्याही वढ़िया वात ढूंढ निकाली है ! वाह भाई वाह !

क्या कहना है ! धन्य बाबाजीकी बुद्धि ! खूब समझा ! भला भाई ! आप बतलाईए कि, बाबाजीके भक्तोंने बाबा दयानंदजी जो कि अनकरोबन दो गज लंबे थे, उनकी मूर्त्ति चार चार छे छे उंगल तकके कागजों पर बनवाई और छपवाई है तो क्या आपके हिसाबसे बाबा दयानंदजीको उन्होंने कैद कर लिया ? क्या खूब ! जरा आंख उघाडो ! (बीचमें)

ज्ञानचंद्र–मेरी तो आंख उघडी हुई है, जिनकी बंद हैं उनसे कहो ! मनीरामजी ! यह क्या तुम्हारी तरफदारीका यह फल मुझे ? छिः—

सुमतिचंद्र–भाई ! बात तुमने उठाई तो तुमको न कहुं तो किसको कहुं ! मनीरामजीको ! अच्छा मनीरामजी सुनो ! क्या हाथी, ऊंट, घोडा, शेर आदिकी लाखों मूर्त्तियां (खिलौने) पाषाण, धातु, मिट्टी आदिकी बनती है तो क्या असली हाथी ऊंट घोडा शेर आदि उसमें कैद हो जाते हैं ? नहीं तो क्या अवतारी पुरुष ईश्वर परमात्माही कैद हो जायगा ? और भी लो, भूगोलका नकशा बना है वह प्रायः सबही मदरसोंमें पढाया जाता है तो, क्या इतना वडा भूगोल उस छोटेसे कागजमें कैद होगया ? अगर फरजकरो मानलो कि, कैद होगया तो भूगोलमें रहने वाले जितने दयानन्दी रहते हैं वे आपके हिसाबसे कैदी सिद्ध हुए ! अगर

यह वात नहीं तो हमारा कहना ठीक है. अब लों अनादरके संबंधमें यह क्या कोई कहींका नियम है कि, जिसकी मूर्त्ति वनाई जावे उसका अनादर उस मूर्त्तिके वननेसे हो जाय ? इसमें कोई युक्ति या प्रमाण है ? बलकि दुनियांमे यह तो सामने नजर आता है जो पुरुष जैसाही अधिक नामी, प्रतापी प्रतिष्ठित पंडित विद्वान् या महात्मा होता है, उसके नामका वैसाही आदर करनेके लिए उसकी वैसी वैसी अधिक मूर्तियां वनवाई जाती हैं तस्वीरें उतारी जाती हैं और उन मूर्त्तियों द्वारा उन उन महात्माओंकी प्रतिष्टा, आदर, सत्कार, सेवा, भक्ति, पूजा संसारमें हो रही है ! हमने तो आजतक कहीं भी नहीं देखा कि किसीने बाबाकी मूर्ति पर फूलोंके वदले जूतियां चढाई हों ! चढ़ावे कौन ? जिसकी वड़े घर जानेकी मनशा हो ! हमारी ब्रिटिश सरकार न्याय वान है, अन्यायी नहीं ! जरा कोई किसीके धर्मस्थान या मूर्तिकी वे अदवी करतो दिखावे ! देखो फिर कैसा मजा मिलता है ! बाबाजीके भगत कहते हैं कि, जड़ मूर्ति कुछ नहीं कर सकती ! तो हम उन बाबाजीके भगतोंको पुकार कर कहते हैं कि, अगर इस वातका इमतिहान करना हो तो आइए मैदानमें और किसी मंदिर या गिरजाघर या मसजिद अथवा अन्य कोई भी धर्मस्थानकी वे अदवी कर देखिएगा, फिर कहना कि जड़ मूर्ति कुछ करती है या नहीं !

मनीरामजी ! मैं तुमको एक वीती हुई वात सुनाता हूं दिल्लीमें एक दिन मैं वाहर जा रहा था इतनेमें घंटाघरके पास एक हड्डी चमडोपासकजी मिल पडे, और विना सोचे विचारे मुझसे बोल पड़े कि, आप मूर्ति पूजाके वडे भक्त हैं लेकिन वताइएगा कि वह जड मूर्ति पथ्थर क्या कर सकता है ! मैंने उसको उसवक्त उसके प्रश्नके मुताविक ही उत्तर देना चाहा, क्यों कि–अगर वह नरमाईके साथ पूछता तो मैं भी वही रस्ता पकड़ता, लेकिन महाशयजी तो आतेही जड पथ्थर उठाने लगे ! खैर आज कल का जमानाही ऐसा है कि, जवतक ईट उठातेको पथ्थर न उठाया जावे तव तक वह चुपका नहीं होता ! उसवक्त दो सिपाही पुलिसके वहां पर खडे थे, वेभी टहलते २ पासमें आगए, पांच सात आदमी और भी खडे हो गए ! मैंने प्रश्न कर्त्ताजीसे कंपनी वागमें कमेटी घरके सामने जो महाराणी विक्टोरियाकी मूर्ति है उसकी तर्फ दिखाकर कहा कि, वेशक मैं तुम्हारे कहनेको अभी इसी वक्त मंजूर करनेको तैयार हूं, मगर जरा अपने पैरका जुता उतारकर इस मूर्त्तिपर रख दो, अगर इस मूर्तिने कुछ कर दिखलाया तो, मेरा मूर्त्तिका मानना ठीक है ही, इसमें संदेहही कुछ नहीं ! अगर इस मूर्तिने कुछ न किया तो तुम जीते, हजार दफे तुम जीते ! और मैं हारा ! मेरा यह कहना सुन महाशयजी तो ऊपर नीचे देखने लगे, उत्तर कहां ? पडगये विचारमें मगर उन दो सिपाहिओंमेंसे एकने कहा कि, वस साहव !

आपका कहना तो ठीक है ! यह देखिए हथकडियाँ और कोतवालीका रास्ता ! पैरसे जरा जूता उतारनेका इरादा तो करें ! फिर देखो तमाशा ! उस सिपाहीके वचन सुनतेही महाशयजी नीची गरदन डालकर चल पड़े ! मैंने कहा भाई ! क्यों, मूर्त्ति तो कुछभी नहीं कर सकती ! क्यों घवड़ाते हो ? वात तो सुनो ! मगर महाशयने एक न सुनी ! सुनना तो किनारे रहा, लेकिन पीछे फिरकर भी न देखा ! उक्त सिपाही, हालाँकि मोहोंमेदन थे, मुझसे बोले कि, वाह साहब ! आपने तो उत्तर क्या दिया विचारेकी अकल मारदी, अगर आदमी होगा तो आज पीछे " जड़ मूर्त्ति पथ्थर कुछ नहीं कर सकती " यह कलाम अपनी जवानसे न निकालेगा ! लोग भी उस वक्त उसकी हंसी करने लगे ! इस लिए भाई मनीरामजी ! ईश्वर परमात्माकी मूर्त्ति वननेसे ईश्वरका कैदमें आना, अथवा अनादर होना, दोनोंही बातें युक्ति प्रमाण शून्य झूठी हैं.

ईश्वर परत्मा अपना सर्वोपरि पूज्य तथा मान्य है इस लिए उसके नामकी मूर्त्तियां अधिक से अधिक वननी चाहिए और लोगोंको अधिकसे अधिक सेवा भक्ति पूजा करनी चाहिए ! रहा "क्या कहीं दरयाभी कूजेमें भरा जा सकता है ? " इसका उत्तर यही है कि, मूर्त्ति वनानेका जब हमारा यह उद्देशही नहीं है कि, मूर्त्ति वालेको मूर्त्तिमें ठुंस ठुंस कर भरें, तवतो यह दलील देनाही मूर्खता है !

अगर कोई आर्य समाजी अपनी मूर्त्तिमें अपने आपको या बाबा दयानन्दकी मूर्त्तिमें बाबा दयानन्दको ठुंस २ कर भर दिखावे तो हमभी माननेके लिए विचार करेंगे ! इस लिए मूर्त्तिका मानना अर्थात् देवपूजा परमात्माकी सेवा भक्ति बिलकुल ठीक है, मगर समाजियोंकी समझमें न आवे तो कोई तअज्जुबकी बात नहीं ! क्यों कि जैसे चरस, गांजा, चंडु, शराब पीने वालेको, या रंडीबाज, ज्वारी, चोर आदिको कितनाहीं उपदेश दो, लेकिन वे उस अपने कामसे बाज नहीं आते ! उनकी बुद्धिमें अविद्याके कारण दुराग्रहने पूरा पूरा दखल कर लिया है ! वैसेही बाबा दयानन्दजी महाराजके भक्तोंको चाहे कैसेही युक्ति प्रमाणसे समझाया जावे लेकिन इनके हृदयमें प्रभू परमात्माकी उपासनाके विरोधने पूरा २ दखल कर लिया है, अब सुधरने और समझने वाले नहीं हैं !

मनीराम- " स्वामीजी महाराज " " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३११ में लिखते हैं कि " मूर्त्तिपूजा अधर्म रूप है " मनुष्योंका ज्ञान जडकी पूजासे नहीं बढ़ सकता " किन्तु जो कुछ ज्ञान है वहभी नष्ट हो जाता है इस " लिए ज्ञानियोंकी सेवा संगसे ज्ञान बढता है पाषाण " आदिसे नहीं क्या पाषाण आदि मूर्त्ति पूजासे परमे- " श्वरको ध्यानमें ला सकता है ? नहीं मूर्त्ति पूजा सीढी " नहीं किन्तु एक बडी खाई है जिसमें गिरकर चकना

" चुर हो जाता है पुनः उस खाईसे निकल नहीं स-
" कता किन्तु उसीमें मर जाता है " इत्यादि सो क्या
बात है ?

सुमतिचंद्र–बस भाई ! बात क्या है ? बात यही है कि,
मूर्त्तिपूजा धर्मियोंको धर्मरूप है, और अधर्मियोंको अध-
र्म रूप है. बाबाजीको तो मूर्त्ति पूजा अधर्म रूप ही
मालूम होनी थी !

मनीराम–क्या बाबाजीको अधर्मी सिद्ध करना चाहते हो ?

सुमतिचंद्र–छिः ! हम अपने मूंहसे बाबाजी महाराजको अ-
धर्मी कहें ? कभी नहीं ! लेकिन ईश्वर परमात्मा या
अपने २ इष्टदेवकी सेवा भक्ति पूजा, ऐसा उत्तम कार्य
आत्माके कल्याणका हेतु उसको तो बाबाजीनें " मूर्त्ति
पूजा अधर्म रूप है " ऐसा लिख मारा तो धर्म रूप
बाबाजीने किसको समझा ? सो तुम आपही सोचलो !
बाबाजीका धर्म तो बहुत कुछ पुस्तकोंमें प्रसिद्ध हो
चुका है फिरभी तुमको थोडासा सुना देता हूं !

(१) हर किसी मतवालोंकी निन्दा करना !

(२) जिसमें अगलेका दिल दुखे ऐसे शब्द लिखने
जैसे कि–ईश्वर परमात्माकी मूर्त्ति मानने वालोंको
जडोपासक, पथ्थर पूजन करने वाले! पाखंडी!

(३) एक औरतको (११) ग्यारा खसम करना
कराना ।

(४) भाष्य कारोंको धूर्त्त निशाचर बताना !

(५) विधवाओंको नियोग करनेका उपदेश !

(६) ऐश्वर्यकी इच्छा वालोंको बैलके साथ संभोग करनेका उपदेश !

(७) गुरुसे चेलेकी गुदाकी शुद्धि करनेका उपदेश !

(८) वीर और वेदज्ञ पुत्रकी वांछा वालेको मांस सहित भात खानेका उपदेश !

(९) तेली, चमार, कोली, काछी, कुरमी आदि सबको एकाकार करनेका उपदेश !

(१०) केवल हम सच्चे और तमाम दुनियांके मत झूठे यह बाबाजीका सबसे बड़ा उपदेश ! धन्य बाबाजीका धर्म और धन्य बाबाजीका उपदेश ! अब तुमही विचार देखो कि, बाबाजीका उपदेश अधर्म या ईश्वर प्रभु परमात्माकी पूजा भक्तिका करना अधर्म ?

मनीराम–अच्छा इसका उत्तर दो कि " मनुष्योंका ज्ञान " जडकी पूजासे नहीं बढ़ सकता किन्तु जो कुछ ज्ञान है वह भी नष्ट हो जाता है "

सुमतिचंद्र–भाई ! आपके बाबा दयानन्दजीको जितना ज्ञान प्राप्त हुआ था वह सब जड़से ही प्राप्त हुआ था, क्योंकि–जितने शास्त्र हैं, वह सब कागज और स्याही जड़

पदार्थके अलावा कुछभी अन्य चेतन नजर नहीं आते ! यह वावाजी पर सब जड पदार्थकाही प्रताप था, लेकिन जिस वक्त वावाजीने जिस जडसे उत्तम ज्ञान प्राप्त किया था उसी जड पदार्थकी जड काटनी शुरू करदी, याने वेदादि शास्त्रोंके ही अर्थका अनर्थ करना शुरू कर दिया और हरएकके धर्म शास्त्रोंकी निन्दा शुरू करदी । उस जडने वावाजीको चेतन वनाया था, मगर फिर उस जड पदार्थजीने देखा कि मेरीही वजहसे यह ज्ञानी हुआ और मेरीही निन्दा करता है ऐसा जानकर उसने फिर वावाजीको जड बना दिया ! पहले वावाजी अपने वापके साथ मूर्त्ति पूजा (शिवजीकी) किया करते थे, वादमें निन्दा करने लगे ! और असलमें तो वावाजीका यह लिखना ही बेसमझीका है कि—" मनु-" ष्योंका ज्ञान जडकी पूजासे नहीं बढ़ता " पहले वावाजीको इस वातकी अच्छी तरहसे तहकीकात कर लेना चाहिये था कि, ईश्वर परब्रह्म परमात्मा अवतारी उत्तम पुरुषोंकी पूजा करने वाले जडकी पूजा करते हैं या चेतनकी ? यह विचारनेका मौका वावाजीको नहीं मिला, वरना ऐसा कभी न लिखते ! वावाजी तो मरगए ! मैं तुमको ही जतलाए देता हूं तुमने अपने भाई वंदोंसे कह देना कि, मूर्त्ति पूजक, जड पूजक, जडोपासक नहीं हैं यह मैं हजारों नहीं वलकि लाखों आदमियोंके सामने सिद्ध करनेको तैयार हूं कि मूर्त्तिपूजक जडोपासक नहीं

है ! नहीं है ! ! नहीं है ! ! ! लेकिन मूर्तिको अधिष्ठान मानते हैं । जैसे हर एक जीवात्माका अधिष्ठान हरएक शरीर है उस जीवात्माकी पूजा, सेवा, भक्ति अगर कोई करे तो उस शरीर रूप अधिष्ठानमें ही कर सकता है शरीरके सिवा उस जीवात्माका कहींभी पता नहीं लगता ! लगता तो क्या लगही नहीं सकता ! रहा शरीर सोतो चमड़ा, हड्डी, मांस, लहु, मल मूत्र आदि इन जड वस्तुओंकाही समुदाय याने पुंज है, क्या जीवात्मा की पूजा भक्ति करने वाला शरीरकी पूजा न करके केवल जीवात्माकी सेवा भक्ति पूजा कर सकता है ? अगर है किसीकी ताकत तो इस बातका ठीक ठीक जवाब देवे ! और अगर शरीरकी पूजा की तो पूर्वोक्त चमडा हड्डी मल मूत्रादि जडोंकी पूजा होगी ! और अगर इन जडोंकी पूजा करनेसे जीवात्माकी सेवा भक्ति पूजा हो जाती है तो मूर्त्तिकी पूजा करनेसे जिसकी वह मूर्त्ति है उस ईश्वर प्रभु वीतराग परमात्माकी पूजा क्यों न होगी ? अवश्य होगी जिसकी वह मूर्त्ति है !

मनीराम–शरीर तो चेतन है, शरीरमें जीवात्मा प्रत्यक्ष प्रसन्न होता है, इससे जान लेते हैं कि, उसकी सेवा पूजा हो गई, वैसे मूर्त्तिमें चेतन देवता शरीरमें जीवात्माके तुल्य होता तो शरीरके तुल्य मूर्त्ति भी चेतन हो जाती और देव (जिसकी वह मूर्त्ति है वह) पूजासे प्रसन्न होना जाहिर करदेता !

सुमतिचंद्र–वाहजी वाह मनीरामजी ! क्या कहना ? तुम्हारी बुद्धितो सात समुद्र पार करनेको एक स्टीमरका काम दे सकती है ! तुमने तो शरीरको चेतन बना दिया ! बस तो जिसवक्त कोई समाजी मर जावे उस वक्त उसके शरीरको उसके शरीर प्रमाण घीमें होम देना–जलादेना तुम्हारे हिसाबसे उस चेतनकाही जलाना–होमना साबित हुआ, और जब चेतनही जल भुन कर राख होगया तो मोक्षभी न रही ! सुख दुःख, नरक, स्वर्गभी उडगया, जब चेतनही नहीं तो यह चीजें किसके लिए ? अरे भाई ! शरीर चेतन नहीं, लेकिन अग्निके लोहमें प्रवेश करने पर लोहा अग्नि रूप दिखाई देता है मगर लोहा अग्नि नहीं होगया, इसी तरह चेतन जीवके प्रवेशसे शरीर चेतन जैसा दिखलाई देता है, लेकिन शरीर चेतन नहीं है. अगर तुम प्रत्यक्ष प्रसन्नता चाहते हो तो प्रत्यक्षवादी सिद्ध हुए ! तबतो अगर कोई महात्मा मौन धारण किए–ध्यानमें मग्न, समाधि लगाए हुए हैं, और किसीसे किसी प्रकारका आंख या हाथ आदिसे इसारा भी नहीं करते, ऐसे महात्मा पुरुषकी कोई सेवा पूजा भक्ति करे उसको शरीरके दुःख सुख हानि लाभसे कुछ हर्ष शोकभी नहीं, और नाहीं वह उस सेवा पूजा करने वालेसे प्रसन्नता जाहिर करता है तो, क्या उसकी सेवा पूजा करना निरर्थक है ? उसको कैसे जान लोगे कि, उसकी सेवा पूजा होगई ?

अब रहा यह कि चेतन, देवकी मूर्त्तिमें मौजुद होने परभी शरीरोंके तुल्य मूर्त्ति चेतन क्यों नहीं हो जाती ?? तो इसका उत्तर यह है कि, तुम्हारा निराकार चेतन ईश्वर भी तो सवी जड़ पदार्थमें मौजूद है ऐसा तुम मानते हो तो, फिर वे सभी जड पदार्थ चेतन शरीरके तुल्य क्यों नहीं हो जाते ?

मनीराम–इसका उत्तर क्या दूं ? आपही कहिए !

सुमतिचंद्र–अच्छा ! इसका उत्तर मेरेसे सुनना चाहते हो तो सुनो, मैं कहता हूं, जीव कर्मोंका संबंध प्रवाहसे अनादि बद्ध है और कर्मोंकी वजहसे यह जीव जन्म मरण शरीर धारण करता है ! लेकिन परब्रह्म ईश्वर परमात्मा वीतराग देव किसी मूर्त्ति आदिमें बद्ध नहीं है उसका ज्ञान ऐसी कोई जगह कोई वस्तु नहीं जिसमें विद्यमान न हो ? इसी वजहसे जीव तो शरीरको मान लेता है कि, यह शरीर रूप ही मैं हूं इसी कारण शरिरके हानि लाभमें जीव अपना हानि लाभ समझता है, मगर ईश्वर परब्रह्म परमात्मा अपनी मूर्त्तिके हानि लाभमें अपना हानि लाभ नहीं मानते ! अगर मूर्त्ति द्वारा शुद्ध भावसे उस परमात्माकी सेवा पूजा करता है तो पूर्वोपार्जित अशुभ कर्मोंका क्षय करके और शुभ कर्मोंका सुख भोगके, शुभा शुभ दोनो प्रकारके कर्मोंका नाश करके मुक्तिको प्राप्त होता

है ! और जो ईश्वर परमात्मा आदिकी मूर्त्तियोंकी निन्दा करता है वह अशुभ कर्मोंका बंधन कर दुर्गतिका भागी बनता है ! इसमें ईश्वरकी मूर्त्तिका अनादर करने वालेकाही संसार वढता है, न कि उसकी भाव भक्ति करने वालेका ! वस इस हिसावसे हम प्रभु परमात्माकी सेवा भक्ति करने वाले हैं, और जो हमको जडोपासक कहने वाले हैं वेही जडोपासक, मल, मूत्र, हड्डी, चमडेके उपासक सिद्ध होते हैं !

मनीराम–अच्छा पहले इन दो बातोंका जवाव दो कि, आप जो मूर्त्तिके सामने स्तुति प्रार्थना करते हो क्या वह मूर्त्ति सुनती है ? और उस मूर्त्तिके सामने फल, फूल, नैवेद्य, लड्डु पेडे, मिठाई चढाते हो, क्या वह खाती है ? अगर नहीं सुनती और नहीं खाती तो ऐसा करनेसे क्या फायदा ?

सुमतिचंद्र–वाहजी मनीरामजी तुमतो खूब पनडुब्बेका काम जानते हो !

मनीराम–पनडुब्बा क्या ?

सुमतिचंद्र–पनडुब्बा नहीं जानते ? पनडुब्बे उन्हें कहते हैं जो समुद्रमें डुवकियां लगा कर सीप, संख, कौडिएं आदि निकाल लाया करते हैं !

मनीराम–फिर मैं पनडुब्बा कैसे ?

सुमतिचंद्र—वाह ! तुमतो वडेही वहादुर वढिया पनडुब्बे ! वावाजी महाराजके " सत्यार्थप्रकाश " रूप समुद्रमेंसे ऐसी ऐसी कुधत्ते रूप संख, सीप, कौडियें ढूंढ २ कर लाते हो कि जिस पर हजार मूर्खोंकी अकल कुर्वान की जाय तोभी थोड़ी ! लो मनीरामजी ! अपनी कुधत्तोंका उत्तर सुनो ! लेकिन मैं पहले यह पूछता हुं कि, तुम्हारे वावाजीका आर्यसमाज जब कभी किसी स्थानमें इकट्टा होता है और उस वक्त वावाके निराकार ईश्वरकी स्तुति करता है और ऊंचे ऊंचे गला फाड़ फाड़ कर, हारमो-नियम, तवले, सरंगिया वजाकर, भजन गाता है तो वह निराकार उस समाजका गाना सुनता है ? अगर सुन-ता है तो वताओ इसमें क्या प्रमाण ? और वह किस कुरसीपर और किस जगह वैठ कर सुनता है ? क्यों कि सुनना कानोंका धर्म है और कान विना शरीरके होते नहीं, जब शरीर होगा तो उसके उठने वैठनेकी जगह तो जरूरही होनी चाहिए ! जैसे आज कलके वहुतसे शेठ साहुकार, रांडों और भांडोंका नाच तमाशा देखने वैठते हैं तो खूबही तकिया मसलंद लगा कर ऊंची जगह पर वैठते हैं और वह तो शेठ साहुकारोंकाभी वडा है । आपकी वह ताना री री को अवश्यही सुननेको वैठता होगा ! अच्छा अगर कहो कि, विना कानोंही सुनता है तो वस फिर यही प्रमाण हमारे लिए काफी है ! क्यों कि हम इस इरादेसे स्तुति तो करतेही नहीं हैं कि, यह मूर्त्ति सुने ! हम तो जिसकी वह मूर्त्ति है उस

ईश्वर परमात्मा वीतराग देवकी स्तुति प्रार्थना करते हैं और कोई स्थान ऐसा नहीं जो उसके ज्ञानमें न हो, वह त्रिकाल दर्शी सर्वज्ञ हमारे सर्व भावोंको जानता है ! और भी लो, शरीरमें भी तो जीवात्माही सुनता है, यह मानना ही पड़ेगा, शरीर तो सुनताही नहीं अगर शरीर सुनता हो तो मुरदेको भी सुनना चाहिए, सोतो आजतक किसी मुरदेने किसी समाजीकी वात सुनीही नहीं ! बस जिस प्रकार शरीरका सुनना सिद्ध नहीं होता तो मूर्त्तिकाभी नहीं होता ! वह मूर्त्ति तो शरीरकी माफक उस देवका अधिष्ठान मात्र है । और हम मूर्त्तिकी स्तुति नहीं करते, लेकिन मूर्त्ति वालेकी स्तुति करते हैं. और दूसरी वात जो नैवेद्य फल लड्डु पेड़ा, मूर्त्तिके आगे धरते हो सो क्या वह खाती है ? यह प्रश्न विलकुल वे समझीका है ! क्यों कि, क्या मूर्त्ति पूजक नहीं जानते कि, वह नहीं खाती ?

भला हम पूछते हैं कि, आप किसी राजा या रईस अथवा महात्माके पास खानेके लिए लेजाओ और आगे रखो—भेट करो, तब वह राजा आदि आपकी दी हुई भेटको खालेवे तवही तुम्हारी दी हुईभेट मंजूर होगी ? क्या तवही आप मानोंगे ? अगर आपकी भेट फलफूल आदि सामग्रीके ले जानेसे पहलेही वह उत्तम २ पदार्थोंसे तृप्त हो रहा है तो तुम्हारे रूवरू तो क्या ? मगर आपके वादमें याने पीछे भी न खायगा ! यह बात आप

खुद जानते हो कि, जब कभी कोई किसी के पनडुब्बे !
पास डाली याने भेट ले कर जाता है तो वह हा समुद्रमेंसे
राजा डालीके पदार्थोंको स्वयं नहीं खा लेता ! ...
वहां पर आप या आपके समाजी यह दलील क्यों कर
उठाते ? बलकि उस वक्त वह हाकिम-राजा आदि
सामने की हुई भेटको उसी वक्त खाने लग जावे तो
उसे तुच्छ भुक्खर, बत्तमीज और बें अकल कहने लग-
जाओगे ! सो भाई ! यह तो हमभी जानते हैं कि, मूर्त्ति
खाती नहीं और नाही हम इस इरादेसे रखते है कि यह
मूर्त्ति खा लेवे तबही हमारी भक्ति सफल हो ! लीजए जरा
सुनिए, मूर्त्ति पूजकों पर तो आप लोग झट ऐसी ऐसी
कुतर्कें तैयार कर देते हैं, मगर अपने बावा दया-
नंदजीकी बनाई हुई "आर्याभि विनय" भी आपने
कभी देखी ! जिसमें बावाजीने लिखा है कि-" हेईश्वर
" हमने आपके लिए सोम लतादिका रस तैयार किया
" है उसे तुम पियो " लो अब बताओ कि बावाजीके
कहे मुताबिक, निराकार सोमरसका प्याला लेकर मुंहसे
पीता है या नहीं ? यदि पीता है तो किसी दिन प्याला
भरके ईश्वरको पिलायाभी कि नहीं ? और अगर बावा-
जीका पूर्वोक्त यह लिखना आप मानते हो तो आपके
मतके स्थापक बावा दयानन्दजी ही झूठे ठहरते हैं तो बस
उनका कहना और आपका मानना सबही झूठा !

और यह जो बावाजीने लिखा है कि "क्या पाषाण
आदि मूर्त्ति पूजा से परमेश्वरको ध्यानमें ला सकता

है ? नहीं नहीं ! " इस पर हम कहते हैं कि, अगर स्याहीसे कागजों पर, मुसलमान आदिकोंके हाथसे छपे हुए वेदके बड़े बड़े पोथोंसे निराकार ईश्वरका ज्ञान ध्यानमें लाया जा सकता है तो हम साकार अवतारी पुरुषका ध्यान उस मूर्त्तिसे क्यों नहीं ला सकते ? जब कि जड़ पदार्थसे बावाजीको निराकार ईश्वरके ज्ञानका भान होगया तो क्या अवतारी महात्मा पुरुषोंकी मूर्त्तिसे उनका ज्ञान न होगा ? अवश्य होगा ! ! और फिर तुम्हारे बावाजीने यह लिखा है कि—" मूर्त्ति पूजा सीढ़ी " नहीं किन्तु एक बड़ी खाई है जिसमें गिर कर चकना " चूर हो जाता है पुनः उस खाईसे निकल नहीं सकता " किन्तु उसीमें मरजाता है " इसका उत्तर—

बस अगर माना जाय तो बाबाजीको मूर्त्तिनेही खाई में गिरा दिया, जिससे निकल न सके और उसीमें मर गए ! क्यों कि, बावाजीने मूर्त्तिकी निन्दा की तो उसका खोटा फल मिलनाही था और खाईमें गिरना और मरनाही था सो बेशक बावाजीका लिखना ठीकही है जिसके लिये खाईमें गिरना होगया उसके लिए वह खाई दिखाई देती है । और जो मूर्त्तिकी पूजा करते करते तरगया उसके लिए तो वह सीढ़ी ही है कि जिसके जरिएसे वह ऊपरकी मंजिल तक पहुंचा और मुक्ति को प्राप्त हुआ ! सचतो यह है कि, ऊपर मजल पर ले जाने वाला या खाईमें गेरने वाला तो भाव याने परि-

णाम-इरादाही है, वह मूर्त्तितो निमित्त मात्र है। न तो मूर्त्तिने किसीको धक्का दिया, न खाईमें गेरा और नाही उस मूर्त्तिने किसीका हाथ पकड़ कर ऊपर चढाया। यह जीवोंका भाव ही उस मूर्त्ति द्वारा खाईमें गिराने और ऊपर चढ़ाने वाला है। और खाईमें गिरा हुआ फिर कभी निकल नहीं सकता उसीमें मर जाता है यह ठीक है, ऐसा वैसा काम करनेसे खाईमें गिराहुआ आदमी निकलभी आवे तो कोई तअज्जुब नहीं, मगर ईश्वर परमात्माकी मूर्त्तिकी निन्दा करने वाला खाईमेंसे कभी निकल नहीं सकता ! और वह उसीमें सड़ सड़ कर मर जाता है ! भाई मनीरामजी ! जरा अपने अंदर विचार करो नाहक दुर्गतिका मारग साफ न करो ! ईश्वर परमात्मा राग और द्वेषसे मुक्त, प्रभुको तो पूजक पर न हर्ष है न निन्दक पर द्वेष ! मगर आप खोटे अध्यवसाय करके नाहकही क्यों कर्मोंका बंधन करते हो ? हो सके तो उसकी सेवा पूजा भक्ति करो वरना केवल निन्दा करके दुर्गतिके पात्र तो होही चुके हो !

ईश्वर भगवान् वीतराग देवको तो किसी चीजकीभी इच्छा नहीं ! किन्तु भव्य लोगोंको अपने २ पाप कर्म दूर करनेके लिए, जीवन मोक्ष (तीर्थंकर) अवस्थामें जिस तरहका ईश्वर भगवानकी देहका आकार था उसी आकार मूर्त्ति, प्रति बिंब स्थापन करके उस मूर्त्ति द्वारा परमेश्वर भगवंतको अपनी भावनासे प्रत्यक्ष करके परमे-

श्वरकी भक्ति करना चाहिए ! यह हम पहले कह आए हैं कि मूर्त्ति पाषाण आदिकी होती है और वह मूर्त्ति परमेश्वर नहीं है, लेकिन परमेश्वरको याद करनेका वह वसीला है। उससे हमको परमेश्वरका स्मरण होता है। मूर्त्ति परमेश्वरके स्वरूप स्मरणमें कारण है। जैसे ईसाई आदि मतोंमें बाईबल, कुरान, वेद, आगमादि शास्त्र, सब मत वाले अपने२ धर्म पुस्तकको अपने सिरपर या हाथपर उठा कर कसम खाते हैं। मुसलमान भाई कुरानका कितना अदब करते हैं ? दर असलमें ए सबही पुस्तक स्याही और कागजही है। यह मैं पहले कह आया हूं याद है न !

जैसे ईश्वरीय ज्ञानके स्मरण वास्ते अक्षर रूप मूर्त्ति अपने हाथसे बनाई जाती है और उसका विनय आदर सत्कार करते हैं, क़ागजोंके ऊपर अपने हाथसे लिखे हुए अक्षरोंसे ईश्वरके ज्ञानका बोध होता है, वैसेही मूर्त्ति द्वारा जीवन मोक्ष स्वरूप वाले ईश्वर भगवंतके स्वरूप का बोध होता है. जैसे विलायत आदिकोंके नकशे छोटे वड़े कागजों पर लिखे जाते हैं उन नकशों द्वारा विद्यार्थियोंको मास्तर–उस्ताद लोग उंगली रख कर कहते हैं कि, यह देखो हिन्दुस्तान है ! यह रूस है, यह रूम है, यह जापान है, यह इंगलेन्ड है. विद्यार्थी यह नहीं मानते कि, जहां हमारे उस्ताद–मास्तरने उंगली रखी है यही रूम रूसादि है ! जैसे नकशेसे असली रूम रूसादि देशोका ज्ञान होता है वैसेही मूर्त्ति द्वारा मूर्त्ति वाले

सत्य मोक्ष मार्गके बताने वाले, परमेश्वर, तीर्थंकर भगवान अवतारीकाही ज्ञान होता है. मूर्ति परमात्माके बोध होनेमें कारण है, इस लिए परमेश्वर अवतारी पुरुषोंकी मूर्त्ति अवश्य माननी चाहिए. विना मूर्त्ति माने किसीकाभी छुटका नहीं है, जो लोग मूर्त्तिको नहीं मानते उनको अपने मतके पुस्तकोंकाभी आदार विनय न करना चाहिए ! क्यों कि, पुस्तकोंका मानना भी मूर्तिमेंही शामिल है.

मनीराम—आपने वहुत ठीक कहा, मेरा संदेह दूर होगया, परन्तु " सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३१२ में लिखा है कि, " साकारमें मन कभी नहीं स्थिर हो सकता " यह कैसे ?

सुमतिचंद्र—वस यह ऐसेही है, बाबाजीने अपनी अनुभवी बात लिखी है, बाबाजीके इस लेखसे यह साफ प्रगट होता है कि—बाबाजीका मन वेदोंमें मरण पर्यंतभी स्थिर नहीं हुआ होगा ! क्यों कि वेद साकार हैं जब यूं हुआ तो बाबाजीका अगला लेख कि " उसको मन झट ग्रहण करके उसीके एक एक अवयवमे घूमता और दूसरेमें दोड जाता है " यह भी उलटा बाबाजीके गलेमें पिलच गया. याने बाबाजीका मन वेदके एक एक अवयवको ग्रहण करके पागलोंकी तरह भटकताही रहा होगा ! मालूम होता है कि इसी लिए बाबाजीका जन्मसे लेकर मरण पर्यंत एकसा मंतव्य नहीं रहा ! और जो बाबा-

जीका यह ख्याल है कि, निराकारहीमें मन स्थिर होता है साकारमें कभी नहीं, सोभी विचारशून्य होनेसे अग्राह्य है, यदि निराकारमें मन स्थिर होता है तो विना ही किसी वस्तुके आलंबनके आकाशमें सबका मन स्थिर हो जाना चाहिए ! क्यों कि आकाश निराकार है. नहीं मालूम बाबाजीको किस प्रकारका रोग था कि अपने अक्षरोंकी तरफ भी जरा ख्याल नहीं देते थे !

जब कि निराकारमें मन स्थिरही हो जाता है तो फिर सब जीवोंका मन स्थिर हो जाना चाहिए, क्यों नहीं होता ? यदि कहा जाय कि आलंबन रूप निमित्तोंके विना स्थिर नहीं हो सकता है तो बस उन आलंबनोंकाही विचार करना आवश्यक है कि वे आलंबन साकार है या निराकार ? यदि साकार आलंबन है तो फिर भगवानकी मूर्त्ति रूप आलंबन माननेमें क्या दुःख खड़ा होता है ? यदि निराकार आलंबन है तो वेदादि शास्त्रोंका आलंबन छोड केवल आकाशकाही आलंबन समाजी भाइयोंको लेना चाहिए ! क्यों कि वेदादि शास्त्र साकार है, और ईश्वरका ज्ञान निराकार है ! साकार आलंबनसे निराकार तक पहुंचना स्वामीजीको मंजूर नहीं है, अगर मंजूर है तो जैसे साकार वेदादि शास्त्रोंके आलंबनसे निराकार ईश्वरके ज्ञानका भान इस जीवको हो सकता है, तद्वत् भगवानकी मूर्त्ति रूप साकार आलंबनसे निराकार परमात्माका ध्यानादि होनेमें केवल पक्ष

पातके और क्या हरकत आसकती है ? आप विचार लीजिए !

मनीराम–अच्छा साहब ! आज मुझे आपसे बहुतसी बातों का पता लगा है, अब रजा लेताहूं ! कलको मैं आपके मकान परही आऊंगा और जो जो बातें रही हैं उनको आपके शास्त्रोंसे मुकाबला करके देखूंगा कि "स्वामीजी" ने जो कुछ लिखा है वह वैसाही है जैसा आप मानते हैं या कि उससे विरुद्ध ?

सुमतिचंद्र–तबतो बहुतही अच्छी बात है बस बस आप जरूर आवें मैं अच्छी तरहसे दिखलाऊंगा कि बावाजीने कैसा अपना मन माना गाना गाया है जरूर आइए ! औरभी अगर कोई आपके समाजी साहब बावाजीकी सचाइका फांका रखते हों तो उन्हें भी साथ लेते आइए ! बावाजीने जैन मतकी बाबत तो ऐसा उलटा गाना गाया है कि कुछभी मत पूछो ! एक दो ग्रंथोंके प्राकृत श्लोक लिखके ऐसा अर्थ किया है कि अपनी सारी पंडिताई दिखलाई है श्लोकमें वे अर्थही नहीं जो बावाजीने लिख डाले और उस पर अपनी मन मानी समीक्षा करडाली है, न जाने ऐसा करनेसे उनके सन्यासको कौनसी डिगरी प्राप्त हुई ? कुछ समझमें नहीं आता ! (तीनो जने उठकर चलने लगे)

मनीराम– (चलते चलते) मुझे एक बात और याद आ गई, इस बारेमें आपका क्या ख्याल है ?

सुमतिचंद्र–कहिए कहिए ! किस बारेमें ?

मनीराम–बाबाजी महाराजने सत्यार्थप्रकाश " के पृष्ठ ३१२ " में लिखा है कि " स्त्री पुरुषोंका मंदिरमें मेला होनेसे "व्यभिचार लडाई बखेडा और रागादि उत्पन्न होतेहैं " इत्यादि.

सुमतिचंद्र–भाई ! सचबात तो यह है कि " बाबाजी " को छोटे पनसेही व्यभिचारका शौक होगया था वह संस्कार यह लिखनेके समय तकभी नहीं गया ! उन्हें चारोंओर व्यभिचारही व्यभिचार नजर आता रहा इसी लिए एक एक जनीको ग्यारां ग्यारां खसम करनेका उपदेश दे डाला और ब्रह्मचर्य सतीपना–पतिव्रता धर्मका तो उच्छेदही करडाला ! देखिए ऋगादि भाष्य भूमिका पृष्ठ २२६ में स्वामीजी महाराज फरमाते हैं।

" (इमां०) ईश्वर मनुष्योंको आज्ञा देता है कि हे इंद्रपते ऐश्वर्ययुक्त ! तूं इस स्त्रीको वीर्य दान देके सुपुत्र और सौभाग्य युक्त कर. हे वीर्यप्रद ! (दशास्यां पुत्रानाधेहि) पुरुषके प्रति वेदकी यह आज्ञा है कि इस विवाहित वा नियोजित स्त्रीमें दश संतान पर्यंत उत्पन्न कर अधिक नहीं (पतिमेकादशं कृधि०) तथा हे स्त्री तूं नियोगमें ग्यारह पतितक कर अर्थात् एक तो उनमें प्रथम विवाहित और दशपर्यंत नियोगके पति कर " इत्यादि—

बाबाजीको मैं अपनी जबानसे कुछ नहीं कहता मैंने तो " स्वामी आलारामसागर सन्यासीजी " के बनाए हुए

" दयानन्द मिथ्यात्वप्रकाश " नामक ग्रंथके भाग ३७ के पृष्ट ११ पक्ति १८ से लगाकर जो पढ़ा है वह मैं आपको सुना देता हूं तुमको स्वयंही मालूम हो जायगा कि कौन क्या कहता है ?

सुनिए- " इसके भाष्यमें वृन्दावनको वेश्यावन " कहा है और लिखा है कि वहां वंदर, कछुआ, चौवे " तीन प्रकारके पोपजी रहते हैं. इन श्लोंकोंसेभी वावाजी " लाल बुझकड सावित होते हैं क्यों कि वृक्षोंके समु- " दायका नाम वृन्दावन है उसे रंडियोंका वन लिखना " पागलोंका तमासा है अगर रासलीला होनेसे वेश्या " वन कहो तो तीसरे समुल्लाससे आर्या लड़की लड- " कोंको नृत्यकारीका सिखाना कहा है उससे आर्या " समाजको रंडी समाज अथवा वेश्या समाज कहना " चाहिए क्यों कि विना अंगोंकी चपलताके नृत्यकारी " कभी नहीं हो सकती. ग्यारवें समुल्लासमें पोप शब्दको " रोमन भाषा कहा है रोमन भाषामें पोपका अर्थ " पिता लिखा है उसमें वंदर कछुआ, चौवे आर्यसमा- " जियोंके बाप सावित हो चुके क्यों कि दयानंदने " उनको पोप लिखा है यद्यपि ठगी करने वालेकोभी " पोप लिखा है और मूर्त्ति पूजक तीर्थ यात्रा करने " वालोंको ठग कहा है तथापि उससे दयानंद और " आर्यासमाजी ठगोंके पुत्र सावित होते हैं क्यों कि " उनके माता पिता मूर्त्ति पूजा और तीर्थोंको मानते हैं

" [दयानन्द छल कपट दर्पण] से सावित है कि घरमें
" दयानन्दका नाम शिवभजनथा वापका नाम हरभजन
" था जाति कापडी थी सोला (१६) वर्षकी उमर तक
" रंडी वनकर नाचता रहा था, एक चौवीस (२४)
" वर्षका राजपुत उसके साथ लंपट था इसी लिए
" वावाजीने वृन्दावनको वेश्यावन लिख मारा है धिक
" वावाजीकी पंडिताईको न जाने वावाजीकी मूर्खताई
" कौनसा जंगली जानवर है वारवें समुल्लाससे सावित
" हो चुका है कि जो मनुष्य जैसा आप होता है वह
" दूसरेकोभी अपने जैसाही समझता है इस रूलसे
" दयानन्द जैसा आप वेश्यावन था वैसाही वृन्दावनको
" समझता था "

मनीराम–वस कीजिए वस कीजिए ! आपने तो निवंधके निवंध याद कर रखे हैं.

सुमतिचंद्र–अगर याद न करें तो वावाजीकी फौज हमें चुटकियोंमेही उडा डाले ! भाई ! आपके प्रश्न पर अभि- मेरा अभिप्राय क्या है वह कहना तो वाकीही है सुनिए ! मंदिरोंमें कभी किसीके वुरे प्रणाम नहीं आते जो अंदर प्रवेश करता है वह तो परमात्मा परमेश्वरका ही नाम स्मरण करने और भगवत देवका दर्शन करनेमें ही उनका ध्यान तल्लीन होता है वहां तो क्या स्त्री क्या पुरुष सवकाही ध्यान भगवत देवकी प्रतिमाके दर्शनमेंही लगा हुआ होता है और सवके मुंहसे परमात्मा

परमेश्वरकी स्तुति और उसके गुणानुवादकीही ध्वनि निकलती है हां कदापि कोई बावाजीका चेला, समाजी किसी मंदिरमें खोटे इरादेके साथ चला गया हो और पाप बुद्धि आनेसे अगर किसी स्त्रीको देखकर काम उत्पन्न होगया हो, उसकी इस कुचेष्टाको देखकर, हो सकता है कि किसीने उसे मंदिरमेंसे निकाल दिया हो ! और उसीका तरस खाकर ही बावाजीने पूर्वोक्त लेख लिखा हो तो तअज्जुब नहीं ! वरना ऐसा कौन पापी है जो ईश्वर परामात्माके देवल-मंदिरोंमें खोटे परिणाम लावे ? ईसाई लोग चर्चमें स्त्री पुरुष सब एक साथ मिल कर प्रभू प्रार्थना करते हैं. क्या वो बावाजीके हिसाबसे वहां काम विकारके पैदा होनेके लिए इकठे होते हैं ? आर्यसमाजी स्त्री पुरुष मिलकर एक स्थानमें प्रभू प्रार्थनाके लिए क्या नहीं इकठे होते ? होते हैं तो क्या बावाजीका लेख उनके लिए नहीं लगता ? लेकिन क्या करें ! बावाजीका तो दूसरोंके छिद्र देखनेकाही स्वभाव था सो देखते रहे ! खूबी तो यह थी कि जब कोई छिद्र हाथ नहीं आता था तो अपनी मन कल्पना से ऐसी कोई बात घडकर लिख दिखाते कि बस आबेहूब निराकारकी लुगाई ही न हो !

मनीराम-(हंसकर) आप तो बडेही मौकेकी निकालते हो !

सुमतिचंद्र-तो क्या बे मौकेकी निकालू ! बे मौकेकी निकालना तो आपके बाबाजीकाही काम था, जो एक जगह

मुरलीधर- (हंसकर प्यारके साथ) नहीं मैं आपही गाड़ी वालेसे ठहरा लुंगा, तूं मुझे डेढ रुपया देदे.

माता- तो यूं कहकि, मुझे खरचनेको चाहिये. निकम्मा! (अंदर से डेढ़ रुपया निकाल कर दे दिया, कलाको बग्घीमें बिठला लहुआके कूचेमें सत्यबालाके सुसरालमें छोड़कर आप तो माधोदासकी बगीचीमें पहुंच गया. इधर कला अपनी बहनके पास पहुंची और रोती हुईको पुचकार कर बोली)

कला- बहन ! क्यूं ?

सत्यबाला- (पेटको दोनों हाथोंसे मरोडती हुई) बहन ! कुछ मत पूछ ! मेरेतो प्राण जाते हैं. हायरे ! क्या करूं ? (अपना मस्तक कलाकी गोदमें डाल दिया)

कला- (सिरपर हाथ फेरती हुई) बहन ! घबड़ा मत जरा दिलको करड़ा कर मैं आगई हुं (पासमें बैठी मालतीसे) अरी और सब घरकी बड़यर बानियां कहां गई हैं ?

मालती- कृष्णाष्टमीका हिंडोला देखने.

कला- बड़े अफसोसकी बात है ! कि यहतो इस तरह तड़फ रही है और उन्हें हिंडोले सूझते हैं.

मालती- अजी चुप करो, तुम देखती जाओ, जरा घरके आदमियोंको खबर पड़ेगी तो सबकोही कृष्ण हिंडोला देखनेका स्वाद आजावेगा !

कला- (हंसकर) तो हलदी और चुना तयार कर रख !

पढ़ना शुरू करादिया–" "मित्रविलास" २६ दिसंबर पौष म० १३

–स्वामी आलारामजीकी यात्रा–

" ९ दिसंबरको प्रयागसे चलकर मैं कटनी उतरा जहां
" पंडित रघुनाथ पांडेजीने व्याख्यानका प्रबंध किया
" आर्य समाजीभी तसरीफ लाए थे मैंने लैक्चरमें कहा
" पुराने सत्यार्थप्रकाशमें दयानंदने गो बैलका मांस
" खाना लिखा है एक आर्य समाजी सरकारी मुला
" जिम बोला नहीं लिखा मैंने सत्यार्थप्रकाशमें दिखा
" दिया फिर मैंने कहा दयानंदने दूसरे नये सत्यार्थप्रकाश
" मनुष्यका मांस खाना लिखा है वही दयानंदी बोला कि
" नहीं लिखा परंतु मैंने फिर सत्यार्थप्रकाशमें दिखा
" दिया फिर मैंने कहा दयानंदने शिखा काट देना लिखा
" है वही दयानंदी बोला नहीं लिखा परंतु मैंने फिर सत्यार्थ
" प्रकाशमें दिखा दिया मैंने कहा कि दयानंदने दूसरे
" श्लोकको नए सत्यार्थप्रकाश में सामवेदका वचन कहा है
" दयानंदी बोला नहीं कहा मैंने सत्यार्थप्रकाशको
" दिखा दिया इतना वांचते बांचते सामनेसे एक और
पानीका घडा सिरपर उठाए आरही थी उसकाभी ध्या
और तरफ था आप उसके साथ अथड़ा पड़े उस
माथेका घडा गिरकर फूट गया वह खिजकर बोल
निगोडा रस्ते चलतेभी अखबार बांचता चलता है
जाने किस गुरुने पढ़ाया है ? मनीरामजी अखबार

खीसेमें डाल शरमिन्दे होकर घर पहुंचे तो घरका दर-वाजा बंद पाया बाहरसे आवाज देने लगे " दरवाजा खोल ! " अंदरसे आवाज आई कि " कौन है ? " मनीराम बोले " अरी मैं हूं " एक औरत दरवाजा खोल कर बोली " क्या है ? " मनीराम उस औरतको देखकर अवाक हो गए नीची गरदन डालकर बोले " बाईजी ! माफ करना मैंतो अपना घर समझा था " इतना कह बराबरमें अपना घर था जल्दीसे घुसगए और जो बात बनी थी अपनी स्त्रीको कहसुनाई.

इधर सुमतिचंद्र और ज्ञानचंद्र भी सीधे " विश्वंभर" के पास पहुंचे और मनीरामके साथ जो बात हुई थी वह कह सुनाई. " विश्वंभरनाथ " ने कहा कि बहुत अच्छा कल वो यहां आवेंगे तो रंग जमेगा ! मैंनेभी खूबही मसाला इकठ्ठा कर रखा है आज मेरे पास दश पुस्तकें ऐसी आई है जिसमें समाजीयोंने बेहद वैश्नव आदिकोंकी निन्दाकी है इस लिए पंडित नीति रमण व्याख्यान वाचस्पतिकोभी बुला लेना चाहिए !

सुमतिचंद्र–जरूर ! जरूर ! !

ज्ञानचंद्र–मैं स्वयं जाकर उन्हे ले आऊंगा ! यह आप क्या देखते हैं ?

विश्वंभर–मैं अपने बापकी डायरी देखता हूं । इसमें लिखा है कि " स्वामीजी " का दीवालीके दिन १९४० में

देहांत होगया । मगर मुझे आश्चर्य पैदा होता है कि, मेरी मासी (कला) को भादोंमें ही इस खबरका स्वप्न कहांसे आगया ?

ज्ञानचन्द्र-अच्छा, ऐसे ही होगा ! अब मैं जाता हूं ।

विश्वंभर-अच्छा बहुत अच्छा !

सुमतिचंद्र और ज्ञानचंद्र-अच्छा रजा लेते हैं जय जिनें

विश्वंभरनाथ-जय जिनेन्द्र ! साहब जय जिनेन्द्र !

मिलनेका पता.

श्री आत्मानन्द जैन पुस्तकप्रचार मंडल.

रोशन महल्ला.

आगरा.